

॥ श्रीः ॥

❦ हरिदास-संस्कृत-ग्रन्थमाला ❦

१५५

३६७ शब्दरूपयुता-सोत्तरा—

कौमुदी-रूपलता

प० श्रीरामचन्द्रज्ञा व्याकरणाचार्येण सकलशब्दसाधनसमन्वित-
यावत्पाङ्क्तिपरीक्षणाद्युपयोगिव्याख्यानसंवल्लिता विरचिता ।

दरभंगामण्डलान्तर्गत 'सुटवार' ग्रामवासिना
पण्डित श्रीशोभाकान्तभा व्याकरणाचार्येण
संशोधिता ।

प्रकाशकः—

जयकृष्णदास-हरिदास गुप्तः—
चौखम्बा-संस्कृत-सीरिज-आफिस,
बनारस सिटी ।

वि० संवत् १९९९]

[सन् १९४२ ई०

[अस्य ग्रन्थस्य सर्वेऽधिकाराः प्रकाशकेन स्वायत्तीकृताः]

ग्रन्थोत्थान-निदानम् ।

हमारे पूर्वाचार्योंने सदा-सर्वदासे संस्कृत संसारका सम्राट् व्याकरणको ही मानते आरहे हैं, यतः व्याकरण के ज्ञान विना कोई भी विद्वान् संस्कृत भाषाको भली-भांति बोल-समझ नहीं सकते । व्याकरणका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ 'सिद्धान्त-कौमुदी' है । आज-कल चार वर्ष पर्यन्त निरन्तर इसका अध्ययन करने पर भी अधिक विद्यार्थी इसमें योग्य नहीं होते । इसका निदान क्या है, इसकी तरफ जब कभी आप ध्यान देंगे तो निःशङ्कोच होकर कहना होगा कि सिद्धान्तकौमुदी के शब्दों को अपूर्ण रूपसे ही विद्यार्थी मनन किया करते हैं । प्रायः ऐसे कोई भी शब्द नहीं हैं जिनको इस ग्रन्थ में विद्यार्थी नहीं पढ़े हों लेकिन सिद्धान्त-कौमुदी में सभी शब्दों का संपूर्ण रूप, अर्थ और तत्तत् स्थलपर सर्वत्र प्रक्रियाकार्य का निर्देश नहीं है, अतः सरल मति वाले विद्यार्थी अध्यापकों से केवल सुनकर ही स्मरण नहीं रख सकते । इन्ही कठिनताओं को दूर करने के लिए बहुत सी प्राचीन टीका टिप्पणी व कोश आदि को देखकर प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना की गई है । इसमें सिद्धान्तकौमुदी के गौण-मुख्य सभी शब्दों के तथा तत्समानाकार अन्य प्रसिद्ध शब्दों के भी प्रक्रियांश निर्देश पुरःसर ससूत्रसाधनप्रकार सहित संपूर्ण रूप और अर्थ दिये गये हैं तथा परीक्षोपयोगी सभी पंक्तियों की सरल व्याख्या भी कर दी गई है, जिनसे विद्यार्थी सुगमता पूर्वक ग्रन्थाशय समझकर परीक्षा की लेखन शैली को भी जान जायेंगे । मुझे विश्वास है कि इस एक ही 'सोत्तरा कौमुदीरूपलता' से प्रथमा, मध्यमा तथा अंग्रेजी स्कूलों के मास्टर्स और छात्रों को भी समान रूपसे लाभ होगा । संस्कृत साहित्यमें इस ढंग का यह ग्रन्थ प्रथम बार ही प्रकाशित हुआ है ।

इस ग्रन्थ की रचनामें काशीके प्रकाण्ड विद्वान् पूज्य प० श्रीगोपाल-
शास्त्री नेने अध्यापक ग० सं० कालिज बनारस तथा पूज्यचरण प० श्रीअनि-
रुद्ध झा प्रधानाध्यापक ब्रह्मानाथ सं० पाठशाला सुलतानगंज (भागलपुर) की
भी विशेष सहानुभूति मिली है, तदर्थ उन विद्वानोंका मैं चिरकृतज्ञ हूँ ।

अब आपको इस “चौखम्बा संस्कृत पुस्तकालय” का भी कुछ परिचय देना
आवश्यक समझता हूँ । यद्यपि ५० वर्षों से यह पुस्तकालय आप लोगों से प्रति-
ष्ठित होकर विश्वके कोने २ में परिचित हो चुका है, फिर भी इसकी कुछ नवीन
न्यवस्था आप लोगों को सूचित करने के लिए मुझे बाध्य कर रही है । इस पुस्तका-
लयसे पहले प्राचीन सद् ग्रन्थों का ही जीर्णोद्धार होता था लेकिन कुछ वर्षों से
संस्कृत विद्यार्थियों की जन्मतः सिद्ध आर्थिक कठिनता को देखकर सभी प्रान्तोंके
परीक्षापाठ्य निर्धारित ग्रन्थ तथा तदुपयोगी नवीन ग्रन्थों का भी सर्वोत्तम परी-
क्षोपयोगी टीका टिप्पणी व परिशिष्ट आदिसे समलंकित सस्ता संस्करण प्रका-
शित हो रहा है और कमीशन भी विद्यार्थियों को अधिकाधिक दिया जाता है ।
मेरा हार्दिक निवेदन है कि आप लोगों को प्रथमा, मध्यमा, शास्त्री, आचार्य आदि
परीक्षाओं के जिन २ ग्रन्थों की आवश्यकता हो इसी पुस्तकालय में आर्डर देकर
पुस्तकालयाध्यक्षके उच्च सिद्धान्तों का समर्थन करते रहें ।

अन्तमें इस ग्रन्थके सर्वाधिकारी बाबू श्रीजयकृष्णदास हरिदागुप्त जी को
हार्दिक धन्यवाद देकर आप लोगों से प्रार्थना है कि यन्त्र दोष से वा प्रमादतः जो
कुछ त्रुटियां रह गई हों उसे सुधार कर त्रुटुके लिये मुझे क्षमा करें ।

निर्जला एकादशी
शुद्धज्येष्ठ शुक्लपक्ष
वि० सं० १९९९

विद्वानों का वशंवद—
श्रीरामचन्द्र झा
तरौनी (दरभंगा)

शब्दानामकाराद्यनुक्रमणिका ।

| शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः |
|---------------|-------------|------------|-------------|--------------------|-------------|--------------------|-------------|
| अक्का | ४५ | अन्दू | ६० | आपत् | १८६ | एक | ३, ४२ |
| अक्षि | ८९ | अन्य | ३, ४३, ७३ | आशिष् | १८५ | एकतम | ३ |
| अग्नि | १२ | अन्यतर | , " " | आस्य | ८० | एकतर | ३, ४२, ७५ |
| अग्रणी | २१ | अन्यतम् | २, ४७ | इतर | ३, ४२, ७४ | एकान्त | ७० |
| अग्निध्मा | १० | अपर | ५, ४२, ७६ | इदम् ११४, १८१, १८९ | | एकादशन् | १३२ |
| अग्निमथ् | १५५ | अप् | १८३ | इदकम् | ११५ | एतद् १४६, १८२, १९३ | |
| अजर | ७७ | अमुमुयञ्च् | १५६ | इयत् | १६४ | एतावत् | १६४ |
| अट्टालिका | ४१ | अम्बा | ४४ | ईदृश् | १६९ | ओदन | ७० |
| अतिदधि | ८७ | अम्बिका | ४१ | उत्तर | ५, ४२, ७७ | औडुलोमि | १५ |
| अतिलक्ष्मी | १७ | अम्बु | ९१ | उत्तरपूर्वा | ४० | ककुभ् | १८७ |
| अतिसखि | १२ | अयुत | १३४ | उदक | ७९ | कटप् | २८ |
| अतिस्त्री | ५५, ५७ | अर्थ | ५, ७७ | उदञ्च् | १५८ | कतम | ३, ४२, ७२ |
| अतिचमू | २७ | अर्थमन | १२१ | उद्यान | ७० | कतर | " " " |
| अतियुष्मद् | १५० | अर्वन् | १२४ | उन्नी | २० | कति | १४ |
| अत्यस्मद् | १५३ | अल्प | ५, ७७ | उपनिषद् | १८४ | कतिपय | ५, ७७ |
| अदमुयञ्च् | १५७ | अल्ला | ४५ | उपानह | १७८ | कन्दुक | ७० |
| अदस् १७७, १८५ | | अवर | ४, ४२, ७७ | उभ | ३, ४२, ७१ | कमल् | ११२ |
| " १९९ | | अशीति | १३३ | उभय | " " " | करिन् | १२१ |
| अदद्रघञ्च् | १५८ | अश्रु | ९२ | उशनस् | १७५ | करिष्यत् | १६५ |
| अधर | ५, ४२, ७७ | अष्टन् | १३१ | उष्णिह् | १७९ | कर्कन्धू | ६० |
| अध्ययन | ७० | अष्टादशन् | १३२ | ऊनविशति | १३२ | कर्क | ९९ |
| अध्यापिका | ४१ | असृज् | १९१ | ऊजं | १४४, १९२ | कर्त्रा | ५३ |
| अनडुह् | १०८ | अस्मद् | १४८ | ऊ | ३३ | कर्मन् | १९२ |
| अनादि | ८५ | अस्थि | ८८ | ऊच् | १८३ | कवि | १२ |
| अनुमुक्षिन् | १२७ | अहन् | १९० | ऊरियन् | १४४ | कामिनी | ५३ |
| अनेदस् | १७५ | आशा | ४१ | ऊमुक्षिन् | १२६ | काराभू | २८ |
| अन्तर | ५, ४२, ७७ | आमन् | ११८ | ल | ३५ | कार्य | ७० |

| शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दा | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः |
|----------|---------------|-------------|---------------|------------|---------------|----------|-------------|
| किम् | ११३, १८०, १८९ | गोपा | १०, ४८ | जुर् | १८० | दधृप् | १७१ |
| कियत् | १६४ | गोपाल | २ | शानृ | ९८ | दन्त | ८ |
| कीर्ति | ४८ | गोमत् | १६३ | शान | ६८ | दरिद्रत् | १६७ |
| कीदृशू | १६९ | गोविन्द | २ | तडित् | १८६ | दशनन् | १३२ |
| कुमारी | १८, ५३ | गौरी | ५२ | ततम | ३, ४२, ७३ | दामन् | १८७, १९१ |
| कुर्वत् | १६५ | ग्रामणी | २०, ५८ | ततर | " " " | दामलिह् | १०३ |
| कृष्य | २ | ग्लौ | ४० | तद् | १४५, १८२, १९३ | दिव् | १७९ |
| कृषि | ४८ | चकाशत् | १६७ | तनु | ५९ | दिश् | १८३ |
| कृ | ३३, ३४ | चीकीर्ष | १७२ | तादृशू | १६८ | दीध्यत् | १६७, १९७ |
| केदारल्ल | २८ | चक्तिन् | १२१ | तावत् | १६४ | दुर्गा | ४१ |
| कोटि | १३४ | चतस्र | ४९ | तिर्यन्च् | १५९, १९६ | दुग्ध | ७० |
| क्षति | ४८ | चतुष्टय | ५ | तुरासाह् | ११० | दुर्मति | ८६ |
| क्षुष् | १८६ | चतुर | १११, १८०, १८९ | तृतीया | ४४ | दुर्मनस् | १७७ |
| क्षेत्र | ७० | चतुर्दशन् | १३२ | तृ | ३४, ३५ | दुहिता | ६५ |
| क्त्वा | १० | चत्वारिंशत् | १३३ | तीय | ७० | दुह् | १०४ |
| कोष्ठ | २६, ५९ | चन्द्रमस् | १७७ | त्यद् | १४५, १८२, १९३ | दृग्भू | २८ |
| क्रुञ्च् | १६१ | चम्बू | ६० | त्रय | ५ | दृग्भू | ३० |
| खट्वा | ४१ | चरम | ५, ७७ | त्रयोदशन् | १३२ | दृग्भू | २९ |
| खञ्ज् | १३९ | चर्मन् | १९० | त्रि | १४, ४९ | दृश् | १८३ |
| खलपू | २७, ६२ | चल, चलुष् | ७०, १९८ | त्रितय | ५ | दृषद् | १८६ |
| खर | ५९ | चित्र | ७० | त्रिशत् | १३२ | देव | २ |
| गणपति | १४ | छात्रा | ४१ | त्र्यह | १० | देवराज् | १४३ |
| गति | ४८ | जक्षत् | १६६ | त्व | ३, ४२ | देवेज् | १४१ |
| गन्तृ | ९९ | जनु | ९३ | त्वच् | १८३ | दोष् | १७३ |
| गमिष्यत् | १६५ | जनौ | ४० | त्वत् | ३ | द्वयह | १० |
| गम्लृ | ३६, ९९ | जम्बू | ६० | त्वाद्दृशू | १६९ | द्यौ | ६७ |
| गवाच् | १९३ | जरा | ४५ | त्विष् | १८४ | दुह् | १०५ |
| गिर् | १७९ | जल | ७० | दक्षिण | ५, ४२ | द्वय | ५, ७७ |
| गुणिन् | १२१ | जाग्रत् | १६६ | दण्डिन् | १९१ | द्रादशन् | १३२ |
| गुप् | १६८ | जानत् | १६५ | ददत् | १६५, १९७ | द्वारपा | १० |
| गो | ३८ | जामात् | ३२ | दधि | ८७ | द्वि | १५, ५२ |

| शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः |
|-------------|-------------|------------|-------------|---------------|----------------|-----------|-------------|
| द्वितय | ५, ७७ | पञ्चन् | १३० | पुम्स् | १७५ | बुद्धि | ४८ |
| द्वितीय | ५, ४३ | पञ्चतय | ५ | पुर | १८० | बुद्धिमत् | १६४ |
| धन, धनुष् | ६९, १९८ | पञ्चादशन् | १३२ | पुस्तक | ७० | बुद्धिमती | ५३ |
| धनपा | १० | पञ्चाशत् | १३३ | पुष्प | ॥ | ब्रह्मन् | ११८, १८९ |
| धातृ | ३०, ९७ | पति | १३ | पूर्व | ४, ४२, ७६ | ब्रुवत् | १६५ |
| धामन् | १९१ | पत्न | ७० | पूषन् | १२२ | भगवत् | १६४ |
| धीमत् | १६३ | पथिन् | १२५ | पृतना | ४७ | भवत् | १६५ |
| धुर् | १८० | पथ्य | ७० | पृथ्वीपति | १४ | भवादृश | १६९ |
| धेनु | ५९ | पद्य | ॥ | प्रजा | ४१ | भस्मन् | १९१ |
| धेनुपा | १०, ४८ | पपी, पयस् | १६, २९९ | प्रतिदिवन् | ११७ | भानु | २५ |
| नति | ४८ | पयोमुच् | १६१ | प्रत्यञ्च् | १५५, १६० | भिषज् | १४४ |
| नदी | ५३ | पर | ५, ४२, ७७ | प्रथम | ५, ७७ | भूपति | १३ |
| नदान्द्र | ६५ | परिन्नाय | ७० | प्रद्यो | १०१ | भूभुज् | १४४ |
| नयन | ७० | परमतद् | १४६ | प्रधी | १८, १९, ५८, ९० | भृतिभुज् | ॥ |
| नर्मन् | १९० | परिमृज् | १४२ | प्ररै | १०१ | भृत्ज् | १४३ |
| नवति | १३३ | परिन्नाज् | ॥ | प्रशाम् | ११२ | भोजन | ७० |
| नवन् | १३१ | परिषद् | १८६ | प्रसन्नता | ४१ | अमण | ॥ |
| नश् | १७० | पर्वन् | १९० | प्राञ्च् | १५५, १६० | आतृ | ३२ |
| नामन् | १९० | पांसु | २५ | प्रियक्रोष्टु | ९५ | भ्रू | ६० |
| नारी | ५३ | पाठशाला | ४१ | प्रियचतुर् | १११ | भ्रूणहन् | १२२ |
| नासिका | ४६ | पाणिधमा | १० | प्रियपष्ठचन् | १२८ | मघवन् | ॥ |
| नीति | ४८ | पाद | ७ | प्रियन्नि | १४, ५०, ५१ | मति | ४८ |
| नियुत् | १३४ | पामन् | १८७ | प्रियाष्टन् | १२९ | मथिन् | १२५ |
| निर्जर | ६ | पारितोषिक | ७० | फल | ६९ | मधु | ९१ |
| निशा | ४८ | पिण्डग्रस् | १७७ | वलिन् | १२१ | मर्मन् | १९० |
| नी | २१ | पिण्डग्लस् | ॥ | वलिभुज् | १४४ | मर्मस्पृश | १६९ |
| नृ | ३२ | पितृ | ३१ | वदुर्ज् | १९३ | महत् | १६२ |
| नेम | ४, ७५ | पिपठिष् | १७२, १९८ | वदुथ्रेयसी | १७ | मांस | ८, ८१ |
| नेवृ, नेत्र | ९९, ७० | पीडु | ९४ | वद्वज्जवन् | १८७ | मातृ | ६६ |
| नी | ६७ | पुत्र्यौ | ५३ | बाला | ४१ | मादृश | १६९ |
| पचत् | १९७ | पुनर्भू | ६२ | बुध् | १३७ | माला | ४१ |

| पृष्ठाङ्कः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः |
|------------|-------------------|-------------|----------|-------------|-----------------|-------------|----------|-------------|
| ५८ | मुकुन्द | २ | रवि | १२ | वाणी | ५२ | व्योमन् | १५१ |
| १६४ | मुख | ७० | राज् | १४० | वातप्रभो | १६ | शंखध्मा | १० |
| ५३ | मुखध्मा | १० | राजन् | ११६ | वारि | ८४ | शक्रव | १५६ |
| १८९ | मुष्टि | ४८ | राम | १ | वार् | १८९ | शक्रव | ३६ |
| १६५ | मुह् | १०६ | रुच् | १८३ | वायु | २५ | शत | १३४ |
| १६४ | मैत्री | ५३ | रुचि | ४९ | विद्या | ४१ | शम्भु | २५ |
| १६५ | यकृत् | १९६ | रुज् | १८२ | विद्वस् | १७४ | शरद् | १८६ |
| १६९ | यज्वन् | ११७ | रुष् | १८४ | विपत्ति | ४८ | शर्करा | ४१ |
| १९१ | यतम | ३, ४२, ७३ | रेणु | ५९ | विपद् | १८६ | शर्मन् | १९० |
| २५ | यतर | " " " | रै | ३९, ६७ | विप्रुष् | १८४ | शख | ७० |
| १४४ | यद् १४६, १८२, १९३ | | लक्ष् | १३४ | विभ्राज् | १४१ | शाङ्गिन् | ११९ |
| १३ | ययी | १६ | लता | ४१ | विमलदिव् | १८८ | शाश्वत् | १६७ |
| १४४ | यवक्री | २२ | लक्ष्मन् | १९१ | विराज् | १४३ | शुचि | ८६ |
| " | यवनिका | ४१ | लक्ष्मी | ५४ | विविक्ष् | १७४ | शुद्धधी | २२ |
| १४३ | यवागू | ६० | लघु | ५९, ९३ | धिशेषता | ४१ | शुष्की | २५ |
| ७० | यशस्विन् | १२० | लिह् | १०२ | विश् | १६९ | श्ना | १० |
| " | याचना | ४१ | लू | २८ | विश्व ३, ४२, ७१ | | श्री | ५७ |
| ३२ | यावृ | ६५ | लोकपा | ४८ | विश्वपा १०, ८४ | | श्रीपति | १४ |
| ६० | यादृश् | १६९ | वक्वृ | ९९ | विश्वराज् | १४३ | श्रीपा | ८३ |
| १११ | यावत् | १६४ | वचन | ७० | विश्ववाह् | १०७ | श्रीमत् | १६४ |
| " | युज् | १३८ | वधू | ६० | विश्वसृज् | १४१ | श्रुति | ४८ |
| ४८ | युध् | १८६ | वन | ६९ | विष | ७० | श्रेयसी | ५३ |
| ११५ | युवन् | १२४ | वनपा | ४८ | त्विष् | १८४ | श्वन् | १२३ |
| ९१ | युष्मद् | १४७ | वर्तमन् | १९० | विष्णु | २५ | श्वश्रू | ६० |
| १९० | युष्मादृश् | १६९ | वर्मन् | " | वीरुष् | १८६ | षट् | १३० |
| १६९ | यूष | ९ | वर्षाभू | २८, ६३ | वृत्ति | ४८ | पट्टि | १६३ |
| १६२ | योषित् | १८६ | वसु | ९२ | वृत्रहन् | ११९ | षिणह् | १०७ |
| ५, ८१ | रञ्जु | ५९ | वस्तु | " | वेषस् | १७६ | ष्णुह् | १०६ |
| ६६ | रत्नमुष् | १७१ | वस्त्र | ७० | वेव्यत् | १६८ | संविद् | १८६ |
| १६९ | रमणी | ५३ | वाग्मिन् | १९१ | व्यह | १० | संसद् | १८६ |
| ४१ | रमा | ४० | वाच् | १८२ | व्याकरण | ७० | संस्कृत | ७० |

| शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः | शब्दाः | पृष्ठाङ्काः |
|-----------|-------------|----------|-------------|----------|-------------|-----------|-------------|
| सक्थि | ८८ | सम्यञ्च् | १५८ | सुपुम्स् | १९९ | स्त्री | ५४ |
| सखि | १२ | सरित् | १८६ | सुभ्रू | ६१ | स्रज् | १८१ |
| सखी | २१, ५३ | सर्व | २, ४१, ७० | सुमनस् | १७७ | स्व | ५, ४२, ७७ |
| सजुष् | १८४ | सर्पिष् | ११८ | सुयुज् | १३९ | स्वनडुह् | १८८ |
| सरथ | ७० | सलिल् | ११३ | सुरभि | ८६ | स्वभू | २८ |
| सद्मन् | १९१ | सानु | २५, ९४ | सुलू | २८, ९६ | स्वयम्भू | २८, ६३ |
| सभ्रथञ्च् | १५९ | सायाह | १० | सुवस् | १७७ | स्वप् | १९८ |
| सन्तति | ४८ | सिम | ३, ४२ | सुवृश्च् | १६२ | स्वस् | ६४ |
| सप्तति | १३३ | सीता | ४१ | सुश्री | २१ | स्नास्थ्य | ७० |
| सप्तदशन् | १३२ | सोमन् | १८६ | सुसखि | १२ | हनु | ५९ |
| सप्तन् | १३१ | सुख | ७० | सुस्मृते | ९९ | हरि | ११ |
| सभा | ४१ | सुगण् | ११५ | से | ३७ | हर्त् | ९९ |
| सम | ३, ४२, ७६ | सुदिव् | ११० | सेनानी | २१ | हवन | ७० |
| समिति | ४८ | सुद्यो | ३८ | सेवा | ४१ | हविष् | १९८ |
| समिष् | १८६ | सुधी | २३, ८९ | स्तुति | ४८ | हाहा | ११ |
| सम्पद् | " | सुनी | १०२ | स्पृश् | १७१ | शुतभुज् | १४४ |
| सम्राज् | १४३ | सुन्दरी | ५३ | स्मृति | ४८ | ह्रह्र | २६ |
| सम्पत्ति | ४८ | सुपथिन् | १२८, १२६ | स्मृते | ३७ | हृदय | ७९ |
| | | सुपाद् | १५४ | स्मृतौ | ३९ | | |

सर्वश्रेष्ठ टीका, टिप्पणी व परिशिष्ट आदिसे विभूषित परीक्षोपयोगी
तथा अन्यान्य सर्वविध पुस्तक मिलने का एक मात्र
संस्कृत-संसार का प्राचीनतम स्थान—

जयकृष्णदास—हरिदास गुप्तः—

चौखम्बा संस्कृत पुस्तकालय,
पो० बा० नं० ८ बनारस सिटी ।



* श्रीजनकनन्दिन्यै नमः *

अथ सोत्तरा—

कौमुदी-रूपलता ।

श्रीशप्रियं गुरुवरं हृदयान्धसूरं,
“श्रीमन्महेश” मनिशं शिरसा प्रणम्य ।

श्रीचन्द्रचूडचरणाम्बुजचञ्चरीक-
“श्रीरामचन्द्र” कृतिना क्रियते लतेयम् ॥

अथ अजन्तपुँल्लिङ्गशब्दाः ॥ १ ॥

[१] अकारान्तः पुँल्लिङ्गो ‘राम’ शब्दः (भगवान् श्रीराम)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----------|-------|------------|----------|-----------|
| प्रथमा | रामः | रामौ | रामाः | कर्त्ता |
| द्वितीया | रामम् | रामौ | रामान् | कर्म |
| तृतीया | रामेण | रामाभ्याम् | रामैः | करण |
| चतुर्थी | रामाय | रामाभ्याम् | रामेभ्यः | सम्प्रदान |

(१) संज्ञाशब्दोऽयमव्युत्पन्नः इति पक्षे—‘अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्’ ।
रमन्ते योगिनोऽस्मिन्निति पक्षे तु—‘कृतद्वितसमासाश्च’ । (२) वृद्धिरेचि । (३)
‘प्रथमयोः पूर्वसवर्णः’ । (४) ‘अभिपूर्वः’ । (५) ‘तस्माच्छेषोनः पुंसि’ ।
(६) ‘टाल्लिङ्गसामिनास्स्याः’ । (७) ‘सुप्ति च’ । (८) ‘अतो भिन्न ऐस्’ ।
(९) ‘वेर्यः’ । (१०) ‘बहुवचने झत्येत्’ ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--------|----------------|-------------------|--------------------|-------------------|
| पञ्चमी | रामात्-द् | रामाभ्याम् | रामेभ्यः | अपादान |
| षष्ठी | रामस्य | रामयोः | रामाणाम् | सम्बन्ध |
| सप्तमी | रामे हे राम | रामयोः हे रामौ | रामेषु हे रामाः | अधिकरण सम्बोधन |

एवं कृष्ण-मुकुन्द-देव-गोविन्द-गोपाल-अन्यतम-इत्यादयोऽ

कारान्ताः शब्दाः रामशब्दवत् ।

[२] अकारान्तः पुँल्लिङ्गः सर्वनाम 'सर्व' शब्दः (सभी)

| | | | | |
|-------|---------------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | सर्वः | सर्वौ | सर्वे | कर्त्ता |
| द्वि० | सर्वम् | सर्वौ | सर्वान् | कर्म |
| तृ० | सर्वेण | सर्वाभ्याम् | सर्वैः | करण |
| च० | सर्वस्मै | सर्वाभ्याम् | सर्वेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सर्वस्मात्-द् | सर्वाभ्याम् | सर्वेभ्यः | अपा० |

(१) 'वावसाने' । (२) 'ओसि च' । (३) 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' । समान-पदे ऋ-र-पेभ्यः परस्य तु-टु-तु-ल-शर् भिन्नवर्णव्यवधानेऽपि पदान्तभिन्न-स्य नस्य णत्वं भवतीति निष्कर्षः । (४) 'आद्गुणः' । (५) 'आदेशप्रत्यययोः' । (६) 'एह्रस्वात्सम्बुद्धेः' । (७) 'अन्यतमशब्दस्य सर्वादिगणे पाठाभावात् 'राम' शब्दवत् । (८) सर्व-विश्व-उभ-उभय-उत्तर-उत्तम-अन्य-अन्यतर-इतर-त्वत-त्व-नेम-सम-सिम-पूर्व-पर-अवर-दक्षिण-उत्तर-अपर-अधर-स्व-अन्तर-त्यद्-तद्-यद्-एतद्-इदम्-अदस्-एक-द्वि-युष्मद्-अस्मद्-भवतु-किम्, एते 'सर्वनाम' शब्दाः । 'यथासंख्य' सूत्रे "समानाम्" इति निर्देशात् सर्वशब्दसमानार्थक 'सम' शब्दस्य एव गणे पाठो बोध्यः नतु तुल्यार्थकस्येति सिद्धान्तः । (९) 'सर्वादीनि सर्वनामानि' । 'जशः शी' । 'आद्गुणः' । (१०) 'सर्वनाम्नः स्मै' । "संज्ञोपसर्जनीभूतास्तु न सर्वादयः" अतः सर्वो नाम कश्चित् तस्मै 'सर्वाय' इत्यत्र संज्ञाशब्दत्वात् 'स्मै' आदेशो न । एवमुपसर्जनेऽपि बोध्यम् । (११) 'उसिउयोः स्मात् स्मिनौ' ।

| | | | | |
|----|------------|----------|-----------|--------|
| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| ष० | सर्वस्य | सर्वयोः | सर्वेषाम् | सम्ब० |
| स० | सर्वस्मिन् | सर्वयोः | सर्वेषु | अधि० |
| | हे सर्व | हे सर्वौ | हे सर्वे | सम्बो० |

एवं विश्व-कतर-यतर-ततर-एकतर-कतम-यतम-ततम-एक-
तम-अन्य-अन्यतर-इतर-त्वत-त्वै-सम-सिम-इति सर्वादिगण-
पठिता अकारान्तपुंलिङ्गाः । संख्यामिश्रायार्थक एकशब्दश्च ।

[३] अकारान्तः पुंलिङ्गो नित्यं द्विवचनान्तः 'उभ' शब्दः (दो)

| | | | |
|---------------|-----------|---------------|--------------|
| प्र०-उभौ | द्वि०-उभौ | तृ०-उभाभ्याम् | च०-उभाभ्याम् |
| पं०-उभाभ्याम् | ष०-उभयोः | स०-उभयोः | सम्बो०-हेउभौ |

[४] अकारान्तः पुंलिङ्ग 'उभय' शब्दः अस्य द्विवचनं नास्ति,
अनभिधानात् (दो अवयववाला) ।

| | | | | |
|-------|-------|---|--------|---------|
| प्र० | उभयः | ० | उभये | कर्त्ता |
| द्वि० | उभयम् | ० | उभयान् | कर्म |

(१) 'आमि सर्वनाम्नः सुट्' । अवशिष्टस्य 'राम' शब्दवत् साधनप्रकारो
बोध्यः । (२) त्वत-त्व-शब्दावदन्तावन्यपर्यायौ एकस्तान्त इत्यपरे अत एव
"त्वदधरमधुरमधूनि पिवन्तम्" इति संगच्छते ।

(३) "एकोऽन्यार्थे प्रधाने च प्रथमे केवले तथा ।

साधारणे समानेऽल्पे संख्यायां च प्रयुज्यते ॥"

इति कोशात् एकशब्दस्य अष्टौ अर्थाः, तत्र संख्यावाची 'एक' शब्दो नित्यै-
कवचनान्तः । (४) सर्वनामकार्याणां द्विवचनेऽभावेऽपि 'अव्ययसर्वनाम्नामकजिति'
अकज्विधानार्थमस्य गणे पाठस्यावश्यको बोध्यः । कप्रत्ययेन तु नेष्टसिद्धिः 'उभाडुदात्तोः
नित्यम्' इत्यत्र नित्यमिति योगविभागेनायच्च प्रसङ्गात् । अकचि तु तन्मध्यपतित-
न्यायेन द्विवचनपरत्वाभावात् दोषः । साधनप्रकारो 'राम' शब्दवत् बोध्यः ।

(५) 'उभयोऽन्यत्र' इति वार्तिकस्य 'उभयो मणिः-उभये देवमनुष्याः' इत्युदाहरण-
द्वयदानपरकभाष्येण, 'तद्धितश्चाऽसर्वविभक्तिः' इति सूत्रेण अव्ययसङ्ज्ञावारणायः

| | एकवचन | द्विवचन | वहुवचन | |
|-------|--|------------|----------------|---------|
| तृ० | उभयेन | ० | उभयैः | करण |
| च० | उभयस्मै | ० | उभयेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | उभयस्मात्-द् | ० | उभयेभ्यः | अपा० |
| ष० | उभयस्य | ० | उभयेषाम् | सम्ब० |
| ल० | उभयस्मिन् | ० | उभयेषु | अधि० |
| | हे उभय | ० | हे उभये | सम्बो० |
| | [५] अकारान्तः पुँल्लिङ्गो 'नेम' शब्दः (आधा) | | | |
| प्र० | नेमः | नेमौ | नेमे-नेमाः | कर्ता |
| द्वि० | नेमम् | नेमौ | नेमान् | कर्म |
| तृ० | नेमेन | नेमाभ्याम् | नेमैः | करण |
| च० | नमस्मै | नेमाभ्याम् | नेमेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | नेमस्मात्-द् | नेमाभ्याम् | नेमेभ्यः | अपा० |
| ष० | नेमस्य | नेमयोः | नेमेषाम् | सम्ब० |
| ल० | नेमस्मिन् | नमयोः | नेमेषु | अधि० |
| | हे नेम | हे नेमौ | हे नेमे-नेमाः | सम्बो० |
| | [६] अकारान्तः पुँल्लिङ्गः 'पूर्व'शब्दः (पूर्व) | | | |
| प्र० | पूर्वः | पूर्वौ | पूर्वे-पूर्वाः | कर्ता |

'तसिलादय' इत्यादि परिगणनेन च 'उभय' शब्दस्य द्विवचने रूपमनभिधानमिति कैयटाशयः । 'नचोदाहरणमादरणीयम्' (उदाहृतातिरिक्तोदाहरणाभावः इत्येवं परतया नादरणीयम्) । इति भाष्येण, पचति रूपं-पचति कल्पमिति परिगणनफलदानेन च द्विवचनेऽपि रूपं भवत्येवेति 'हरदत्ता'शयः । एवञ्च हरदत्तमते द्विवचनेऽपि रूपं भवत्येवेति सर्ववित् । 'सर्व'शब्दवत् साधनप्रकारो बोध्यः । (१) 'प्रथमचरणमतयाल्पार्धकृतिपयनेमाश्च' । अवशिष्टं 'सर्व' शब्दवत् । (२) 'पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणिव्यवस्थायामसंज्ञायाम्' = नियमेन अवधिसापेक्षार्थं संज्ञामिन्नार्थं च वर्तमानानां पूर्वादीनां सप्तानां जसि सर्वनामसंज्ञा विकल्पो नत्वन्यत्रेति भावः । अत एव 'दक्षिणा गायकाः' इत्यत्र दक्षिणशब्दस्य कुशलपरत्वेन अवध्यपेक्षत्याऽभावात् सर्वनामसंज्ञा न ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------------------------------|-----------------------|------------------------------|----------------|
| द्वि० | पूर्वम् | पूर्वा | पूर्वान् | कर्म |
| तृ० | पूर्वेण | पूर्वाभ्याम् | पूर्वैः | करण |
| च० | पूर्वस्मै | पूर्वाभ्याम् | पूर्वेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { पूर्वस्मात्-द् पूर्वात्-द् | पूर्वाभ्याम् | पूर्वेभ्यः | अपा० |
| ष० | पूर्वस्य | पूर्वयोः | पूर्वेषाम् | सम्ब० |
| स० | पूर्वस्मिन्-पूर्वं हे पूर्व | पूर्वयोः हे पूर्वा | पूर्वेषु हे पूर्व-पूर्वाः | अधि० सम्बो० |

एवं पर-अवर-दक्षिण-उत्तर-अपर-अधर-स्व-अन्तर शब्दाः ।

इति अजन्तपुंलिङ्गे सर्वनामशब्दाः ।

[७] अकारान्तः पुंलिङ्गः 'प्रथम' शब्दः (पहला)

| | | | | |
|------|----------------------|--------|----------------|---------|
| प्र० | प्रथमः | प्रथमौ | प्रथमे-प्रथमाः | कर्त्ता |
| | शेषं 'राम' शब्दवत् । | | | |

एवं चरम-द्वय-द्वितीय-त्रय-त्रितय-चतुष्टय-पञ्चतय-अल्प-
अर्ध-कतिपय-शब्दाः 'प्रथम' शब्दवत् ।

[८] अकारान्तः पुंलिङ्गो 'द्वितीय' शब्दः [दूसरा]

| | | | | |
|-------|-----------|----------|------------|---------|
| प्र० | द्वितीयः | द्वितीयौ | द्वितीयाः | कर्त्ता |
| द्वि० | द्वितीयम् | द्वितीयौ | द्वितीयान् | कर्म |

(१-२) 'पूर्वादिभ्यो नवभ्यो वा' । अन्यत् सर्व 'सर्व' शब्दवत् । (३) आत्मीयार्थे 'स्व' शब्दः 'पूर्व' शब्दवत्, ज्ञातिधनार्थकस्तु 'राम' शब्दवत् । (४) बाह्यार्थकः परिधानीयार्थकश्च 'अन्तर' शब्दः 'पूर्व' शब्दवत् । अन्यत्र 'राम' शब्दवत् । (५) 'प्रथमचरणमतयाल्पार्धकतिपयनेमाश्च । 'नेम' शब्दव्यतिरिक्तानां प्रथमादिशब्दानां गणे पाठभावात् जसोऽन्यत्र न सर्वनामकार्यमिति ध्येयम् । (६) 'द्वित्रिभ्यां तयप्स्यादयज्वा' । यस्येति च । (७) 'अर्धं नपुंसकसम्' = समास-वाची अर्धशब्द एव नित्यनपुंसकः, खण्डवाची तु पुंलिङ्ग एव यथा 'प्रामार्ध' इत्य

कौमुदीरूपलतायाम्-

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-------------------------------------|----------------|--------------|---------|
| च० | द्वितीयेन | द्वितीयाभ्याम् | द्वितीयैः | करण |
| च० | { द्वितीयस्मै द्वितीयाय | द्वितीयाभ्याम् | द्वितीयेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { द्वितीयस्मात्-द् द्वितीयात्-द् | द्वितीयाभ्याम् | द्वितीयेभ्यः | भपा० |
| ष० | द्वितीयस्य | द्वितीययो | द्वितीयानाम् | सम्ब० |
| स० | { द्वितीयस्मिन् द्वितीये | द्वितीययोः | द्वितीयेषु | आधि० |
| | हे द्वितीय | हे द्वितीयौ | हे द्वितीयाः | सम्बो० |

एवं 'तृतीय' शब्दोऽपि ।

[९] अकारान्तः पुंलिङ्गो 'निर्जर' शब्दः=निर्गता जरा यस्मात् (देवता)

| | | | | |
|------|-------------------------|----------------------------------|-----------------------|---------|
| प्र० | निर्जरः | { ^२ निर्जरसौ निजरौ | निर्जरसः निर्जराः | कर्त्ता |
| दि० | { निर्जरसम् निर्जरम् | निर्जसौ निर्जरौ | निर्जरसः निर्जरान् | कर्म |
| तृ० | { निर्जरसा निर्जरेण | निर्जराभ्याम् | ^३ निर्जरैः | करण |

(१) तीयस्य द्वित्सूपसंख्यानम् (वा०) । तीयप्रत्ययान्तस्य ङे-ङसि-ङि-इत्येतेषु द्वित्सुसर्वनामसंज्ञात्वात् 'सर्व' शब्दवत्, अन्येषां 'राम' शब्दवत् साधनप्रकारो बोध्यः । (२) 'जराया जरसन्यतरस्याम्' = जराशब्दस्य जरस् वा स्यादजादौ विभक्तौ । एवञ्च सु-भ्याम्-भिस्-भ्यस्-सुप्-विभक्तौ वर्जयित्वा सर्वत्र जरसादेशो भवतीति निष्कर्षः । 'पदाङ्गाधिकारे तस्य तदन्तस्य च' (प०) = पदाधिकारे अङ्गाधिकारे च यस्य यद् विहितं तत् तस्य तदन्तस्त च भवतीत्यर्थः । तेन जरसादेशस्य अङ्गाधिकारस्यत्वात् जराशब्दस्य तदन्तस्य (निर्जरशब्दस्य) च जरसादेशो भवतीति भावः । (३) अत्र ऐसा देशे कृते अजादिपरकत्वात् जरसादेशस्तु न सन्निपातपरिभाषाविरोधात् । जरसादेशाभावपक्षे, हलादौ (सु-भ्याम्-भिस्-भ्यस्-सुप्-विभक्तिषु) च 'राम' शब्दवत् साधनप्रकारो बोध्यः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|----------------------------|-----------------------------|----------------------------|---------|
| च० | { निर्जरसे निर्जराय | निर्जराभ्याम् | निर्जरेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { निर्जरसः निर्जरात्-द् | निर्जराभ्याम् | निर्जरेभ्यः | अपा० |
| ष० | { निर्जरसः निर्जरस्य | निर्जरसोः निर्जरयोः | निर्जरसाम् निर्जराणाम् | सम्ब० |
| स० | { निर्जरसि निर्जरे | निर्जरसोः निर्जरयोः | निर्जरेषु | अधि० |
| | हे निर्जर | { हे निर्जरसौ हे निर्जरौ | हे निर्जरसः हे निर्जराः | सम्बो० |
| [१०] अकारान्तः पुंलिङ्गः 'पाद' शब्दः (पैर) | | | | |
| प्र० | पादः | पादौ | पादाः | कर्त्ता |
| द्वि० | पादम् | पादौ | पदः=पादान् | कर्म |
| तृ० | { पदा पादेन | पद्याम् पादाभ्याम् | पद्भिः पादैः | करण |
| च० | { पदे पादाय | पद्याम् पादाभ्याम् | पद्भ्यः पादैभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { पदः पादात्-द् | पद्भ्याम् पादाभ्याम् | पद्भ्यः पादैभ्यः | अपा० |

(१) 'पद्दञ्चोमास्०=पाद-दन्त-नासिका-मास-हृदय-निशा-असजू-यूष-दोष-यकृत्-शकृत्-उदक-आस्य-एषा क्रमेण-पद्-दत्-नस्-मास्-हृद्-निश्-असन्-यूषन्-दोषन्-यकन्-शकन्-उदन्-आसन्-आदेशाः शसादौ वा स्युतिर्थः । शस्विभक्तेः प्राक्, पदादेशाभावपक्षे च 'राम' शब्दवत् साधनप्रकारो बोध्यः । अत्र केचित् 'पदङ्घ्रिश्चरणोऽस्त्रियाम्' 'स्वान्तं हृन्मानसं मनः' इत्यादौ पद्-हृद् इति प्रथमैकवचनदर्शनादत्र सूत्रे प्रभृतिप्रहणं प्रकारार्थमि'युक्तम् । प्रकारः=सादृश्यम्, तच्चात्र प्रत्ययत्वेनैव गृह्यते । तथा च पूर्वोक्तादेशाः सर्वत्र भवन्तीति तन्मतम् । तदा-पत्, पदौ, पदः, पदम्, पदौ इति, भवति । एवं दन्ता-

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----|-------------------------|---------------------------|----------------------------|----------------|
| ष० | { पदः पादस्य | पदोः पादयोः | पदाम् पादानाम् | सम्ब० |
| स० | { पदि पादे हे पाद | पदोः पादयोः हे पादौ | पत्सु पादषु हे पादाः | अधि० सम्बो० |

[११] अकारान्तः पुंल्लिङ्गो 'दन्त' शब्दः (दात)

| | | | | |
|-------|---------------------------|-----------------------------|-------------------------------|----------------|
| प्र० | दन्तः | दन्तौ | दन्ताः | कर्त्ता |
| द्वि० | दन्तम् | दन्तौ | दंतः-दन्तान् | कर्म |
| तृ० | { दता दन्तेन | दद्भ्याम् दन्ताभ्याम् | दद्भिः दन्तैः | करण |
| च० | { दते दन्ताय | दद्भ्याम् दन्ताभ्याम् | दद्भ्यः दन्तेभ्यः | सम्प्र० |
| पं | { दतः दन्तात्-द् | दद्भ्याम् दन्ताभ्याम् | दद्भ्यः दन्तेभ्यः | अपा० |
| ष० | { दतः दन्तस्य | दतोः दन्तयोः | दताम् दन्तानाम् | सम्ब० |
| स० | { दति दन्ते हे दन्त | दतोः दन्तयोः हे दन्तौ | दत्सु दन्तेषु हे दन्ताः | अधि० सम्बो० |

[१२] अकारान्तः पुंल्लिङ्गो 'मास' शब्दः (महीना)

| | | | | |
|-------|-------|------|-------------|---------|
| प्र० | मासः | मासौ | मासाः | कर्त्ता |
| द्वि० | मासम् | मासौ | मासः-मासान् | कर्म |

दीनामपि ज्ञेयम् । अत एव 'कक्कुक्षोपणी याचते महादेवः' इत्यत्र दोषन्नादेशः सङ्गच्छते । एतद् भाष्येण दोषशब्दस्य नपुंसकत्वमप्यायातीति बोध्यम् । वस्तु तस्तु शब्दत्वेनैव सादृश्यप्रहणमुचितम् नलुमतेत्यस्याऽनित्यत्वे गौरवात् 'वा शोके' ति सूत्रं तु नियमार्थं बोध्यमिति नवीनाः । (१) पादशब्दवत् बोध्यम् , भत्वादत्र अस्त्यं न ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|---------------------------------|-----------------------------|-----------------------------|----------------|
| तृ० | { मासा मासेन | माभ्याम् मासाभ्याम् | मासिः मासैः | करण |
| च० | { मासे मासाय | माभ्याम् मासाभ्याम् | मास्यः मासेभ्य | सम्प्र० |
| पं० | { मासः मासात्-द् | माभ्याम् मासाभ्याम् | मास्यः मासेभ्यः | अपा० |
| ष० | { मासः मासस्य | मासोः मासयोः | मासाम् मासानाम् | सम्ब० |
| स० | { मासि मासे हे मास | मासोः मासयोः हे मासौ | मासु मासेषु हे मासाः | अधि० सम्बो० |
| [१३] अकारान्तः पुल्लिङ्गो 'यूष' शब्दः (मांढ) | | | | |
| प्र० | यूषः | यूषौ | यूषाः | कर्त्ता |
| द्वि० | यूषम् | यूषौ | यूषणः-यूषान् | कर्म |
| तृ० | { यूषणा यूषेण | यूषभ्याम् यूषाभ्याम् | यूषभिः यूषैः | करण |
| च० | { यूषणे यूषाय | यूषभ्याम् यूषाभ्याम् | यूषभ्यः यूषेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { यूषणः यूषात्-द् | यूषभ्याम् यूषाभ्याम् | यूषभ्यः यूषेभ्यः | अपा० |
| ष० | { यूषणः यूषस्य | यूषणोः यूषयोः | यूषणाम् यूषाणाम् | सम्ब० |
| स० | { यूषिण-यूषणि यूषे हे यूष | यूषणोः यूषयोः हे यूषौ | यूषसु यूषेषु हे यूषाः | अधि० सम्बो० |

(१-२) 'स्वादिष्विति' पदत्वे, रत्वे, यत्वे, यलोपे, साधुः । (३-४) 'अरलो-
पोनः' । 'रषाभ्यां नोणः समानपदे' । (५) 'विभाषा द्विश्योः' । 'यूषन् आदेशपक्षे
'राजन्' शब्दवत् ।

[१४] अकारान्तः पुंलिङ्गो 'द्वयह' शब्दः (दो दिन)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------------------|-------------|------------|---------|
| प्र० | इहः | इहौ | इहाः | कर्त्ता |
| द्वि० | इहम् | इहौ | इहान् | कर्म |
| तृ० | इहेन | इह्नाभ्याम् | इहेः | करण |
| च० | इहाय | इहाभ्याम् | इहेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | इहात्-इ | इहाभ्याम् | द्वयेभ्यः | अपा० |
| ष० | इहस्य | इहयोः | इहानाम् | सम्ब० |
| स० | { इहि- द्वयहनि-द्वये | इहयोः | इहेषु | अधि० |
| | हे इह | हे इहौ | हे द्वयहाः | सम्बो० |

एवं इयह-व्यह-सायाह-उन्दादयोपिऽद्वयहशब्दवत् ।

[१५] आकारान्तः पुंलिङ्गो 'विश्वपा' शब्दः (विश्वरक्षक)

| | विश्वपाः | विश्वपौ | विश्वपाः | कर्त्ता |
|-------|-------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | विश्वपाः | विश्वपौ | विश्वपाः | कर्त्ता |
| द्वि० | विश्वपाम् | विश्वपौ | विश्वपः | कर्म |
| तृ० | विश्वपा | विश्वपाभ्याम् | विश्वपाभिः | करण |
| च० | विश्वपे | विश्वपाभ्याम् | विश्वपाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | विश्वपः | विश्वपाभ्याम् | विश्वपाभ्यः | अपा० |
| ष० | विश्वपः | विश्वपोः | विश्वपाम् | सम्ब० |
| स० | विश्वपि | विश्वपोः | विश्वपासु | अधि० |
| | हे विश्वपाः | हे विश्वपौ | हे विश्वपाः | सम्बो० |

एवं धनपा-धेनुपा-गोपा-वनपा-द्वारपा-शंखध्मा-पाणिध्मा-मुखध्मा-आग्निध्माप्रभृतयः आकारान्तधात्वन्ताः । कृत्वाः-श्ना-इति च

(१) द्वयोरहोर्भवः इति विग्रहे 'तद्वितार्थ' इति समासे, ठञि, तस्य लुकि, राजाहः सखीभ्यष्टच्' इति टञि, 'अहोऽह एतेभ्यः' इति अहादेशे यणि सिद्धम् । (२) 'संख्या-वि-साय-पूर्वस्याऽहस्याऽहन्नन्यतरस्यां औ' । विभाषा दिश्योः । (३) दीर्घा-असि च इति दीर्घनिषेधे वृद्धिः । (४) 'आतो घातोः' । (५) 'कृत्वा-श्ना

[१६] आकारान्तः पुल्लिङ्गो 'हाहा' शब्दः (गन्धर्व)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------|------------|----------|---------|
| प्र० | हाहाः | हाहौ | हाहाः | कर्त्ता |
| द्वि० | हाहाम् | हाहौ | हाहान् | कर्म |
| तृ० | हाहा | हाहाभ्याम् | हाहाभिः | करण |
| च० | हाहै | हाहाभ्याम् | हाहाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | हाहाः | हाहाभ्याम् | हाहाभ्यः | अपा० |
| ष० | हाहाः | हाहौः | हाहाम् | सम्ब० |
| स० | हाहे | हाहौः | हाहासु | अधि० |
| | हे हाहाः | हे हाहौ | हे हाहाः | सम्बो० |

[१७] इकारान्तः पुल्लिङ्गो 'हरि'शब्दः (भगवान् विष्णु)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------|-----------|---------|---------|
| प्र० | हरिः | हरौ | हरयः | कर्त्ता |
| द्वि० | हरिम् | हरौ | हरिन् | कर्म |
| तृ० | हरिणा | हरिभ्याम् | हरिभिः | करण |
| च० | हरये | हरिभ्याम् | हरिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | हरैः | हरिभ्याम् | हरिभ्यः | अपा० |
| ष० | हरैः | हर्योः | हरीणाम् | सम्ब० |
| स० | हरौ | हर्योः | हरिषु | अधि० |
| | हे हरैः | हे हरी | हे हरयः | सम्बो० |

इति प्रत्ययौ । नचैवं धातुत्वाभावात् शप्ति-क्त्वः-इनः-इत्यत्र कथमाकारलोपः इति चेत्, 'आतो धातोः' इति सूत्रस्थ 'आत' इति योगविभागेन बोध्यम् । (१) 'हाहा' शब्दस्य अव्युत्पन्नप्रातिपदिकत्वेन धातुत्वाभावात् 'आतो धातोः' इत्याल्लोपादिकं न । (२) अकः सवर्णे दीर्घः । (३) 'वृद्धिरेचि' । (४-५) सवर्णदीर्घः । (६) 'वृद्धिरेचि' । (७) 'आद्गुणः' । शेषं विश्वपावत् । (८) 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' । (९) 'जसि च' । (१०) शेषोऽध्यसखि । 'आ-लो नाऽस्त्रियाम्' । (११) 'घेर्ङिति' । (१२) 'ङसि ङसोश्च' । (१३) 'अच्चघेः' । (१४) 'ह्रस्वस्य गुणः' । 'एङ्ह्रस्वात्सम्बुद्धेः' ।

एवम् अग्नि-रवि-कवि-भूपति-श्रीपति-अतिसखि-इत्यादयः ।

इकारान्तपुल्लिङ्गा ।

[१८] इकारान्तः पुल्लिङ्गः 'सखि'शब्दः (मित्र)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------|-----------|----------|---------|
| प्र० | सखा | सखाथौ | सखायः | कर्त्ता |
| द्वि० | सखायम् | सखयौ | सखीन् | कर्म |
| तृ० | सख्या | सखिभ्याम् | सखिभिः | करण |
| च० | सख्ये | सखिभ्याम् | सखिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सख्युः | सखिभ्याम् | सखिभ्यः | अपा० |
| ष० | सख्युः | सख्योः | सखीनाम् | सम्ब० |
| स० | सख्यौ | सख्योः | सखिषु | अधि० |
| | हे सखे | हे सखाथौ | हे सखायः | सम्बो० |

[१९] इकारान्तः पुल्लिङ्गः 'सुसखि' शब्दः (प्रियमित्र)

| | सुसखा | सुसखाथौ | सुसखायः | कर्त्ता |
|------|----------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | सुसखा | सुसखाथौ | सुसखायः | कर्त्ता |
| द्वि | सुसखायम् | सुसखयौ | सुसखीन् | कर्म |
| तृ० | सुसखिना | सुसखिभ्याम् | सुसखिभिः | करण |
| च० | सुसख्ये | सुसखिभ्याम् | सुसखिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुसखेः | सुसखिभ्याम् | सुसखिभ्यः | अपा० |
| प० | सुसखेः | सुसख्योः | सुसखीनाम् | सम्ब० |

(१) 'शेषो ध्यसखि' इति सूत्रे असखि, इत्युक्त्वात् 'सखि' शब्दस्य घिसंज्ञा न भवति । (२) 'अनङ् सौ' । 'सर्वनामस्थाने चाऽसम्बुद्धौ' सुलोपः । नलोपः । (३) 'सख्युरसम्बुद्धौ' । 'अचो ङिति' । (४) घित्वाऽभावात् नाभावाऽभावे यण् । (५) 'रुयत्यात्परस्य' । (६) 'औत्' । (७) 'राजाहः सखिभ्यष्टच्' इति टद्धि 'सुसखः' इति तु न स्यात् 'न पूजनादिति निषेधात् । सखिशब्दान्तत्वेऽपि 'पदा-द्गाधिकारे' इति परिभाषया 'सखि' शब्दवत् अनङादिकार्यम्भवति । (८) 'सप्त-दायस्य सखिरूपत्वाभावेन घित्वात् नाऽऽदेशः । इतोऽप्रो हरिशब्दवत् साधनप्र-कारो बोध्यः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|---------------------------------------|----------|------------|------------|---------|
| स० | सुसख्यौ | सुसख्योः | सुसखिषु | अधि० |
| | हे सुसखे | हे सुसखायौ | हे सुसखायः | सम्बो० |
| एवम् अतिशयितः सखा 'अतिसखा' तथा परमसखा | | | | यस्येति |
| 'परमसखा' इत्यपि बोध्यम् । | | | | |

[२०] इकारान्तः पुंलिङ्गः 'पति' शब्दः (स्वामी)

| | | | | |
|-------|--------|-----------|---------|---------|
| प्र० | पतिः | पती | पतयः | कर्त्ता |
| द्वि० | पतिम् | पती | पतीन् | कर्म |
| तृ० | पत्या | पतिभ्याम् | पतिभिः | करण |
| च० | पत्ये | पतिभ्याम् | पतिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | पत्युः | पतिभ्याम् | पतिभ्यः | अपा० |
| ष० | पत्युः | पत्योः | पतीनाम् | सम्ब० |
| स० | पत्यौ | पत्योः | पतिषु | अधि० |
| | हे पते | हे पती | हे पतयः | सम्बो० |

[२१] इकारान्तः पुंलिङ्गो 'भूपति' शब्दः (राजा)

| | | | | |
|-------|---------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | भूपतिः | भूपती | भूपतयः | कर्त्ता |
| द्वि० | भूपतिम् | भूपती | भूपतीन् | कर्म |
| तृ० | भूपतिना | भूपतिभ्याम् | भूपतिभिः | करण |
| च० | भूपतये | भूपतिभ्याम् | भूपतिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | भूपतेः | भूपतिभ्याम् | भूपतिभ्यः | अपा० |

(१) सखायमतिक्रान्तः, राज्ञः सखा, इति विग्रहे तु 'न पूजनादिति निषेधस्याभावेन 'राजाहः सखीभ्यः' इति टचि, अतिसखः, राजसखः, 'राम' शब्दवदिति बोध्यम् । (२) 'पतिः समास एव' । सीतायाः 'पतये नमः' इत्यादि त्वार्थम् । (३) 'ख्यत्यात्परस्य' । (४) 'औत्' । (५) 'पतिः समास एव, अतःसमासे-भूपति- गणपति-श्रीपति-पृथ्वीपति-प्रभृतयो धिसंज्ञका एव, तेषां सर्वाण्यपि रूपाणि तत्र तत्र साधनकार्याणि च 'हरि' शब्दवत् ।

एकवचन द्विवचन बहुवचन

| | | | | |
|----|----------|----------|-----------|--------|
| ष० | भूपतेः | भूपत्योः | भूपतीनाम् | सम्ब० |
| स० | भूपतौ | भूपत्योः | भूपतिषु | अधि० |
| | हे भूपते | हे भूपती | हे भूपतयः | सम्बो० |

एवम् गणपति-श्रीपति-पृथ्वीपति-आदयः ।

[२२] त्रिषु लिङ्गेषु समानः, डतिप्रत्ययान्त इकारान्तः 'कति'
शब्दो नित्यं बहुवचनान्तः (कितने)

| | | | |
|-------------|------------|------------|---------------|
| प्र०-कति | द्वि०-कति | तृ०-कतिभिः | च०-कतिभ्यः |
| पं०-कतिभ्यः | ष०-कतीनाम् | स०-कतिषु | सम्बो० हे कति |

[२३] इकारान्तः पुंलिङ्गो नित्यं बहुवचनान्तः 'त्रि' शब्दः [तीन]

| | | | |
|--------------|---------------|-------------|-----------------|
| प्र०-त्रयः | द्वि०-त्रीन् | तृ०-त्रिभिः | च०-त्रिभ्यः । |
| पं०-त्रिभ्यः | ष०-त्रैयाणाम् | स०-त्रिषु | सम्बो०-हे त्रयः |

[२४] इकारान्तः पुंलिङ्गः 'प्रियत्रि' शब्दः (३ प्रियवाले पुरुष)

| | | | | |
|-------|-------------|-----------------|----------------|---------|
| प्र० | प्रियत्रिः | प्रियत्री | प्रियत्रियः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रियत्री । | प्रियत्री | प्रियत्रीन् | कर्म |
| तृ० | प्रियत्रिणा | प्रियत्रिभ्याम् | प्रियत्रिभिः | करण |
| च० | प्रियत्रये | प्रियत्रिभ्याम् | प्रियत्रिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रियत्रेः | प्रियत्रिभ्याम् | प्रियत्रिभ्यः | अपा० |
| ष० | प्रियत्रेः | प्रियत्रयोः | प्रियत्रयाणाम् | सम्ब० |

(१) युष्मद्-अस्मद् पट्संज्ञकाः त्रिषु (लिङ्गेषु) सरूपाः (समानानि रूपाणि-
येषां ते) (२) 'बहुगणवतुडति संख्या' । 'डति च' । 'षड्भ्यो लुक्' । (३)
'त्रेस्त्रयः' । (४) प्रियास्त्रयो यस्येति बहुव्रीहिः, तस्यान्यपदार्थप्रधानत्वेन
'त्रि'शब्दत्वाभावात्-'हरि' वत्तस्य रूपाणि । (५) अत्र केचित् त्रिशब्दस्य उपस-
र्जनत्वेन गौणमुख्यन्यायात् 'त्रेस्त्रयः' इत्यस्याऽप्रवृत्त्या प्रियत्रीणामित्येव
भवतीत्युक्तं, तन्न गौणमुख्यन्यायस्य पदकार्यविषयत्वात् ।

| | | | | |
|----|--------------|--------------|---------------|--------|
| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| स० | प्रियत्रौ | प्रियद्वयोः | प्रियत्रिषु | अधि० |
| | हे प्रियत्रे | हे प्रियत्री | हे प्रियत्रयः | सम्बो० |

[२५] इकारान्तः पुंलिङ्गः 'द्वि' शब्दो नित्यं द्विवचनान्तः (दो)

प्र-० द्वौ द्वि-० द्वौ तृ-० द्वाभ्याम् च-० द्वाभ्याम्
पं-० द्वाभ्याम् ष-० द्वयोः स-० द्वयोः (त्यदादेः सम्बोधनं नास्ति) ।

(२६) इकारान्तः पुंलिङ्गः 'औडुलोमि' शब्दः (ताराके सहश-
लोमवाले पुरुष की सन्तान)

| | | | | |
|-------|------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | औडुलोमिः | औडुलोमी | उडुलोमाः | कर्त्ता |
| द्वि० | औडुलोमिम् | औडुलोमी | उडुलोमान् | कर्म |
| तृ० | औडुलोमिना | औडुलोमिभ्याम् | उडुलोमैः | करण |
| च० | औडुलोमये | औडुलोमिभ्याम् | उडुलोमेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | औडुलोमेः | औडुलोमिभ्याम् | उडुलोमेभ्यः | अपा० |
| ष० | औडुलोमेः | औडुलोम्योः | उडुलोमानाम् | सम्ब० |
| स० | औडुलोमी | औडुलोम्योः | उडुलोमेषु | अधि० |
| | हे औडुलोमे | हे औडुलोमी | हे उडुलोमाः | सम्बो० |

[२७] ईकारान्तः पुंलिङ्गः 'पपी' शब्दः (सूर्य)

| | | | | |
|------|------|-------|-------|---------|
| प्र० | पपीः | पप्यौ | पप्यः | कर्त्ता |
|------|------|-------|-------|---------|

- (१) 'द्वि'शब्दस्य द्वित्वनियतत्वादिति भावः । (२) 'त्यदादीनामः' ।
(३) उडुनि=नक्षत्राणीव लोमानि यस्य स 'उडुलोमाः' । तस्यापत्यम्, औडुलो-
मिः । 'बाह्वादिभ्यश्च' इति इञ् । 'नस्तद्धिते' इति टिलोपः । आदिवृद्धिः । (४)
उडुलोमनः अपत्यमिति विग्रहे बहुवचनेषु 'बाह्वादिभ्यश्च' इति सूत्रं प्रवाच्य 'लोमनो-
ऽपत्येषु बहुष्वकारो वक्तव्यः' इत्यनेन अकारप्रत्यये टिलोपे जित्वाभावेन नादिवृ-
द्धिः । एवञ्च एकवचनद्विवचनयोः 'हरि' वत्, बहुवचनेषु 'राम' वद्रूपं बोध्यम् ।
(५) 'यापोः किव्रच' इति ईप्रत्ययान्तत्वेन लघन्तत्वाऽभावात् सुलोपो न ।
(६) दीर्घाज्जसिचेति दीर्घनिषेधात् यणि ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------|-----------|----------|---------|
| द्वि० | पपीम् | पप्यौ | पपीन् | कर्म |
| तृ० | पप्या | पपीभ्याम् | पपीभिः | करण |
| च० | पप्ये | पपीभ्याम् | पपीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | पप्यः | पपीभ्याम् | पपीभ्यः | अपा० |
| ष० | पप्यः | पप्योः | पप्याम् | सम्ब० |
| स० | पपी | पप्योः | पपीषु | अधि० |
| | हे पपीः | हे पप्यौ | हे पप्यः | सम्बो० |

[२८] ईकारान्तः पुंलिङ्गो 'वातप्रमी' शब्दः (मग)

| | | | | |
|-------|--------------|----------------|---------------|---------|
| प्र० | वातप्रमीः | वातप्रम्यौ | वातप्रम्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | वातप्रमीम् | वातप्रम्यौ | वातप्रमीन् | कर्म |
| तृ० | वातप्रम्या | वातप्रमीभ्याम् | वातप्रमीभिः | करण |
| च० | वातप्रम्ये | वातप्रमीभ्याम् | वातप्रमीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | वातप्रम्यः | वातप्रमीभ्याम् | वातप्रमीभ्यः | अपा० |
| ष० | वातप्रम्यः | वातप्रम्योः | वातप्रम्याम् | सम्ब० |
| स० | वातप्रमी | वातप्रम्योः | वातप्रमीषु | अधि० |
| | हे वातप्रमीः | हे वातप्रम्यौ | हे वातप्रम्यः | सम्बो० |

[२९] ईकारान्तः पुंलिङ्गो 'ययी' शब्दः (मार्ग)

| | | | | |
|-------|-------|-----|-------|---------|
| प्र० | ययी | ययौ | ययः | कर्त्ता |
| द्वि० | ययीम् | ययौ | ययीन् | कर्म |

एवं यय्या, ययीभ्याम्, ययीभिः, इत्यादि 'वातप्रमी'वत् ।

(१) ईप्रत्ययान्तस्य धातुत्वाभावेन 'एरनेकाचः' इत्यस्याप्रवृत्त्या 'भमि पूर्वः' इति पूर्वरूपे सिद्धम् । (२) पूर्वसवर्णदीर्घे 'तस्माच्छोनेः' इति नत्वम् । (३) सवर्णदीर्घः । (४) वातशब्दे उपपदे माघातोः ईप्रत्ययः स्यात् स च क्ति इत्यर्थक "वातप्रमी" इत्युणादिसूत्रेण माघातोः ईप्रत्यये तस्य किद्वद्भावे च कृते 'भातो लोप इटि च' इत्यालोपे उपपदसमासे तस्मात् सुबुत्पत्तिः । शेषं 'पपी' वत् ।

[३०] ईकारान्तः पुंलिङ्गो 'बहुश्रेयसी' शब्दः

(अधिकं प्रसस्त [कल्याण करने वाली] स्त्रियां हैं जिसको ऐसा पुरुष)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------------|------------------|-----------------|---------|
| प्र० | बहुश्रेयसी | बहुश्रेयस्यौ | बहुश्रेयस्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | बहुश्रेयसीम् | बहुश्रेयस्यौ | बहुश्रेयसीन् | कर्म |
| तृ० | बहुश्रेयस्या | बहुश्रेयसीभ्याम् | बहुश्रेयसीभिः | करण |
| च० | बहुश्रेयस्यै | बहुश्रेयसीभ्याम् | बहुश्रेयसीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | बहुश्रेयस्याः | बहुश्रेयसीभ्याम् | बहुश्रेयसीभ्यः | अपा० |
| ष० | बहुश्रेयस्याः | बहुश्रेयस्योः | बहुश्रेयसीनाम् | सम्ब० |
| स० | बहुश्रेयस्याम् | बहुश्रेयस्योः | बहुश्रेयसीषु | अधि० |
| | हे बहुश्रेयसि | हे बहुश्रेयस्यौ | हे बहुश्रेयस्यः | सम्बो० |

[३१] ईकारान्तः पुंलिङ्गः 'अतिलक्ष्मी' शब्दः

(लक्ष्मी को अतिक्रमण करने वाला पुरुष)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------|------------------|----------------|---------|
| प्र० | अतिलक्ष्मीः | अतिलक्ष्यौ | अतिलक्ष्म्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | अतिलक्ष्मीम् | अतिलक्ष्म्यौ | अतिलक्ष्मीन् | कर्म |
| तृ० | अतिलक्ष्म्या | अतिलक्ष्मीभ्याम् | अतिलक्ष्मीभिः | करण |
| च० | अतिलक्ष्म्यै | अतिलक्ष्मीभ्याम् | अतिलक्ष्मीभ्यः | सम्प्र० |

(१) बहुचः श्रेयस्यः (अतिप्रसस्ताः) स्त्रियः यस्य सः । 'स्त्रियाः पुंवदि'ति पुंवत्वम् । 'गोल्लियो'रिति ह्रस्वस्तु न ईयसुन्प्रत्ययान्तत्वेन 'ईयसो बहुव्रीहेर्नेति वाच्यम्' इति निषेधात् । ङीवन्तत्वात् ह्रस्व्यादिति सुलोपः । (२-३) 'प्रथम-लिङ्गग्रहणञ्च' । 'आण्णद्याः । 'आट्श्च' । 'इको यणचि' । (४) नद्यन्तत्वान्नुट् । (५) 'ङे राम्नद्याम्नीभ्यः' । अत्र नुट् तु न आटः परत्वेन तस्य वाधात् । (६) 'अम्ब्वार्थनद्योर्ह्रस्व' । 'एङ् ह्रस्वात्सम्बुद्धेः' । (७) 'लक्ष्मेमुट् च' इत्यौणादिक-सूत्रेण लक्षधातोरीप्रत्यये तस्य सुटि च कृते लक्ष्मीशब्दः । लक्ष्मीमतिक्रान्तः इति विग्रहे 'अत्यादय' इत्यादिना समासे अङ्यन्तत्वेन स्त्रीप्रत्ययान्तत्वाभावात् उपसर्जनह्रस्वसुलोपौ न भवतः । अन्यत् सर्वं कार्यं बहुश्रेयसीवत् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|---------------------------------|----------------------------------|---------------------------------|----------------|
| पं० | अतिलक्ष्म्याः | अतिलक्ष्मीभ्याम् | अतिलक्ष्मीभ्यः | अपा० |
| ष० | अतिलक्ष्म्याः | अतिलक्ष्म्योः | अतिलक्ष्मीणाम् | सम्ब० |
| स० | अतिलक्ष्म्याम् हे अतिलक्ष्मि | अतिलक्ष्म्योः हे अतिलक्ष्म्यौ | अतिलक्ष्मीषु हे अतिलक्ष्म्यः | अधि० सम्बो० |

[३२) ईकारान्तः पुंल्लिङ्गः 'कुमारी' शब्दः (कुमारी का इच्छा करनेवाला या कुमारीके ऐसा आचरण करने वाला पुरुष)

| | | | | |
|-------|-------------------------|--------------------------|-------------------------|----------------|
| प्र० | कुमारी | कुमार्यौ | कुमार्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | कुमार्यम् | कुमार्यौ | कुमार्यः | कर्म |
| तृ० | कुमार्या | कुमारीभ्याम् | कुमारीभिः | करण |
| च० | कुमार्यै | कुमारीभ्याम् | कुमारीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | कुमार्याः | कुमारीभ्याम् | कुमारीभ्यः | अपा० |
| ष० | कुमार्याः | कुमार्योः | कुमारीणाम् | सम्ब० |
| स० | कुमार्याम् हे कुमारी | कुमार्योः हे कुमार्यौ | कुमारीषु हे कुमार्यः | अधि० सम्बो० |

[३३] प्रकृष्टा धीर्यस्य इति विग्रहे ईकारान्तः पुंल्लिङ्गः 'प्रधी' शब्दः ।
(उच्च बुद्धि वाला पुरुष)

| | | | | |
|-------|----------|-------------|----------|---------|
| प्र० | प्रधीः | प्रध्यौ | प्रध्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रध्यम् | प्रध्यौ | प्रध्यः | कर्म |
| तृ० | प्रध्या | प्रधीभ्याम् | प्रधीभिः | करण |

(१) कुमारीमात्मनः इच्छतीत्यर्थे क्यच्, क्यजन्तस्य धातुत्वात् सुब्लक्, ततः कर्त्तरि क्तिप् अल्लोपयलोपौ कुमारीति । अथवा-कुमारीवाचरतीत्यर्थे क्तिप् क्विचन्तस्य धातुत्वात् कर्त्तरि क्तिप् कुमारीति रूपम् । (२-३) एरनेकाचोऽसं-योगपूर्वस्य । कुमारीशब्दस्य 'बहुश्रेयसीशब्दापेक्षया अम्शसोरेव रूपे विशेषः इति बोध्यम् । (४) प्रकृष्टा धीर्यस्य इति विग्रहे प्रधी' शब्दः अल्यन्तत्वानसु-लोपः । शेषं क्विचन्तकुमारीशब्दवत् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-----------|-------------|------------|---------|
| च० | प्रथ्यै | प्रधीभ्याम् | प्रधीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रध्याः | प्रधीभ्याम् | प्रधीभ्यः | अपा० |
| ष० | प्रध्याः | प्रध्योः | प्रधीनाम् | सम्ब० |
| स० | प्रध्याम् | प्रध्योः | प्रधीषु | अधि० |
| | हे प्रधि | हे प्रध्यौ | हे प्रध्यः | सम्बो० |

[३४] प्रध्यायतीति विग्रहे ईकारान्तः 'प्रधी' शब्दः ।

धात्वन्तोऽयम् (उच्च ध्यानकरने वाला)

| | | | | |
|-------|-----------|-------------|------------|---------|
| प्र० | प्रधीः | प्रध्यौ | प्रध्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रध्यम् | प्रध्यौ | प्रध्यः | कर्म |
| तृ० | प्रध्या | प्रधीभ्याम् | प्रधीभिः | करण |
| च० | प्रथ्ये | प्रधीभ्याम् | प्रधीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रध्यः | प्रधीभ्याम् | प्रधीभ्यः | अपा० |
| ष० | प्रध्यः | प्रध्योः | प्रध्याम् | सम्ब० |
| स० | प्रधिय | प्रध्योः | प्रधीषु | अधि० |
| | हे प्रधीः | हे प्रध्यौ | हे प्रध्यः | सम्बो० |

एवं वेगम् इच्छति इति- 'वेगी' । 'जलपी' शब्दानामपि ज्ञेयम् ।

(१) प्रकृष्टा धीर्यस्येति विग्रहे धीशब्दस्य स्त्रीत्वात् 'प्रथमलिङ्गप्रहणञ्च' इति नदीत्वान्नदीकार्यम्, एवंच ङसि-ङसादावपि कार्यं ज्ञेयम् । (२) नदीत्वान्नुटि । (प्रकृष्टा च सा धीश्च प्रधीः, प्रकृष्टा धीर्यस्याः सा प्रधीः, इति विग्रहे वा स्त्री-लिङ्गेष्वेवमेवेति वक्ष्यामः) । (३) प्रध्यायतीति विग्रहे तु 'ध्यायतेः सम्प्रसारणञ्च' इति सूत्रेण ध्याधातोः क्विप् यकारस्य सम्प्रसारणमिकारः । 'दूलः' इति दीर्घः धीरिति ततः कृदन्तत्वेन प्रातिपदिकत्वात् सुवृत्पत्तिः अङ्यन्तत्वाच्च सुलोपः । (४) अजा-दौ सर्वत्र 'एरनेकाच्चः' इति यणव । (५) अस्त्रीत्वान्नदीकार्यं न भवतीति विशेषः । (६) स्त्रीत्वाभावेन नदीत्वाऽभावात्, ह्रस्वान्तत्वाभावाच्च न नुट् ।

[३५] ईकारान्तः पुँल्लिङ्गः 'उन्नी' शब्दः ।

(अच्छी तरह से ले जाने वाला)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | उन्नीः | उन्यौ | उन्यः | कर्ता |
| द्वि० | उन्यम् | उन्यौ | उन्यः | कर्म |
| तृ० | उन्या | उन्नीभ्याम् | उन्नीभिः | करण |
| च० | उन्ये | उन्नीभ्याम् | उन्नीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | उन्यः | उन्नीभ्याम् | उन्नीभ्यः | अपा० |
| ष० | उन्यः | उन्योः | उन्याम् | सम्ब० |
| स० | उन्याम् | उन्योः | उन्नीषु | अधि० |
| | हे उन्नीः | हे उन्यौ | हे उन्यः | सम्बो० |

[३६] ईकारान्तः पुँल्लिङ्गः 'ग्रामणी' शब्दः ।

(गांव का स्वामी अथवा गांव का मुखिया)

| | ग्रामणीः | ग्रामण्यौ | ग्रामाण्यः | कर्ता |
|-------|-------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | ग्रामणीः | ग्रामण्यौ | ग्रामाण्यः | कर्ता |
| द्वि० | ग्रामण्यम् | ग्रामण्यौ | ग्रामण्यः | कर्म |
| तृ० | ग्रामाण्या | ग्रामणीभ्याम् | ग्रामणीभिः | करण |
| च० | ग्रामण्ये | ग्रामणीभ्याम् | ग्रामणीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | ग्रामण्यः | ग्रामणीभ्याम् | ग्रामणीभ्यः | अपा० |
| ष० | ग्रामण्यः | ग्रामण्योः | ग्रामण्याम् | सम्ब० |
| स० | ग्रामण्याम् | ग्रामण्योः | ग्रामणीषु | अधि० |

(१) उन्नयतीति=उन्नीः । 'सत्सुद्विपे'त्यादिना उत्पूर्वात् 'नी'धातोः क्तिप् सुबु-
त्पत्तिः अङ्घ्रन्तत्वान्न सुलोपः । (२) अजादौ 'एरनेकाचः' इति यण् । अङ्घ्रीत्वा-
न्नदीकार्यन । (३) 'डेराम्नद्यान्नीभ्यः' इति सूत्रे 'नी' शब्दस्य पृथग्ग्रहणादाम् ।
आङ्घ्रत्वेन 'पदाङ्गाधिकारे'ति परिभाषया नीशब्दान्तादपि आम्भवतीति बोध्यम् ।
(४) ग्रामं नयति=नियच्छतीति 'ग्रामणीः' क्तिप् 'अग्रप्रामाभ्यां नयतेर्णो वाच्यः' इति
यत्वम् । अङ्घ्रन्तत्वान्न सुलोपः । (५) 'उन्नी' शब्दवत् साधनप्रकारो बोध्यः ।

| | | | |
|--------------------------------|--------------|--------------|--------|
| एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| हे ग्रामणीः | हे ग्रामण्यौ | हे ग्रामण्यः | सम्बो० |
| एवं सेनानी-अग्रणी-शब्दानामपि । | | | |

[३७] ईकारान्तः पुंलिङ्गो 'नी' शब्दः (ले जाने वाला)

| | | | | |
|-------|--------|----------|---------|---------|
| प्र० | नीः | नियौ | नियः | कर्ता |
| द्वि० | नियम् | नियौ | नियः | कर्म |
| तृ० | निया | नीभ्याम् | नीभिः | करण |
| च० | निये | नीभ्याम् | नीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | नियः | नीभ्याम् | नीभ्यः | अपा० |
| ष० | नियः | नियोः | नियाम् | सम्ब० |
| स० | नियाम् | नियोः | नीषु | अधि० |
| | हे नीः | हे नियौ | हे नियः | सम्बो० |

[३८] ईकारान्तः पुंलिङ्गः 'सुश्री' शब्दः (सुन्दर शोभावान्)

| | | | | |
|-------|-----------|--------------|------------|---------|
| प्र० | सुश्रीः | सुश्रियौ | सुश्रियः | कर्ता |
| द्वि० | सुश्रियम् | सुश्रियौ | सुश्रियः | कर्म |
| तृ० | सुश्रिया | सुश्रीभ्याम् | सुश्रीभिः | करण |
| च० | सुश्रिये | सुश्रीभ्याम् | सुश्रीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुश्रियः | सुश्रीभ्याम् | सुश्रीभ्यः | अपा० |
| ष० | सुश्रियः | सुश्रियोः | सुश्रियाम् | सम्ब० |

(१) नयतीति=नीः नीधातोः क्विप् ल्यन्तत्वाभावात् सुलोपो न । (२) अनेकात्त्वाभावात् 'एरनेकाच' इति न यण् किन्तु 'अचि श्नुधात्विति' इयङ् । यजादिप्रत्यये परे सर्वत्र बोध्यम् । एतावानेव 'उन्नी' शब्दादस्य वैलक्षण्यम्बोध्यम् । (३) श्रयतीति श्रीः, श्रिच् धातोः 'क्विव्वची'ति सूत्रेण क्विप् प्रकृतेर्दार्ढ्यश्च । सुश्रु श्रयति, सु=शोभना श्रीरस्येति वा सुश्रीः । अल्यन्तत्वान्न सुलोपः । (४) इवर्णस्य धात्ववयवसंयोगपूर्वकत्वात् अजादिप्रत्यये परे इयङ् भवतीति न यण् ।

| | एकवचन | द्विवचन | वहुवचन | |
|--|------------|-------------|-------------|-------|
| ल० | सुश्रियि | सुश्रियोः | सुश्रीषु | अधि० |
| | हे सुश्रीः | हे सुश्रियौ | हे सुश्रियः | सम्बो |
| एवं एवं क्रीणातीति 'यवक्री' पामधी इत्यादयः । | | | | |

[३९] ईकारान्तः पुँल्लिङ्गः 'शुद्धधी' शब्दः (विमल बुधिवाला)

| | | | | |
|-------|-------------|---------------|--------------|---------|
| प्र० | शुद्धधीः | शुद्धधियौ | शुद्धधियः | कर्त्ता |
| द्वि० | शुद्धधियम् | शुद्धधियौ | शुद्धधियः | कर्म |
| तृ० | शुद्धधिया | शुद्धधीभ्याम् | शुद्धधीभिः | करण |
| च० | शुद्धधिये | शुद्धधीभ्याम् | शुद्धधीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | शुद्धधियः | शुद्धधीभ्याम् | शुद्धधीभ्यः | अपा० |
| ष० | शुद्धधियः | शुद्धधियोः | शुद्धधियाम् | सम्ब० |
| ल० | शुद्धधियि | शुद्धधियोः | शुद्धधीषु | अधि० |
| | हे शुद्धधीः | हे शुद्धधियौ | हे शुद्धधियः | सम्बो० |

(१) ह्रस्वान्तत्वाभावात् सुलोपो न । (२) शुद्धा धीर्यस्येति विग्रहः, अङ्घ-
न्तत्वान्न सुलोपः । (३) 'गतिकारकेतरपूर्वपदस्य यण्नेष्यते' इति वचनेन शुद्ध-
शब्दस्य गतिकारकभिन्नत्वात् तत्पूर्वकस्य धीशब्दस्य न यणिति भावः । एवञ्च
सुश्रीशब्दवदजादौ इयङ्ङेवेति । शुद्धं=ब्रह्म तं ध्यायतीति विग्रहे तु कारकपूर्वत्वेन
स्यादेव यण्, एवञ्चाऽस्मिन्विग्रहे शुद्धधौ, शुद्धध्वः इत्यादि बोध्यम् । नच
'गतिकारके'ति पूर्वोक्तवार्तिकपाठे दुर्धियौ, दुर्धियः, इत्यादौ दुरित्यस्य ध्याधानुयोगे
गतिश्च' इति सूत्रेण गतित्वात् यण् कुतो नेति चेत् सत्यम् । 'यत् क्रियायुक्ताः
प्रादयस्तं प्रत्येव गत्युपसर्गसंज्ञा' इति वचनात् दुःस्थिता धीर्येषामिति विग्रहे दुःश-
ब्दार्थस्य (दुष्टत्वस्य) स्थाधात्वर्थेऽन्वयात् ध्याधात्वर्थेऽन्वयाभावेन गतित्वाभावात् ।
वृश्चिकभियौ, वृश्चिकभियः इत्यत्राऽपि यण् न शक्यः, 'विवक्षातः कारकाणि
भवन्ति' इति नचनादुक्तप्रयोगे बुद्धिकृताऽपादानस्याऽविवक्षणेन वृश्चिकस्य भोः
'वृश्चिकभोः' इति सम्बन्धसामान्ये षष्ठीसमासे 'षष्ठ्याः कारकत्वं न' इति कारक-
त्वाभावात् ।

[४०] ईकारान्तः पुंलिङ्गः 'सुधी' शब्दः (सुन्दर ध्यान करने वाला (पण्डित)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|------|----------|------------|-----------|---------|
| प्र० | सुधीः | सुधियौ | सुधियः | कर्त्ता |
| द्वि | सुधियम् | सुधियौ | सुधियः | कर्म |
| तृ० | सुधिया | सुधीभ्याम् | सुधीभिः | करण |
| च० | सुध्ये | सुधीभ्याम् | सुधीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुधियः | सुधीभ्याम् | सुधीभ्यः | अपा० |
| ष० | सुधियः | सुधियोः | सुधियाम् | सम्ब० |
| स० | सुधियि | सुधियोः | सुधीषु | अधि० |
| | हे सुधीः | हे सुधियौ | हे सुधियः | सम्बो० |

[४१] सखायमिच्छतीति विग्रहे ईकारान्तः पुंलिङ्गः 'सखी' शब्दः
(मित्र को चाहनेवाला)

| | सखा | सखायौ | सखायः | कर्त्ता |
|-------|--------|-----------|---------|---------|
| प्र० | सखा | सखायौ | सखायः | कर्त्ता |
| द्वि० | सखायम् | सखायौ | सख्यः | कर्म |
| तृ० | सख्या | सखीभ्याम् | सखीभिः | करण |
| च० | सख्ये | सखीभ्याम् | सखीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सख्युः | सखीभ्याम् | सखीभ्यः | अपा० |

(१) सुष्टु ध्यायति, सु=शोभना धीर्यस्येति वा सुधीः । अङ्चयन्तत्वान्न सु-
लोपः । (२) 'न भूसुधियोः' इति यणनिषेधात् अजादौ सर्वत्र इयङ् । (३)
सखायमिच्छतीत्यर्थे 'सुप आत्मनः' इति क्यचि 'अकृतसार्वधातुक्रयोरि'ति दीर्घे
तिपि 'सखीयति' ततः क्तिप् 'अतो लोपः' इति अकारस्य 'लोपोन्योरिति ।
यकारस्य च लोपः । यलोपे कर्तव्ये अलोपस्य स्थानिवत्त्वन्तु न 'नपदान्ते'ति निषे-
धात्, एवमल्लोपस्य स्थानिवत्त्वात् यणोपि न 'कौ लुप्तं न स्थानिवत्' इति निषे-
धात् । ततः सौ 'एकदेशविकृतमनन्यवत्' इति परिभाषया (स्थानिवद्भावेनेत्यर्थः)
'अनङ् सौ'इत्यनेन विधीयमानोऽनङादेशः ईदन्त 'सखी' शब्दस्यापि भवतीति
(४) 'सख्युरसम्बुद्धौ । (५) 'एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य । (६) 'ख्यत्यात्परस्य' ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|----------------------|----------|----------|--------|
| पं० | सख्युः | सख्योः | सख्याम् | सम्ब० |
| स० | सख्यौ | सख्योः | सखीषु | अधि० |
| | हे ^२ सखीः | हे सखायौ | हे सखायः | सम्बो० |

[४२] ईकारान्तः पुंलिङ्गः 'सखी' शब्दः (देवताओं को चाहने वाला) (सह खेन प्रवर्तत इति सखः तमिच्छतीति सखीः)

| | | | | |
|-------|---------|-----------|----------|---------|
| प्र० | सखीः | सख्यौ | सख्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | सख्यम् | सख्यौ | सख्यः | कर्म |
| तृ० | सख्या | सखीभ्याम् | सखीभिः | करण |
| च० | सख्ये | सखीभ्याम् | सखीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सख्युः | सखीभ्याम् | सखीभ्यः | अपा० |
| ष० | सख्युः | सख्योः | सख्याम् | सम्ब० |
| स० | सखिय | सख्योः | सखीषु | अधि० |
| | हे सखीः | हे सख्यौ | हे सख्यः | सम्बो० |

एवं सुखी-सुतीः-लूनीः-क्षामीः-प्रस्तमीः ।

(१) 'औत्' । (२) ह्रस्वत्वाभावात् गुणः । (३) खः=स्वर्गः, तेन सह प्रवर्तत इति विग्रहे 'तेन सहेति तुल्ययोगे' इति बहुव्रीहिः । 'वोपसर्जनस्य' इति सभावः । ततः सखमात्मान इच्छतीत्यर्थे क्यच् ईत्वम् किप् अत्लोपयलोपौ 'सखी' शब्दः (४) अड्यन्तत्वात् सुलोपः । अत्र 'सखी' शब्दे एकदेशविकृतन्यायेन (स्थानि-वद्भावेन) सखशब्दस्यैवानयनम्भवेदिति नानङ्णिद्वद्भावौ भवतः (५) अजादौ- 'एरनेकाच्चः' इति यणिति बोध्यम् । (६) 'ख्यत्यात्परस्य' । (७-९) लृञ् × कः, 'त्वादिभ्यः' इति नत्वम्, क्यचि ईत्वादिः । क्षै × कः, आत्वं, 'क्षायो मः' इति मः क्यचि, ईत्वादिः । स्तयै × कः, आत्वं 'प्रस्तोऽन्यतरस्याम्' इति मः 'स्तयः प्रपूर्वस्य' इति सम्प्रसारणं, पूर्वरूपं, 'हलः' इति दीर्घः, क्यचि ईत्वादिः । एषां शब्दानामपि षष्ठी नत्वमत्वयोरसिद्धत्वात् 'ख्यत्यादित्युत्वं भवतीति ध्येयम् ।

[४३] ईकारान्तः पुँल्लिङ्गः 'शुष्की' शब्दः (निःसार को चाहने वाला)

| | | | | |
|-------|------------------------|--------------------------|-------------------------|----------------|
| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| प्र० | शुष्कीः | शुष्कियौ | शुष्कियः | कर्ता |
| द्वि० | शुष्कियम् | शुष्कियौ | शुष्कियः | कर्म |
| तृ० | शुष्किया | शुष्कीभ्याम् | शुष्कीभिः | करण |
| च० | शुष्किये | शुष्कीभ्याम् | शुष्कीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | शुष्कियः | शुष्कीभ्याम् | शुष्कीभ्यः | अपा० |
| ष० | शुष्कियः | शुष्कियोः | शुष्कियाम् | सम्ब० |
| स० | शुष्कियि हे शुष्कीः | शुष्कियोः हे शुष्कियौ | शुष्कीषु हे शुष्कियः | अधि० सम्बो० |

एवं पकीः, पकियौ, पकियः इत्यादि ।

[४४] उकारान्तः, पुँल्लिङ्गः 'शम्भु' शब्दः (भगवान् शङ्कर)

| | | | | |
|-------|-------------------|---------------------|----------------------|----------------|
| प्र० | शम्भुः | शम्भू | शम्भवः | कर्ता |
| द्वि० | शम्भुम् | शम्भू | शम्भून् | कर्म |
| तृ० | शम्भुना | शम्भुभ्याम् | शम्भुभिः | करण० |
| च० | शम्भवे | शम्भुभ्याम् | शम्भुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | शम्भोः | शम्भुभ्याम् | शम्भुभ्यः | अपा० |
| ष० | शम्भोः | शम्भवोः | शम्भुनाम् | सम्ब० |
| स० | शम्भौ हे शम्भो | शम्भवोः हे शम्भू | शम्भुषु हे शम्भवः | अधि० सम्बो० |

एवं विष्णु-वायु-मान-सान्-मान-पांसु-प्रभृतयः ।

- (१) शुष्धातोः कः 'शुष्कः कः' इति निष्ठातस्य कः । शुष्कमात्मन इच्छतीत्यर्थे क्यञि, ईत्वम् । पुनः क्यजन्तात् क्विप् अल्लोपयलोपौ 'शुष्की'रिति । अल्ल्यन्त-त्वात् सुलोपः । (२) संयोगपूर्वकत्वात् यण्, किन्त्वजादौ सर्वत्रेयङिति बोध्यम् । (३) कृतयणादेशत्वाभावेन कत्वस्यासिद्धत्वात् 'ख्यत्यादि'त्युत्पन्न । एवं 'पकीः' इत्यत्र "पचो वः" इति निष्ठातस्य वत्वम्बोध्यम् । (४) प्रथमयोः पूर्वसवर्णः । (५) जधि च । (६) अमि पूर्वः । (७) 'शेषो ध्यसखि' । आडो नाऽन्नियाम् । (८) घेङिति । (९) 'हसिहसोश्च । (१०) 'अच्च घेः' । (११) 'हस्वस्य' गुणः ।

[४५] उकारान्तः पुंलिङ्गः 'क्रोष्टु' शब्दः (गीदङ्)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------------------------|------------------------|---------------|---------|
| प्र० | क्रोष्टा | क्रोष्टारौ | क्रोष्टारः | कर्ता |
| द्वि० | क्रोष्टारम् | क्रोष्टारौ | क्रोष्टून् | कर्म |
| तृ० | { क्रोष्ट्रा क्रोष्टुना | क्रोष्टुभ्याम् | क्रोष्टुभिः | करण |
| च० | { क्रोष्ट्रे क्रोष्ट्रवे | क्रोष्टुभ्याम् | क्रोष्टुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { क्रोष्टुः क्रोष्टोः | क्रोष्टुभ्याम् | क्रोष्टुभ्यः | अपा० |
| ष० | { क्रोष्टुः क्रोष्टोः | क्रोष्टोः क्रोष्टोः | क्रोष्टूनाम् | सम्ब० |
| ल० | { क्रोष्टरि क्रोष्टौ | क्रोष्टोः क्रोष्टोः | क्रोष्टुषु | अधि० |
| | हे क्रोष्टो | हे क्रोष्टारौ | हे क्रोष्टारः | सम्बो० |

[४६] उकारान्तः पुंलिङ्गः 'हृह्र' शब्दः (गन्धर्व)

| | हृह्रः | हृह्रौ | हृह्रः | कर्त्ता |
|-------|---------|--------|---------|---------|
| प्र० | हृह्रः | हृह्रौ | हृह्रः | कर्त्ता |
| द्वि० | हृह्रम् | हृह्रौ | हृह्रन् | कर्म |

(१) क्रुशधातोः सितनिगमिमसिसच्यविधान्कुशिभ्यस्तुन्' इति तुन्, प्रत्यये 'म्रश्चे'ति षत्वस्य ष्ट्वेन टकारे 'क्रोष्टु'शब्दः, ततः 'तृज्वत्क्रोष्टुः' । ऋदुशनस्फुर-
दंसोऽऽनेहर्सा च । 'अप्तुन्तृच्स्वसुनप्तुनेष्टृत्त्रष्टृक्षत्तृहोतृपोतृप्रशास्तृणाम्' । (२)
'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः । (३) विभापातृतीयादिष्वचि' । यण् । तृज्वद्भावाऽभा-
वपक्षे 'शम्भुवत् घिसंज्ञादिकार्यं बोध्यम् । (५) 'ऋत उत्' । 'रात्सस्य' । (६)
'नुमचिरतृज्वद्भावेभ्यो नुट् पूर्वविप्रतिषेधेन' इति तृज्वत्त्वं बाधित्वा नुटि कृते 'ना-
मी'ति दीर्घः । (७) 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' । तृज्वत्त्वाऽभावपक्षे हलादौ
च 'शम्भुवत् कार्यं बोध्यम् । (८) अव्युत्पन्नप्रातिपदिकमेतत् । (९) 'दीर्घा-
ज्जाधिचे'ति दीर्घनिषेधात् 'इको यणचो'ति यण् । एवंचाजादौ सर्वत्रानेन यणिति
भ्येयम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|------------|-------------|------------|---------|
| रु० | ह्रद्वा | ह्रद्भ्याम् | ह्रद्भिः | करण |
| च० | ह्रद्वे | ह्रद्भ्याम् | ह्रद्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | ह्रद्वः | ह्रद्भ्याम् | ह्रद्भ्यः | अपा० |
| ष० | ह्रद्वः | ह्रद्वोः | ह्रद्वाम् | सम्प्र० |
| स० | ह्रद्विः | ह्रद्वोः | ह्रद्वषुः | अधि० |
| | हे ह्रद्वः | हे ह्रद्वौ | हे ह्रद्वः | सम्बो० |

[४७] ऊकारान्तः पुंलिङ्गः 'अतिचमू' शब्दः (सेनाको जीतनेवाला)

| | | | | |
|-------|------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | अतिचमूः | अतिचम्वौ | अतिचम्वः | कर्त्ता |
| द्वि० | अतिचमूम् | अतिचम्वौ | अतिचमून् | कर्म |
| रु० | अतिचम्वाम् | अतिचमूभ्याम् | अतिचमूभिः | करण |
| च० | अतिचम्वै | अतिचमूभ्याम् | अतिचमूभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अतिचम्वाम् | अतिचमूभ्याम् | अतिचमूभ्यः | अपा० |
| ष० | अतिम्वाम् | अतिचम्वोः | अतिचमूनाम् | सम्ब० |
| स० | अतिचम्वाम् | अतिचम्वोः | अतिचमूषुः | अधि० |
| | हे अतिचमु | हे अतिचम्वौ | हे अतिचम्वः | सम्बो० |

[४८] ऊकारान्तः पुंलिङ्गः 'खलपू' शब्दः
(खलिहान को बुहारनेवाला)

| | | | | |
|-------|----------|------------|---------|---------|
| प्र० | खलपूः | खलप्वौ | खलप्वः | कर्त्ता |
| द्वि० | खलप्वम् | खलप्वौ | खलप्वः | कर्म |
| रु० | खलप्वाम् | खलपूभ्याम् | खलपूभिः | करण |

(१) ह्रस्वान्तत्वामान्न सुट् । (२) चमूमतिकान्तः 'अतिचमूः' स्त्रीप्रत्ययान्तत्वाभावात् सुलोपः । (३) 'प्रथमलिङ्गप्रहणञ्च' अत्र सर्वस्मिन् प्रयोगे 'बहुश्रे-यसीशब्दवत् नदीकार्यं बोध्यम् । (४) खलं पुनातीति विप्रदे पूजः क्विप् । (५) 'ओः सुपि' अत्र 'गतिकारकेतरपूर्वपदस्य यण् नेष्यते' इति वार्तिकमध्यनुवर्त्तत इति बोध्यम् । अत्र प्रयोगे उवङि प्राप्ते कारकपूर्वकत्वाद्नेन यण् । इह अजादौ सर्वत्र 'एरनेकाचः' इति यणोऽसम्भवात् उवङि प्राप्ते अनेन यण् इति

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|----------|------------|-----------|---------|
| च० | खलष्वे | खलपूभ्याम् | खलपूभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | खलष्वः | खलपूभ्याम् | खलपूभ्यः | अपा० |
| ष० | खलष्वः | खलष्वोः | खलष्वाम् | सम्ब० |
| स० | खलष्वि | खलष्वोः | खलपूषु | अधि० |
| | हे खलपूः | हे खलष्वौ | हे खलष्वः | सम्बो० |

एवं सुलू-केदारलू-आदयः ऊदन्ताः ।

[४९] ऊकारान्तः पुँल्लिङ्गः 'स्वभू' शब्दः (ब्रह्मा)

| | | | | |
|-------|-----------|-------------|------------|---------|
| प्र० | स्वभूः | स्वभुवौ | स्वभुवः | कर्त्ता |
| द्वि० | स्वभुवम् | स्वभुवौ | स्वभुवः | कर्म |
| तृ० | स्वभुवा | स्वभूभ्याम् | स्वभूभिः | करण |
| च० | स्वभुवे | स्वभूभ्याम् | स्वभूभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | स्वभुवः | स्वभूभ्याम् | स्वभूभ्यः | अपा० |
| ष० | स्वभुवः | स्वभुवोः | स्वभुवाम् | सम्ब० |
| स० | स्वभुवि | स्वभुवोः | स्वभूषु | अधि० |
| | हे स्वभूः | हे स्वभुवौ | हे स्वभुवः | सम्बो० |

एवं कटप्रू-स्वयम्भू-लू-दृग्भू-काराभू-प्रभृतयः ।

(एषां स्त्रियामप्येवमेव रूपाणि भवन्ति)

[५०] ऊकारान्तः पुँल्लिङ्गो 'वर्षाभू' शब्दः (मेढक)

| | | | | |
|------|----------|-----------|-----------|---------|
| प्र० | वर्षाभूः | वर्षाभ्वौ | वर्षाभ्वः | कर्त्ता |
|------|----------|-----------|-----------|---------|

निश्चितम् । इयदुवहौ, इति । 'एरनेकाचः' इति, 'भोः सुपि' इति च सर्वत्र पूर्वद्वय-
सवर्णदीर्घापवादाः भवन्तीति न विस्मर्तव्यम् । (१) स्वस्माद्भवतीति स्वभूः
भूधातोः क्विप् । (२) कारकपूर्वकत्वात् यणि प्राप्ते 'न भूसुधियोः' इति निषे-
धात्-ठवड् । (३) वर्षासु भवतीति वर्षाभूः । (वर्षा शब्दो नित्यखिलिङ्गबहु-
वचनान्तः) 'न भूसुधियोः' इति यणनिषेधे 'वर्षा भ्वश्च' इति यण् । इदम-
जादाद्यत्र सर्वत्र भवतीति सिद्धान्तः ।

| | | | | |
|-------|-------------|---------------|-------------|---------|
| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| द्वि० | वर्षाभवम् | वर्षाभवौ | वर्षाभवः | कर्म |
| तृ० | वर्षाभवा | वर्षाभूम्याम् | वर्षाभूमिः | करण |
| च० | वर्षाभवे | वर्षाभूम्याम् | वर्षाभूम्यः | सम्प्र० |
| पं० | वर्षाभवः | वर्षाभूम्याम् | वर्षाभूम्यः | अपा० |
| ष० | वर्षाभवः | वर्षाभवोः | वर्षाभवाम् | सम्ब० |
| स० | वर्षाभिव | वर्षाभवोः | वर्षाभूषु | अधि० |
| | हे वर्षाभूः | हे वर्षाभवौ | हे वर्षाभवः | सम्बो० |

[५१] ऊकारान्तः पुंल्लिङ्गो 'हम्भू' शब्दः (ग्रन्थकार)

| | | | | |
|-------|-----------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | हम्भूः | हम्भवौ | हम्भवः | कर्ता |
| द्वि० | हम्भूम् | हम्भवौ | हम्भून् | कर्म |
| तृ० | हम्भवा | हम्भूम्याम् | हम्भूमिः | करण |
| च० | हम्भवे | हम्भूम्याम् | हम्भूम्यः | सम्प्र० |
| पं० | हम्भवः | हम्भूम्याम् | हम्भूम्यः | अपा० |
| ष० | हम्भवः | हम्भवोः | हम्भवाम् | सम्ब० |
| स० | हम्भिव | हम्भवोः | हम्भूषु | अधि० |
| | हे हम्भूः | हे हम्भवौ | हे हम्भवः | सम्बो० |

(१) हम्भतीति हम्भूः । 'अन्दू-हम्भू-जम्बूकफेल्ककन्दू-दिदिषू इत्युणादिसूत्रेण 'हभी ग्रन्थे' इत्यस्माद्धातोः निपातनात् ऊप्रत्ययः नुमागमश्च भवति । ततः जुमो नकारस्य 'नश्चापदान्तस्येत्यनुस्वारः 'अनुस्वारस्य ययी'ति तस्य परसवर्णो मकारः 'हम्भू' इति । (२) ऊकारस्य घात्ववयवत्वाभावेन उवङादेशस्य 'ओः सुपि' इति यणादेशस्य च प्रवृत्त्यभावात् 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' इति दीर्घः प्राप्तः तस्य 'दीर्घाज्जसि च' इति निषेधे 'इको यणचि' इत्यनेन यण् । एवमजादौ सर्वत्र 'इको यणचि' इत्यनेन हम्भूशब्दे यणादेशो बोध्यः । 'हन्करे'ति यण् तु न 'अर्धवद्ग्रहणे'ति परिभाषया हम्भूषट्कभूशब्दस्याऽनर्थकत्वेनाग्रहणात् । (३) यणं बाधित्वा 'अभिपूर्वः' । (४) यणं बाधित्वा पूर्वसवर्णदीर्घं नत्वम् ।

[५२] ऊकारान्तः पुँल्लिङ्गो 'दृन्भृ' शब्दः (तरु, सर्प वा बानर)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------|--------------|------------|---------|
| प्र० | दृन्भूः | दृन्भवौ | दृन्भवः | कर्त्ता |
| द्वि० | दृन्भवम् | दृन्भवौ | दृन्भवः | कर्म |
| तृ० | दृन्भवा | दृन्भूम्याम् | दृन्भूमिः | करण |
| च० | दृन्भवे | दृन्भूम्याम् | दृन्भूभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | दृन्भवः | दृन्भूम्याम् | दृन्भूभ्यः | अपा० |
| ष० | दृन्भवः | दृन्भवोः | दृन्भवाम् | सम्ब० |
| स० | दृन्भिव | दृन्भवोः | दृन्भूषु | अधि० |
| | हे दृन्भूः | हे दृन्भवौ | हे दृन्भवः | सम्बो० |

एवं सुलू-करभू-पुनर्भू-इत्यादयः । (एषां स्त्रियामप्येवमेव रूपं भवति

[५३] ऋकारान्तः पुँल्लिङ्गो 'धातृ' शब्दः (रक्षक, ब्रह्मा)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------|------------|----------|---------|
| प्र० | धाता | धातारौ | धातारः | कर्त्ता |
| द्वि० | धातारम् | धातारौ | धातृन् | कर्म |
| तृ० | धात्रा | धातृभ्याम् | धातृभिः | करण |
| च० | धात्रे | धातृभ्याम् | धातृभ्यः | सम्प्र० |

(१) 'दृन्' इति नान्तमव्ययं हिंसायां वर्तते, तस्मिन्नुपपदे भूधातोः क्विप् । दृन्=हिंसा, भवते=प्राप्नोतीति विग्रहः । स्वाभाविक एवात्र नकारः, अत एव तस्यापदान्तत्वात् 'नश्वापदान्तस्ये'ति नानुस्वारः । परसवर्णश्च न । (२) 'न भू-सुधियोः' इति यण्निषेधे प्राप्ते 'दृन्करपुनः पूर्वस्य भुवो यण्वक्तव्यः' । (३) पूर्वरूपं वाधित्वा यण् । (४) पूर्वसवर्णदीर्घं वाधित्वा यण् । (५) दधातीति धाता 'डुधाञ् धारणपोषणयोः' तस्मात् तृज् तृन्वा । क्रोष्टु शब्दवत् अनङ्=दीर्घ-सुलोप-नलोपाः । (६) 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' इति गुणे 'अप्तृन्वि'ति दीर्घः । ननु धातृशब्दस्यौणादिकशंसिक्षदादितृन्तृजन्तत्वात् 'अप्तृन्वि'ति दीर्घो न स्यात्, 'औणादिकेषु नप्त्रादिसप्तानामेव तृन्तृजन्तानां दीर्घः'इति वक्ष्यमाणनियमस्य जागरूकत्वादिति चेन्न । धाञ् धातोः शंसिक्षदादित्वकल्पनायां मानामावेन धातृशब्दस्यौणादिकत्वाऽभावात् । (७) पूर्वसवर्णदीर्घः नत्वम् । (८-९) 'इको यणचि' ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|---------|------------|-----------|--------|
| पं० | धातुः | धातृभ्याम् | धातृभ्यः | अपा० |
| ष० | धातुः | धात्रोः | धातृणाम् | सम्ब० |
| न० | धातरि | धात्रोः | धातृषु | अधि० |
| | हे धातः | हे धातारौ | हे धातारः | सम्बो० |

एवं नष्टृ-नेष्टृ-त्वष्टृ-क्षृत्-होत्-पोत्-प्रशास्तृ-ज्ञात्-उद्गात्-
नेत्-प्रभृतयः ।

[५४] ऋकारान्तः पुंलिङ्गः 'पितृ' शब्दः (पिता)

| | | | | |
|-------|---------|------------|----------|---------|
| १० | पितॄ | पितरौ | पितरः | कर्त्ता |
| द्वे० | पितरम् | पितरौ | पितॄन् | कर्म |
| तृ० | पित्रा | पितृभ्याम् | पितृभिः | करण |
| च० | पित्रे | पितृभ्याम् | पितृभ्यः | सम्प्र० |
| १० | पितुः | पितृभ्याम् | पितृभ्यः | उपा० |
| १० | पितुः | पित्रोः | पितृणाम् | सम्ब० |
| १० | पितरि | पित्रोः | पितृषुः | अधि० |
| | हे पितः | हे पितरौ | हे पितरः | सम्बो० |

(१-२) 'ऋत उत्' । 'रात्सस्य' । विसर्गः । (३) 'ह्रस्वनद्यापो नुट् नामि' इति दीर्घः । 'ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम्' इति णत्वम् । (४) पातीति पेटा, पाधातोः 'नष्टृ-नेष्टृ-त्वष्टृ-होत्-पोत्-भ्रात्-जामात्-मात्-पितृ-दुहितृ-त्युणादिसूत्रेण निपातनात् तृचि आकारस्य इत्वे च 'पितृ'शब्दः, तस्मात् सौ धातु-त् अनङ्-दीर्घ-सुलोप-नलोपादिकार्यं ज्ञेयम् । (५) 'ऋतो ङीति गुणः । अप्तृञिगति दीर्घस्तु न तप्त्रादिप्रहणस्य नियमार्थत्वात्, तथाहि—व्युत्पत्तिपक्षे वृञन्तत्वात् वृञन्तत्वाद्वा दीर्घसिद्धे नप्त्रादिप्रहणं व्यर्थं, तदेव व्यर्थीभूय ज्ञापयति-उणादिनिष्पन्नानां नृन्तृच्प्रत्ययान्तानां दीर्घश्चेत् नप्त्रादिसप्तानामेव' तेन पितृ-भात्-मात्रादीनां दीर्घो न । उणादिनिष्पन्नानामित्युक्तत्वात् कर्त्ता, कर्त्तारौ, कर्त्तारः इत्यादौ नाऽव्याप्तिः । अव्युत्पत्तिपक्षे तु अप्-तृच्-तृज ५ दीर्घ शक्यैव नास्तीति । भावः । अन्यत् कार्यं धातृशब्दज्ञेयम् ।

[५५] ऋकारान्तः पुंल्लिङ्गो 'भ्रातृ' शब्दः (भाई)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------|--------------|------------|---------|
| प्र० | भ्राता | भ्रातरौ | भ्रातरः | कर्त्ता |
| द्वि० | भ्रातरम् | भ्रातरौ | भ्रातृन् | कर्म |
| तृ० | भ्रात्रा | भ्रातृभ्याम् | भ्रातृभिः | करण |
| च० | भ्रात्रे | भ्रातृभ्याम् | भ्रातृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | भ्रातुः | भ्रातृभ्याम् | भ्रातृभ्यः | अपा० |
| ष० | भ्रातुः | भ्रात्रोः | भ्रातृणाम् | सम्ब० |
| स० | भ्रातरि | भ्रात्रोः | भ्रातृषु | अधि० |
| | हे भ्रातः | हे भ्रातरौ | हे भ्रातरः | सम्बो० |

[५६] ऋकारान्तः पुंल्लिङ्गो 'जामातृ' शब्दः (जमाय बाबू)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------|--------------|------------|---------|
| प्र० | जामाता | जामातरौ | जामातरः | कर्त्ता |
| द्वि० | जामातरम् | जामातरौ | जामातृन् | कर्म |
| तृ० | जामात्रा | जामातृभ्याम् | जामातृभिः | करण |
| च० | जामात्रे | जामातृभ्याम् | जामातृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | जामातुः | जामातृभ्याम् | जामातृभ्यः | अपा० |
| ष० | जामातुः | जामात्रोः | जामातृणाम् | सम्ब० |
| स० | जामातरि | जामात्रोः | जामातृषु | अधि० |
| | हे जामातः | हे जामातरौ | हे जामातरः | सम्बो० |

[५७] ऋकारान्तः पुंल्लिङ्गः 'नृ' शब्दः (मनुष्य)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|------|-------|---------|--------|---------|
| प्र० | नृ | नरौ | नरः | कर्त्ता |

(१) भ्राजते इति भ्राता, 'नप्तृ-नेष्टृ' इत्युणादिसूत्रेण निपातनात् भ्राजेस्तृच् जलोपश्च । अन्यत् पितृ शब्दवत् । (२) जायां मातीति जामाता, उचोणादिसूत्रेण निपातनात्तृच् यलोपश्च । अन्यत् कार्यं भ्रातृवत् । (३) 'नयतेर्दिच्च' इति ऋप्रत्ययान्तो नृशब्दः 'ऋदुसनस्' इत्यनङ् । 'अप्तृभिर्गति' सूत्रेऽनन्तर्भावात् 'सर्वनामस्थाने चे'ति नान्तत्त्वप्रयुक्तदीर्घे 'इल्ल्यादि'ति सुलोपे नलोपः । (४) 'ऋतो ली'ति गुणः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---|----------|--------------------|---------|
| द्वि० | नरम् | नरौ | नृन् | कर्म |
| तृ० | त्रा | नृभ्याम् | नृभिः | करण |
| च० | त्रे | नृभ्याम् | नृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | तुः | नृभ्याम् | नृभ्यः | अपा० |
| ष० | तुः | त्रोः | { नृणाम् नृणाम् | सम्ब० |
| स० | नरि | त्रोः | नृषु | अधि० |
| | हे नः | हे नरौ | हे नरः | सम्बो० |
| | [५८] ऋकारः पुंलिङ्गः 'ऋ' शब्दः (वेद-माता) | | | |
| प्र० | आ | अरौ | अरः | कर्त्ता |
| द्वि० | अरम् | अरौ | ऋन् | कर्म |
| तृ० | रा | ऋभ्याम् | ऋभिः | करण |
| च० | रे | ऋभ्याम् | ऋभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | उः | ऋभ्याम् | ऋभ्यः | अपा० |
| ष० | उः | रोः | ऋणाम् | सम्ब० |
| स० | अरि | रोः | ऋषु | अधि० |
| | हे अः | हे अरौ | हे अरः | सम्बो० |
| | [५९] ऋकारान्तः पुंलिङ्गः 'कृ' शब्दः (कृ धातु) | | | |
| प्र० | कीः | किरौ | किरः | कर्त्ता |
| द्वि० | किरम् | किरौ | किरः | कर्म |

(१) पूर्वसवर्णदीर्घे नत्वम् । (२) टादावचि यण् । (३) ङसि-ङसोः

'ऋत उत्' इत्युत्वे 'रात्सस्य' इति सलोपे विसर्गः । (४) नुटि 'नृ च' इति दीर्घविकल्पे 'ऋवर्णान्नस्ये'ति णत्वम् । (५) प्रसङ्गादिदं लिखितं 'नृ' शब्दवत्

साधनकार्यम्बोध्यम् । (६) 'कृ विक्षेपे' इति धातुः तस्यानुकरणमेतत् 'कृ' इति, प्रहृतवदनुकरणं भवति इति पक्षे 'ऋत इद्वातोः' इति इत्वे 'वीरुपधायाः' इति दीर्घे हल्ङ्यादिलोपे विसर्गः । (७) अपदान्तत्वात् 'वीरुपधायाः' इति न दीर्घः

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|--------|----------|----------|---------|
| तृ० | किरा | कीभ्याम् | कीभिः | करण |
| च० | कीरे | कीभ्याम् | कीर्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | किरः | कीभ्याम् | कीर्भ्यः | अपा० |
| ष० | किरः | किरोः | किराम् | सम्ब० |
| स० | किरि | किरोः | कीर्षु | अधि० |
| | हे कीः | हे किरौ | हे किरः | सम्बो० |

[६०] 'प्रकृतवदनुकरणम्' इत्यस्यानित्यत्वात् धातुत्वाभावेन,

इत्वाभावपक्षे 'कृ' शब्दः

| | प्र० | द्वि० | तृ० | च० | पं० | ष० | स० | |
|--|--------|--------|----------|----------|----------|----------|----------|---------|
| | कृः | कृम् | क्रा | क्रे | क्रैः | क्रः | क्रि | कर्त्ता |
| | कृः | कृम् | कृभ्याम् | कृभ्याम् | कृभ्याम् | कृभ्याम् | कृभ्याम् | कर्म |
| | कृभिः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | करण |
| | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | सम्प्र० |
| | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | अपा० |
| | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | सम्ब० |
| | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | अधि० |
| | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | कृभ्यः | सम्बो० |

[६१] ऋकारान्तः पुंल्लिङ्गः 'तृ' शब्दः (तृ धातु)

| | प्र० | द्वि० | तृ० | च० | पं० | ष० | स० | |
|--|------|-------|------|------|------|------|------|---------|
| | तीः | तिरम् | तिरौ | तिरौ | तिरौ | तिरौ | तिरौ | कर्त्ता |
| | तिरौ | तिरौ | तिरौ | तिरौ | तिरौ | तिरौ | तिरौ | कर्म |

(१) भ्यामादिषु 'स्वादिष्विति पदत्वात् दीर्घः । अत्र सर्वेषु प्रयोगेषु 'ऋत इद्धातोः' इत्यनेन इत्वं बोध्यम् । (२) अनुकरणस्य धातुत्वाभावात् 'ऋत इद्धातोः' इति इत्वाभावपक्षे सतीत्यर्थः । (३) 'ऋदुशनस' इति 'ऋतोडि' इति च तपरकरणात् कृशब्दे अनङ्-गुणौ न । (४) अमि पूर्वरूपं शसि दीर्घं नत्वं च वर्जयित्वा अजादौ सर्वत्र यण् । (५) 'ऋत उत्' इत्यत्र तपरकरणादुत्वमपि नेति द्रष्टव्यम्, अत एव 'श्रो यडि' इति निर्देशसङ्गच्छते । (६) दीर्घान्तत्वात् 'ह्रस्वनथापः' इति न नुट् । (७) ५९ कृ शब्दवत् कार्यं बोध्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|--------|------------|----------|---------|
| तृ० | तिरा | तीर्भ्याम् | तीर्भिः | करण |
| च० | तिरे | तीर्भ्याम् | तीर्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | तिरः | तीर्भ्याम् | तीर्भ्यः | अपा० |
| ष० | तिरः | तिरोः | तिराम् | सम्ब० |
| स० | तिरि | तिरोः | तीर्षु | अधि० |
| | हे तीः | हे तिरौ | हे तिरः | सम्बो० |

[६२] प्रकृतिवदनुकरणमित्यस्यानित्यत्वात् घातुत्वाभावेन

इत्वाभावेपक्षे 'तृ' शब्दः

| | तृः | त्रौ | त्रः | कर्त्ता |
|-------|--------|----------|---------|---------|
| प्र० | तृः | त्रौ | त्रः | कर्त्ता |
| द्वि० | तृम् | त्रौ | तृन् | कर्म |
| तृ० | त्रा | तृभ्याम् | तृभिः | करण |
| च० | त्रे | तृभ्याम् | तृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | त्रैः | तृभ्याम् | तृभ्यः | अपा० |
| ष० | त्रः | त्राः | त्राम् | सम्ब० |
| स० | त्रि | त्रोः | तृषु | अधि० |
| | हे तृः | हे त्रौ | हे त्रः | सम्बो० |

[६३] लकारः पुंल्लिङ्गः 'लृ' शब्दः (देव-माता)

| | लौ | लौ | अलः | कर्त्ता |
|-------|-----|---------|------|---------|
| प्र० | लौ | लौ | अलः | कर्त्ता |
| द्वि० | लम् | लौ | लन् | कर्म |
| तृ० | ला | लभ्याम् | लभिः | करण |

(१) ६० 'कृ' शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । अत्राऽपि अमि पूर्वरूपं शसि दीर्घं नत्वं च वर्जयित्वा सर्वत्र यण् स्यादिति ध्येयम् । (२) ६० कृ वत् कार्यं ज्ञेयम् । (३) प्रसङ्गात् लृ शब्दस्य रूपं लिखितम् । लृ शब्दात् सौ ऋलृवर्णयोः सावर्ण्यात् 'ऋदुसनस' इत्यनङ्, दीर्घ, सुलोप, नलोपाः । (४) 'ऋतो ङी'ति गुणोऽकारः लपरः । (५) लृवर्णस्य दीर्घाभावात् ऋवर्ण एव दीर्घः । (६) टादावचि यण् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|---------|---------|--------|---------|
| च० | ले | लभ्याम् | लभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | उल्लं | लभ्याम् | लभ्यः | अपा० |
| ब० | उल्ल | लोः | ऋणाम् | सम्ब० |
| स० | अलि | लोः | ल्लु | अधि० |
| | हे अल्ल | हे अलौ | हे अलः | सम्ब० |

[६४] लृकारान्तः 'गम्लृ' शब्दः ।

| | | | | |
|-------|----------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | गमाँ | गमलौ | गमलः | कर्त्ता |
| द्वि० | गमल्लम् | गमलौ | गम्लृन् | कर्म |
| तृ० | गम्ला | गम्लृभ्याम् | गम्लृभिः | करण |
| च० | गम्ले | गम्लृभ्याम् | गम्लृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | गमुल्ल | गम्लृभ्याम् | गम्लृभ्यः | अपा० |
| ब० | गमुल्ल | गम्लोः | गम्लृणाम् | सम्ब० |
| स० | गमलि | गम्लोः | गम्लृषु | अधि० |
| | हे गमल्ल | हे गमलौ | हे गमलः | सम्ब० |

[६५] लृकारान्तः पुंलिङ्गः 'शकलृ' शब्दः ।

| | | | | |
|-------|---------|------------|----------|---------|
| प्र० | शकाँ | शकलौ | शकलृः | कर्त्ता |
| द्वि० | शकल्लम् | शकलौ | शकलृन् | कर्म |
| तृ० | शकला | शकलृभ्याम् | शकलृभिः | करण |
| च० | शकले | शकलृभ्याम् | शकलृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | शकुल्ल | शकलृभ्याम् | शकलृभ्यः | अपा० |
| ब० | शकुल्ल | शकलोः | शकलृणाम् | सम्ब० |

(१) लृचि लृसोः 'ऋत उत्' । संयोगान्तलोपः । (२) सावर्ण्यात् लृवर्णस्य ऋवर्ण एव दीर्घः । 'ऋवर्णान्नस्ये'ति णत्वम् । (३) 'गम्लृ गतौ' इत्यस्यानु-
करणम् । लृ वत् कार्यं ज्ञेयम् । (४) 'शकलृ शकौ' इत्यस्य अनुकरणमेतत् ।
लृशब्दवत् कार्यं बोध्यम् ।

एकवचन द्विवचन बहुवचन

| | | | | |
|----|-----------------|-------------------|---------------------|----------------|
| स० | शकलि हे शकल् | शक्लौः हे शकलौ | शकल्लेषु हे शकलः | अधि० सम्बो० |
|----|-----------------|-------------------|---------------------|----------------|

[६६] एकारान्तः पुंलिङ्गः 'से' शब्दः ।

(कामदेव अथवा लक्ष्मी के साथ रहने वाला)

| | | | | |
|-------|--------------|----------------|----------------|----------------|
| प्र० | सैः | सयौ | सयैः | कर्त्ता |
| द्वि० | सयम् | सयौ | सयः | कर्म |
| तृ० | सया | सेभ्याम् | सेभिः | करण |
| च० | सये | सेभ्याम् | सेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सैः | सेभ्याम् | सेभ्यः | अपा० |
| ष० | सैः | सयोः | सयाम् | सम्ब० |
| स० | सयि हे सै | सयोः हे सयौ | सेषु हे सयः | अधि० सम्बो० |

[६७] एकारान्तः पुंलिङ्ग 'स्मृते' शब्दः (लक्ष्मी को स्मरण करने वाला)

| | | | | |
|-------|----------|--------------|-----------|---------|
| प्र० | स्मृतेः | स्मृतयौ | स्मृतयः | कर्त्ता |
| द्वि० | स्मृतयम् | स्मृतयौ | स्मृतयः | कर्म |
| तृ० | स्मृतया | स्मृतेभ्याम् | स्मृतेभिः | करण |

(१) अः = विष्णुः, तस्यापत्यमिति विप्रहे 'अत इञ्' 'यस्येति च' इत्यकार-
लोपः 'इः' (कामः) इति । ततः इना सह वर्तते इति विप्रहे 'तेन सहेति तुल्ययोगे'
इति बहुव्रीहौ 'वोपसर्जनस्य' इति सहस्य सभावे गुणे 'से' इति । अथवा अस्य
स्त्री ई (लक्ष्मी), तथा सह वर्तते इति पूर्वोक्तप्रकारेण 'से' इति । ततः सुः, सत्व-
विसर्गौ । (२) ङसि-ङसं वजयित्वा अजादौ सर्वत्र अयादेशः । यदि 'से' इत्ये-
कादेशस्य अन्तवद्भावेन पदान्तत्वात् अयादेशं बाधित्वा जश्सोः परतः 'एङः पदा-
न्तादि'ति पूर्वरूपमेकादेशः स्यादित्युच्यते तदा 'थासः से' 'ईशः से' इति विहिता-
देशस्यानुकरणम्बोधमिति नवीनाः । (३-४) 'ङसिङसोश्च' । (५) 'पृङ्ङ-
स्वात् सम्बुद्धेः' । (६) इः (कामः) स्मृतौ येन सः, अथवा ई (लक्ष्मी) स्मृता
येनेति विप्रहे 'अनेकमन्यपदार्थे' इति बहुव्रीहिसमासे सति 'निष्प्रैः स्मृतयश्च' इत्य-
पूर्वनिपाते गुणः, अन्यत् कार्यं 'से' शब्दवत् शैयम् । (७) नञ्प्रतिपूर्वोक्तरीत्या

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-----------|--------------|------------|---------|
| च० | स्मृतये | स्मृतेभ्याम् | स्मृतेभ्य | सम्प्र० |
| पं० | स्मृतेः | स्मृतेभ्याम् | स्मृतेभ्यः | अपा० |
| ष० | स्मृतेः | स्मृतयोः | स्मृतयाम् | सम्ब० |
| स० | स्मृतयि | स्मृतयोः | स्मृतेषु | अधि० |
| | हे स्मृते | हे स्मृतयौ | हे स्मृतयः | सम्बो० |

[६८] ओकारान्तः पुँल्लिङ्गः 'गो' शब्दः

(गौ का प्रयोग गाय तथा बैल दोनों में होता है)

| | | | | |
|-------|--------|----------|---------|---------|
| प्र० | गौः | गावौ | गावः | कर्त्ता |
| द्वि० | गाम् | गावौ | गाः | कर्म |
| तृ० | गवा | गोभ्याम् | गोभिः | करण |
| च० | गवे | गोभ्याम् | गोभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | गोः | गोभ्याम् | गोभ्यः | अपा० |
| ष० | गोः | गवोः | गवाम् | सम्ब० |
| स० | गवि | गवोः | गोषु | अधि० |
| | हे गौः | हे गावौ | हे गावः | सम्बो० |

[६९] ओकारान्तः पुँल्लिङ्गः 'सुद्यो' शब्दः (स्वर्ग में रहने वाला)

| | | | | |
|-------|----------|----------|----------|---------|
| प्र० | सुद्यौः | सुद्यावौ | सुद्यावः | कर्त्ता |
| द्वि० | सुद्याम् | सुद्यावौ | सुद्यावः | कर्म |

'से' शब्दवत् 'एळः पदान्तादति' इति पूर्वरूपस्य प्राप्तिः कुतो नेति चेत् सत्यम् , 'उत्तरपदत्वे चापदादिविधौ प्रतिषेधः' इति प्रत्ययलक्षणप्रतिषेधात् । (१) गो स् इति स्थिते 'गोतो णित्' इति णित्त्वे 'अचो ङिति' इति वृद्धिः फत्वविसर्गौ । (२) 'ओतोऽम्शसोः' । (३) 'वसि वसोश्च' । (४) सु=शोभना द्यौर्यस्येति विग्रहः । सुद्यो स् इति स्थिते 'गोतो णित्' इत्यस्याऽप्राप्ते 'ओतो णिदिति वाच्यम्' गोत इति गकारमपनीय 'ओतो णित्' इति वाच्यमित्यर्थः तेन सुद्यो शब्दस्याऽपि गोशब्दवद्रूपाणीति भावः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|----------|------------|-----------|---------|
| सृ० | सुघावा | सुघोभ्याम् | सुघोभिः | करण |
| च० | सुघवे | सुघोभ्याम् | सुघोभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुघोः | सुघोभ्याम् | सुघोभ्यः | अपा० |
| ष० | सुघोः | सुघवोः | सुघवाम् | सम्ब० |
| स० | सुघवि | सुघवोः | सुघोषु | अधि० |
| | हे सुघौः | हे सुघावौ | हे सुघावः | सम्बो० |

[७०] ओकारान्तः पुंल्लिङ्गः 'स्मृतो' शब्दः

(भगवान् शंकर को स्मरण करने वाला)

| | | | | |
|-------|-----------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | स्मृतौः | स्मृतावौ | स्मृतावः | कर्त्ता |
| द्वि० | स्मृताम् | स्मृतावौ | स्मृतावः | कर्म |
| सृ० | स्मृतावा | स्मृतोभ्याम् | स्मृतोभिः | करण |
| च० | स्मृतवे | स्मृतोभ्याम् | स्मृतोभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | स्मृतोः | स्मृतोभ्याम् | स्मृतोभ्यः | अपा० |
| ष० | स्मृतोः | स्मृतवोः | स्मृतवाम् | सम्ब० |
| स० | स्मृतवि | स्मृतवोः | स्मृतेषु | अधि० |
| | हे स्मृतौ | हे स्मृतावौ | हे स्मृतावः | सम्बो० |

[७१] ऐकारान्तः पुंल्लिङ्ग 'रै' शब्दः (धनवाची)

| | | | | |
|-------|-------|----------|-------|---------|
| प्र० | रैः | रैयौ | रायः | कर्त्ता |
| द्वि० | रायम् | रायौ | रायः | कर्म |
| सृ० | राया | राभ्याम् | राभिः | करण |

(१) उः = शम्भुः स्मृतो येनेति विग्रहे बहुव्रीहिसमासे सुब्लुकि 'निष्ठा' इत्यनेन स्मृतिशब्दस्य पूर्वनिपाते 'आद्गुणः' इति गुणे 'स्मृतो' शब्दः । गोशब्दवत् साधनप्रकारो बोध्यः । अत्र नवीनाः—'गोतो णित्' इति सूत्रशेषे 'द्यौश्च वृद्धिर्वक्तव्या' इत्येव भाष्यवार्तिकदर्शनेन 'ओतो णिदिति वाच्यम्' इति वचनमप्रामाणिकं अतोऽन्यहोकारात् प्रातिपदिकमनभिधानमेवेति वदन्ति । (२) 'रायो हलि' । (३) भजादौ आया देशः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|----------|------------|-----------|---------|
| च० | राये | राभ्याम् | राभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | रायः | राभ्याम् | राभ्यः | अपा० |
| ष० | रायः | रायोः | रायाम् | सम्ब० |
| स० | रायि | रायोः | रासु | अधि० |
| | हे राः | हे रायौ | हे रायः | सम्बो० |
| [७२] औकारान्तः पुँल्लिङ्गः 'ग्लौ' शब्दः (चन्द्रमा) | | | | |
| प्र० | ग्लौः | ग्लौवौ | ग्लावः | कर्त्ता |
| द्वि० | ग्लावम् | ग्लावौ | ग्लावः | कर्म |
| तृ० | ग्लावा | ग्लौभ्याम् | ग्लौभिः | करण |
| च० | ग्लावे | ग्लौभ्याम् | ग्लौभ्यः | सम्प्र० |
| प० | ग्लावः | ग्लौभ्याम् | ग्लौभ्यः | अपा० |
| ष० | ग्लावः | ग्लावोः | ग्लावाम् | सम्ब० |
| स० | ग्लावि | ग्लावोः | ग्लौषु | अधि० |
| | हे ग्लौः | हे ग्लावौ | हे ग्लावः | सम्बो० |

एवं जनौः, जनावौ जनाव, इत्यादि ।

इति अजन्तपुँल्लिङ्गशब्दाः ।

अथ अजन्तस्त्रीलिङ्गशब्दाः ॥ २ ॥

[७३] आकारान्त स्त्रीलिङ्गो 'रमा' शब्दः (लक्ष्मी)

| | | | | |
|------|------|------|------|---------|
| प्र० | रँमा | रँमे | रमाः | कर्त्ता |
|------|------|------|------|---------|

(१) रुत्वविसर्गौ । (२) अजादौ आवादेशः । (३) जनानवतीति जनौः । जनोपपदात्, अवधातोः क्विप् 'ज्वरत्वरे'ति ऊठ् 'एत्येधत्यूठ्सु' इति वृद्धिः ।

इति सोचराकौमुदीरूपलतायाम् अजन्तपुँल्लिङ्गशब्दाः ।

(४) रमते इति रमा, पचादित्वात् 'नन्दिप्रही'त्यादिसुत्रेण अचि, व्रीत्वा-
टाप्, उथाप्राप्तिपदिकात्' इत्यत्र उथाप्प्रहणस्य प्रत्याख्यातत्वेन लिङ्गविशिष्टपरि-
भाषया स्वादयः । हल्हयादिति सुलोपः । (५) 'औच् आपः'इति शीभावे गुणः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------|-----------|---------|---------|
| द्वि० | रमाम् | रमे | रमाः | कर्म |
| तृ० | रमया | रमाभ्याम् | रमाभिः | करण |
| च० | रमायै | रमाभ्याम् | रमाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | रमायाः | रमाभ्याम् | रमाभ्यः | अपा० |
| ष० | रमायाः | रमयोः | रमाणाम् | सम्ब० |
| स० | रमायाम् | रमयोः | रमासु | अधि० |
| | हे रमे | हे रमे | हे रमाः | सम्बो० |

एवं दुर्गा, अम्बिका, सीता, बाला, पाठशाला, माला, लता, वि-
शेषता, प्रसन्नता, याचना, अध्यापिका, छात्रा, विद्या, आज्ञा, सभा,
प्रजा, खट्वा, शर्करा, सेवा, अट्टालिका, यवनिकादय आकारान्ताः

[७४] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गः सर्वनाम 'सर्वा' शब्दः (सर्व स्त्री)

| | | | | |
|-------|-----------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | सर्वा | सर्वे | सर्वाः | कर्त्ता |
| द्वि० | सर्वाम् | सर्वे | सर्वाः | कर्म |
| तृ० | सर्वया | सर्वाभ्याम् | सर्वाभिः | करण |
| च० | सर्वस्यै | सर्वाभ्याम् | सर्वाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सर्वस्याः | सर्वाभ्याम् | सर्वाभ्यः | अपा० |
| ष० | सर्वस्याः | सर्वयोः | सर्वासाम् | सम्ब० |

(१) 'अभि पूर्वः' । (२) पूर्वसवर्णदीर्घे स्त्रीत्वान्नत्वाभावः । (३-६) 'आङि चापः' इत्येत्वे अयादेशः । (४) 'याडापः' इति याडागमे वृद्धिः । (५) ङसि-
ङसोः याडागमे सवर्णदीर्घः, (७) 'ह्रस्वनद्यापः' इति नुटि पर्जन्यवत्लक्षणप्रवृ-
त्या'नामो'ति दीर्घे 'अट्कुप्वाङि'ति णत्वम् । (८) 'ङैराम्नयाम्नीभ्यः' इति
आमादेशे याडागमे सवर्णदीर्घः । अप्र प्रयोगे मकारस्येत्संज्ञा तु न भवति 'न वि-
भक्तावि'ति निषेधात् । (९) सर्वशब्दाद्यापि 'सर्वा' शब्दः । सो ऽपि ङे-ङसि-
ङस्-ङी-आम्-विभक्तीन् वर्जयित्वा 'रमा' शब्दवत् । (१०) याट् प्रवाध्य
'सर्वनाम्नः स्याद्' इति स्याटि आकारस्य ह्रस्वे वृद्धिः । (११) ङसि-ङसोः
स्याटि आपो ह्रस्वे सवर्णदीर्घः । (१२) 'आभि सर्वनाम्नः सुट्' । नचावन्तस्य

| | | | | |
|----|------------|----------|-----------|-------|
| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| स० | सर्वस्याम् | सर्वयोः | सर्वासु | अधि० |
| | हे सर्वा | हे सर्वे | हे सर्वाः | सम्बो |

एवं सर्वादिगणपठिताः विश्वाद्य आबन्ताः शब्दाः तद्यथा-वि
श्वा, कतरा, कतमा, यतरा, यतमा, ततरा, ततमा, एकतरा, एकत
मा, अन्या, अन्यतरा, इतरा, त्वा, नेमा, समा, सिमा, पूर्वा, परा
अवरा, दक्षिणा, उत्तरा, अपरा, अधरा, स्वा, अन्तरा, संख्याभिन्न।
र्थक एका-शब्दश्च ।

[७५] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गो नित्यद्विवचनान्तः 'उभा' शब्दः ।

| | | | |
|---------------|-----------|---------------|---------------|
| प्र०-उभे | द्वि०-उभे | तृ०-उभाभ्याम् | च०-उभाभ्याम् |
| पं०-उभाभ्याम् | ष०-उभयोः | स०-उभयोः | सम्बो० हे उभे |

[७६] ईकारान्तः स्त्रीलिङ्गो द्विवचनरहितः 'उभयी' शब्दः ।

| | | | | |
|-------|----------|---|-----------|---------|
| प्र० | उभयी | ० | उभय्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | उभयीम् | ० | उभयीः | कर्म |
| तृ० | उभय्या | ० | उभयीभिः | करण |
| च० | उभय्यै | ० | उभयीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | उभय्याः | ० | उभयीभ्यः | अपा० |
| ष० | उभय्याः | ० | उभयीनाम् | सम्ब० |
| स० | उभय्याम् | ० | उभयीषु | अधि० |
| | हे उभयि | ० | हे उभय्यः | सम्बो० |

सर्वाशब्दस्य सर्वादिगणे पाठाभावात् कथं सर्वनामत्वमिति वाच्यम् , वकारादकार-
स्य आपश्च यो दीर्घैकादेशः तस्य पूर्वान्तत्वेन प्रहणादिति तत्त्वम् । (१) रमा-
शब्दवत् 'उभा' शब्देऽपि साधनप्रकारो ज्ञेयः । (२) उभयशब्दस्य तयप्-
प्रत्ययान्ततया 'टिड्ढाणञ्' इति ङीप् , ष्यन्तत्वात् सुलोपः । (३) 'नादिचि'
इति दीर्घनिपेघात् यणि । गौरीशब्दवत् 'उभयी' शब्देऽपि सर्वं कार्यं ज्ञेयम् ।

[७७] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गो नित्यद्विवचनान्तो 'द्वा' शब्दः ।

प्र०-द्वे द्वि०-द्वे तृ०-द्वाभ्याम् च०-द्वाभ्याम् पं०-द्वाभ्याम्
ष-द्वयोः स०-द्वयोः (त्यदादेः सम्बोधनं नास्ति)

[७८] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'उत्तरपूर्वा' शब्दः (ईशान कोण)

एकवचन द्विवचन बहुवचन

| | | | | |
|-------|---------------------------------------|-------------------|------------------------------------|---------|
| प्र० | उत्तरपूर्वा | उत्तरपूर्वे | उत्तरपूर्वाः | कर्त्ता |
| द्वि० | उत्तरपूर्वाम् | उत्तरपूर्वे | उत्तरपूर्वाः | कर्म |
| तृ० | उत्तरपूर्वया | उत्तरपूर्वाभ्याम् | उत्तरपूर्वाभिः | करण |
| च० | { उत्तरपूर्वस्यै उत्तरपूर्वायै | उत्तरपूर्वाभ्याम् | उत्तरपूर्वाभ्यः | सम्प्र० |
| ष० | { उत्तरपूर्वस्याः उत्तरपूर्वायाः | उत्तरपूर्वाभ्याम् | उत्तरपूर्वाभ्यः | अपा० |
| स० | { उत्तरपूर्वस्याः उत्तरपूर्वायाः | उत्तरपूर्वयोः | उत्तरपूर्वाणाम् उत्तरपूर्वाणाम् | सम्ब० |
| | { उत्तरपूर्वस्याम् उत्तरपूर्वायाम् | उत्तरपूर्वयोः | उत्तरपूर्वासु | अधि० |
| | हे उत्तरपूर्वे | हे उत्तरपूर्वे | हे उत्तरपूर्वाः | सम्बो० |

[७९] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'द्वितीया' शब्दः (दूसरी)

| | | | | |
|-------|------------|----------------|-------------|---------|
| प्र० | द्वितीया | द्वितीये | द्वितीयाः | कर्त्ता |
| द्वि० | द्वितीयाम् | द्वितीये | द्वितीयाः | कर्म |
| तृ० | द्वितीयया | द्वितीयाभ्याम् | द्वितीयाभिः | करण |

(१) अत्वे सति टापि, रमाशब्दवत् कार्यं बोध्यम् । (२) उत्तरस्याश्च पूर्व-
स्याश्च दिशोर्यदन्तरालम्, उत्तरपूर्वा । (३) 'विभाषा दिक्समासे बहुव्रीहौ'
इति सर्वनामत्वपक्षे सर्वाशब्दवत् अन्यत्र रमाशब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । 'विभाषे'ति
सूत्रे लक्षणप्रतिपदोक्तपरिभाषया 'दिङ्नामान्यन्तराले' इति विहितस्य प्रतिपदो-
क्तस्य दिक्समासस्यैव प्रहृणं तेन या उत्तरा सा पूर्वा यस्या उन्मुग्धाया इति विग्रहे
सर्वनामसंज्ञाभावात् रमाशब्दवत् रूपं बोध्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|--|---------------------------|----------------------------|----------------|
| च० | { द्वितीयस्यै द्वितीयायै | द्वितीयाभ्याम् | द्वितीयाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { द्वितीयस्याः द्वितीयायाः | द्वितीयाभ्याम् | द्वितीयाभ्यः | अपा० |
| ष० | { द्वितीयस्याः द्वितीयायाः | द्वितीययोः | द्वितीयानाम् | सम्ब० |
| स० | { द्वितीयस्याम् द्वितीयायाम् हे द्वितीये | द्वितीययोः हे द्वितीये | द्वितीयासु हे द्वितीयाः | अधि० सम्बो० |

[८०] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गः, 'तृतीया' शब्दः (तीसरी)

| | | | | |
|-------|--|-----------------------|------------------------|----------------|
| प्र० | तृतीया | तृतीये | तृतीयाः | कर्त्ता |
| द्वि० | तृतीयाम् | तृतीये | तृतीयाः | कर्म |
| तृ० | तृतीयया | तृतीयाभ्याम् | तृतीयाभिः | करण |
| च० | { तृतीयस्यै तृतीयायै | तृतीयाभ्याम् | तृतीयाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { तृतीयस्याः तृतीयायाः | तृतीयाभ्याम् | तृतीयाभ्यः | अपा० |
| ष० | { तृतीयस्याः तृतीयायाः | तृतीययोः | तृतीयानाम् | सम्ब० |
| स० | { तृतीयस्याम् तृतीयायाम् हे तृतीये | तृतीययोः हे तृतीये | तृतीयासु हे तृतीयाः | अधि० सम्बो० |

[८१] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'अम्बा' शब्दः (माता)

| | | | | |
|-------|---------|-------------|----------|---------|
| प्र० | अम्बा | अम्बे | अम्बाः | कर्त्ता |
| द्वि० | अम्बाम् | अम्बे | अम्बाः | कर्म |
| तृ० | अम्बया | अम्बाभ्याम् | अम्बाभिः | करण |

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-----------|-------------|-----------|---------|
| च० | अम्बायै | अम्बाभ्याम् | अम्बाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अम्बायाः | अम्बाभ्याम् | अम्बाभ्यः | अपा० |
| ब० | अम्बायाः | अम्बयोः | अम्बानाम् | सम्ब० |
| स० | अम्बायाम् | अम्बयोः | अम्बासु | अधि० |
| | हे अम्ब | हे अम्बे | हे अम्बाः | सम्बो० |

एवम् अक्का-अल्लादयोऽम्बार्थकाः ।

[८२] आकारान्त स्त्रीलिङ्गो 'जरा' शब्दः (वृद्धावस्था)

| | | | | |
|-------|--------------------|----------------|-------------------|---------|
| प्र० | जरा | { जरसौ जरे | जरसः जराः | कर्त्ता |
| द्वि० | { जरसम् जराम् | जरसौ जरे | जरसः जराः | कर्म |
| तृ० | { जरसा जरया | जराभ्याम् | जरामिः | करण |
| च० | { जरसे जरायै | जराभ्याम् | जराभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { जरसः जराया | जराभ्याम् | जराभ्यः | अपा० |
| ब० | { जरसः जरायाः | जरसोः जरयोः | जरसाम् जराणाम् | सम्ब० |
| स० | { जरासि जरायाम् | जरसोः जरयोः | जरासु | अधि० |

(१) 'अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः' । (शेषं 'रमा'वत्) । (२) 'जूष वयोहानौ' इत्यस्मात् 'विद्धिदादिभ्यः' इत्यङि, 'ऋदृशोऽङिति' गुणः, रपरत्वम्, अदन्तत्वा-
द्यप् सुलोपः । (३) जरायाः जरस्यन्तरस्याम्'शोभावात् परत्वात् जरस् । श्या-
देशाद्युत्तरं जरसादेशस्तु न सन्निपातपरिभाषाविरोधात् । जरसादेशाभावपक्षे ह्लादौ
च 'रमा' वत् । (४) जरधि इत्यत्र तु नित्यत्वात् आमम्, अन्तरङ्गत्वात् याटं
वाधित्वा जरसादेशः । नच जअदेशे कृते स्थानिवद्भावेन आबन्तत्वमाश्रित्य आव-
न्तत्वनिमित्तराः तत्तदादेशादयः कृतो नेति वाच्यम् अत्र सर्वत्र सूत्रे आ-आविति

| एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|------------------------|--------------------------------------|----------------------|---------|
| हे जरे | { हे जरसौ हे जरे | हे जरस हे जराः | सम्बो० |
| [८३] | आकारान्त स्त्रीलिङ्गो 'नासिका' शब्दः | | |
| प्र० नासिका | नासिके | नासिकाः | कर्त्ता |
| द्वि० नासिकाम् | नासिके | { नसः नासिकाः | कर्म |
| तृ० { नसा नासिकया | नोभ्याम् नासिकाभ्याम् | नोभिः नासिकाभिः | करण |
| च० { नसे नासिकायै | नोभ्याम् नासिकाभ्याम् | नोभ्यः नासिकाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० { नसः नासिकायाः | नोभ्याम् नासिकाभ्याम् | नोभ्यः नासिकाभ्यः | अपा० |
| ष० { नसः नासिकायाः | नसोः नासिकयोः | नसाम् नासिकानाम् | सम्ब० |
| स० { नसि नासिकायाम् | नसोः नासिकयोः | नसु नासिकासु | अधि० |
| हे नासिके | हे नासिके | हे नासिकाः | सम्बो० |

[८४] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'निशा' शब्दः (रात्रि)

| | | | |
|---------------------|----------------------------|-----------------------|---------|
| प्र० निशा | निशे | निशाः | कर्त्ता |
| द्वि० निशाम् | निशे | निशः-निशाः | कर्म |
| तृ० { निशा निशया | निर्द्ध्याम् निशाभ्याम् | निर्द्धभिः निशाभिः | करण |

प्रश्लिष्य आकाररूपस्यैवापः सर्वत्र प्रहणेन 'अनल्विधाविति निषेधात् । एवं नशा-
द्यादेशभावपक्षेपि बोध्यम् । (१) 'पद्वि'ति नासिकायाः नस् । (२) 'स्वादि-
ष्वि'ति पदत्वात् रत्वादिकम् । नसादेशाभावपक्षे 'रमा'वत् (३) 'पदन्नोमास'
इत्यादि सूत्रेण शसादिविभक्तौ परतः निशाया नश् । (४) 'स्वादिष्वि'ति पद-
त्वात् 'ब्रश्च-भ्रस्ज-स्रज-मृज-यज-राज-भ्राजच्छ शापः' इति सूत्रेण शस्य
पत्वे जश्त्वम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|---------------------------------|------------------------------|-------------------------------------|----------------|
| च० | { निशे निशायै | निङ्भ्याम् निशाभ्याम् | निङ्भ्यः निशाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { निशः निशायाः | निङ्भ्याम् निशाभ्याम् | निङ्भ्यः निशाभ्यः | अपा० |
| ष० | { निशः निशायाः | निशोः निशयोः | निशाम् निशानाम् | सम्ब० |
| स० | { निशि निशायाम् हे निशे | निशोः निशयोः हे निशे | निट्सु-निट्सु निशासु हे निशाः | अधि० सम्बो० |
| [८५] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'पृतना' शब्दः (सेना, पर्यटन) | | | | |
| प्र० | पृतना | पृतने | पृतनाः | कर्त्ता |
| द्वि० | पृतनाम् | पृतने | पृतः-पृतनाः | कर्म |
| तृ० | { पृता पृतनया | पृद्याम् पृतनाभ्याम् | पृद्भिः पृतनाभिः | करण |
| च० | { पृते पृतनायै | पृद्भ्याम् पृतनाभ्याम् | पृद्भ्यः पृतनाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { पृतः पृतनायाः | पृद्भ्याम् पृतनाभ्याम् | पृद्भ्यः पृतनाभ्यः | अपा० |
| ष० | { पृतः पृतनायाः | पृतोः पृतनयोः | पृताम् पृतनानाम् | सम्ब० |
| स० | { पृति पृतनायाम् हे पृतने | पृतोः पृतनयोः हे पृतने | पृत्सु पृतनासु हे पृतनाः | अधि० सम्बो० |

(१) 'प्रश्चे'ति षत्वे तस्य जश्त्वेन ङकारे 'ङसि धुट्' इति धुटि चर्त्तम् । धुट्भावपक्षे निट्सु । अत्रोभयत्र 'चयोद्धितीया' इति धुट्पक्षे तस्य थः तदभावपक्षे टस्य ठो न भवति चर्त्तस्यासिद्धत्वात् । एवं 'निट्सु' इत्यत्र तकारस्य ष्टुत्वशंकालेशोऽपि न, 'स्वादिध्विति पदत्वेन 'न पदान्ताद्योः' इति निषेधात् ।

(२) 'मांसपृतनासानूनामि'ति पृतादेशः ।

[८६] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'गोपा' शब्दः (ग्वालिन)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------|------------|----------|---------|
| प्र० | गोपाः | गोपौ | गोपाः | कर्त्ता |
| द्वि० | गोपाम् | गोपौ | गोपः | कर्म |
| तृ० | गोपा | गोपाभ्याम् | गोपाभिः | करण |
| च० | गोपे | गोपाभ्याम् | गोपाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | गोपः | गोपाभ्याम् | गोपाभ्यः | अपा० |
| ष० | गोपः | गोपोः | गोपाम् | सम्ब० |
| स० | गोपि | गोपोः | गोपासु | अधि० |
| | हे गोपाः | हे गोपौ | हे गोपाः | सम्बो० |

एवं धेनुपा-धनपा-लोकपा-इत्यादयः ।

[८७] इकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'मति' शब्दः (बुद्धि)

| | | | | |
|-------|----------------------------|------------------|------------------|----------------|
| प्र० | मतिः | मती | मतयः | कर्त्ता |
| द्वि० | मतिम् | मती | मतीः | कर्म |
| तृ० | मत्या | मतिभ्याम् | मतिभिः | करण |
| च० | { मत्यै मतये | मतिभ्याम् | मतिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { मत्याः मतेः | मतिभ्याम् | मतिभ्यः | अपा० |
| ष० | { मत्याः मतेः | मत्योः | मतीनाम् | सम्ब० |
| स० | { मत्याम् मतौ हे मते | मत्योः हे मती | मतिषु हे मतयः | अधि० सम्बो० |

एवं श्रुति-स्मृति-स्तुति-नीति-समिति-क्षति-सन्तति-कीर्त्ति-
सम्पत्ति-गति-नति-वृत्ति-विपत्ति-बुद्धि-मुष्टि-कृषि-प्रभृतयः

(१) गां पाति या सा गोपा, विच । आवन्तत्वाभावान्न सुलोपः । (२)
दीर्घः । आवन्तत्वाभावात् 'आङि चाप' इति न । एवञ्च विश्वपा' वत् सर्वकार्य
बोध्यम् । (३) धित्वेऽपि स्त्रीत्वान्नत्वाऽभावः । (४) 'ङिति ह्रस्वश्च' ।

(८८) इकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'रुचि' शब्दः (इच्छा, कान्ति)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------------|------------|----------|---------|
| प्र० | रुचिः | रुची | रुचयः | कर्त्ता |
| द्वि० | रुचिम् | रुची | रुचीः | कर्म |
| तृ० | रुच्या | रुचिभ्याम् | रुचिभिः | करण |
| च० | { रुच्यै रुचये | रुचिभ्याम् | रुचिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { रुच्याः रुचेः | रुचिभ्याम् | रुचिभ्यः | अपा० |
| ष० | { रुच्याः रुचेः | रुच्योः | रुचीनाम् | सम्ब० |
| स० | { रुच्याम् रुचौ | रुच्योः | रुचिषु | आधि० |
| | हे रुचे | हे रुची | हे रुचयः | सम्बो० |

[८९] इकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'त्रि' शब्दो नित्यं बहुवचनान्तः ।

| | | | |
|--------------|--------------|-------------|------------------|
| प्र०-तिस्रः | द्वि०-तिस्रः | तृ०-तिसृभिः | च०-तिसृभ्यः |
| पं०-तिसृभ्यः | ष०-तिसृणाम् | स०-तिसृषु | सम्बो०-हे तिस्रः |

[९०] रेफान्तः स्त्रीलिङ्गः 'चतुर' शब्दो नित्यं बहुवचनान्तः ।

| | | | |
|--------------|--------------|-------------|------------------|
| प्र०-चतस्रः | द्वि०-चतस्रः | तृ०-चतसृभिः | च०-चतसृभ्यः |
| पं०-चतसृभ्यः | ष०-चतसृणाम् | स०-चतसृषु | सम्बो०-हे चतस्रः |

[९१] प्रियास्त्रयः प्रियाणि त्रिणि वा यस्याः इति विग्रहे

'भाण्णद्याः' । 'भाटश्च' । नदीत्वाऽभावपक्षे 'हरि'वत् घिसंज्ञादिकार्यं बोध्यम् । लौ तु नदीत्वपक्षे 'इदुङ्ग्याम्' । (१) 'मति'वत् साधनप्रकारो बोध्यः । (२) 'तृच-तुरोः स्त्रियां तिस्रचतस्र' । 'अचि र ऋतः' । जसि-ऋतो लो'ति गुणस्य, शसि- 'प्रथमयोः' इति दीर्घस्य 'प्रियतिस्रः' इति वक्ष्यमाणप्रयोगे 'ऋत उत्' इति उत्त्वस्य च रत्वमपवाद इति बोध्यम् । (३) 'नुमचिरे'ति नुट् । 'न तिस्रचतस्र' इति दी- र्घनिषेधः । 'ऋवर्णास्त्रयै'ति णत्वम् । (४) 'त्रि' शब्दवत् साधनप्रकारो बोध्यः ।

स्त्रीलिङ्गः 'प्रियत्रि' शब्दः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--|-------------------------------|------------------------------|----------------|
| प्र० | प्रियत्रिः | प्रियत्री | प्रियत्रयः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रियत्रिम् | प्रियत्री | प्रियत्रीः | कर्म |
| तृ० | प्रियत्र्या | प्रियत्रिभ्याम् | प्रियत्रिभिः | करण |
| च० | { प्रियत्र्यै प्रियत्रये | प्रियत्रिभ्याम् | प्रियत्रिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { प्रियत्र्याः प्रियत्रेः | प्रियत्रिभ्याम् | प्रियत्रिभ्यः | अपा० |
| ष० | { प्रियत्र्याः प्रियत्रेः | प्रियत्र्योः | प्रियत्रयाणाम् | सम्ब० |
| स० | { प्रियत्र्याम् प्रियत्रौ हे प्रियत्रे | प्रियत्रयोः हे प्रियत्री | प्रियत्रिषु हे प्रियत्रयः | आधि० सम्बो० |
| [९२] | प्रियास्तिस्रो यस्य सः इति विग्रहे तु | पुंलिङ्गः 'प्रियत्रि' शब्दः । | | |
| प्र० | प्रियतिस्रा | प्रियतिस्रौ | प्रियतिस्रः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रियतिस्रम् | प्रियतिस्रौ | प्रियतिस्रः | कर्म |
| तृ० | प्रियतिस्रा | प्रियतिस्रभ्याम् | प्रियतिस्रभिः | करण |
| च० | प्रियतिस्रे | प्रियतिस्रभ्याम् | प्रियतिस्रभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रियतिस्रः | प्रियतिस्रभ्याम् | प्रियतिस्रभ्यः | अपा० |
| ष० | प्रियतिस्रः | प्रियतिस्रोः | प्रियतिस्रणाम् | सम्ब० |

(१) 'तृचतुरोः' इति सूत्रे श्रुतत्वात् स्त्रियामिति त्रिचतुरोर्विशेषणं नतु तदन्तयोर्मानाभावात् । अत्र तु 'प्रियत्रि' शब्दो हि स्त्रीलिङ्गो न तु 'त्रि'शब्दः तस्मात्प्रतिस्रादेशः । एवञ्चामम्बर्जयित्वा मतिशब्दवत् सर्वत्र कार्यं ज्ञेयम् । (२) त्रिशब्दान्तत्वेऽपि पदाङ्गाधिकारेति परिभाषया 'त्रेन्नयः' इति त्रयादेशे नुटि दीर्घेणत्वम् । (३) 'स्त्रियाः पुंवदिति' 'प्रियत्रि' शब्दस्य पुंवत्त्वेऽपि 'त्रि'शब्दस्य स्त्रीलिङ्गत्वात् प्रतिस्रादेशः । 'ऋदुसनसि'त्यनङि दीर्घेः नलोपः । (४) गुणं बाधित्वा 'अचि र ऋतः' इति रत्वम् । एवं सर्वत्र रत्वं बाधते इति बोध्यम् । (५) त्रयादेशं बाधित्वा परत्वात्प्रतिस्रादेशे सति रत्वं बाधित्वा 'नुमचिरे'ति नुट् 'ऋवर्णान्नस्ये'तिणत्वम् । 'न तिस्रचतस्र' इति निषेधात् दीर्घो न ।

एकवचन द्विवचन बहुवचन

| | | | | |
|--------|--|--|-----------------------------------|----------------|
| स० | प्रियतिस्रि हे प्रियतिष्ठा | प्रियतिस्रोः हे प्रियतिस्रौ | प्रियतिस्रिषु हे प्रियतिस्रः | अधि० सम्बो० |
| [९३] | प्रियास्तिस्रो | यस्य तदिति विग्रहे | तु नपुंसकः 'प्रियत्रि' शब्दः । | |
| प्र० | { प्रियत्रि प्रियतिस्रु | प्रियतिस्रुणी | प्रियतिस्रुणि | कर्त्ता |
| द्वि० | { प्रियत्रि प्रियतिस्रु | प्रियतिस्रुणी | प्रियतिस्रुणि | कर्म |
| तृ० | { प्रियतिस्रु प्रियतिस्रुणा | प्रियतिस्रुभ्याम् | प्रियतिस्रुभिः | करण |
| च० | { प्रियतिस्रु प्रियतिस्रुणे | प्रियतिस्रुभ्याम् | प्रियतिस्रुभ्यः | सम्प्र |
| प० | { प्रियतिस्रुः प्रियतिस्रुणः | प्रियतिस्रुभ्याम् | प्रियतिस्रुभ्यः | अपा० |
| ष० | { प्रियतिस्रुः प्रियतिस्रुणः | प्रिमतिस्रोः प्रिमतिस्रुणोः | प्रियतिस्रुणाम् | सम्बो० |
| स० | { प्रियतिस्रि प्रियतिस्रुणि हे प्रियत्रि हे प्रियतिस्रु | प्रियतिस्रोः प्रियतिस्रुणोः हे प्रिमतिस्रुणी | प्रियतिस्रुषु हे प्रियतिस्रुणि | अधि० सम्बो० |

(१) 'नलुमते'ति प्रत्ययलक्षणनिषेधात् तिस्त्रादेशो न, तस्याऽनित्यत्वे तु पक्षे तिस्त्रादेशो भवत्येवेति । (२) 'अचिर ऋतः' इति रत्वं बाधित्वा 'इकोऽचि विभक्तौ' इति नुम् । (३) अजादितृतीयादिविभक्तौ तु 'तृतीयादिषु भाषितपुंसकं पुंवद्गालवस्य' इति पाक्षिकपुंवदत्वे नुमभावात् 'अचि रे'ति रत्वम् । पुंवत्वामा-
वपक्षे तु प्रायेण अजादौ सर्वत्र नुमि णत्वम्बोध्यम् । (४) रत्वं, नुमञ्च बाधित्वा 'नुमचिरे'ति नुटि 'ऋवर्णोन्नस्ये'ति णत्वम् । (त्रिशब्दस्य बहुव्रीहि समासे कृते
अन्यपदार्थप्रधानत्वात् एक-द्वि-बहुवचनानि भवन्तीति । इत्यत्र १४ पृष्ठे 'प्रिय-
त्रि' शब्देऽपि बोध्यम्, तत्र टिप्पण्यां "त्रिशब्दत्वाभावात्" इति प्रमादतः
लिखितं तत्र स्थाने "आमं वर्जयित्वा" इति बोध्यम्)

[९४] आकारान्तः स्त्रीलिङ्गो नित्यं द्विवचनान्तो 'द्वा' शब्दः ।

प्र०-द्वे^१ द्वि०-द्वे- तृ०-द्वाभ्याम् च०-द्वाभ्याम्
पं०-द्वाभ्याम् ष०-द्वयोः स०-द्वयोः

[९५] ईकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'गौरी' शब्दः (पार्वती)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------|------------|------------|---------|
| प्र० | गौरी | गौर्यौ | गौर्यैः | कर्त्ता |
| द्वि० | गौरीभ् | गौर्यौ | गौरीः | कर्म |
| तृ० | गौर्या | गौरीभ्याम् | गौरीभिः | करण |
| च० | गौर्यै | गौरीभ्याम् | गौरीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | गौर्याः | गौरीभ्याम् | गौरीभ्यः | अपा० |
| ष० | गौर्याः | गौर्योः | गौरीणाम् | सम्ब० |
| स० | गौर्याम् | गौर्योः | गौरीषु | अधि० |
| | हे गौरि | हे गौर्यौ | हे गौर्यैः | सम्बो० |

[९६] ईकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'वाणी' शब्दः (सरस्वती)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------|------------|----------|---------|
| प्र० | वाणी | वाण्यौ | वाण्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | वाणीम् | वाण्यौ | वाणीः | कर्म |
| तृ० | वाण्या | वाणीभ्याम् | वाणीभिः | करण |
| च० | वाण्यै | वाणीभ्याम् | वाणीभ्यः | सम्प्र० |

(१) टापि सति रमाशब्दवत् द्वाशब्देऽपि कार्यं ज्ञेयम् । (२) गौरशब्दात् 'षिद्गौरादिभ्यश्च' इति ङीषि 'यस्येति च' इत्यकारलोपे गौरीशब्दः । ततः सौ हल्ङ्यादिना सुलोपः । (३-४) दीर्घाज्जि च' इति पूर्वसवर्णदीर्घनिषेधे यण् । (५) 'अभिपूर्वः' । (६) 'यूक्षाख्यौ नदी' इति नदीत्वे बहुश्रेसी' वत् गौरी शब्देऽपि तत्र तत्र नदीकार्यं भवति, नदीसंज्ञककार्यं यथा-'भाणनद्याः' 'ह्रस्व-नद्यापो नुट्' 'हेराम्नयाम्नीभ्यः' अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः' इति । (७) 'वण् शब्दे वण्यते=शब्द्यते, इति वाणो । 'इष्वपादिभ्यः' इति इल् 'कृदिकारादक्तिनः' इति' ङीप् । अन्यत् कार्यं गौरीशब्दवत् ज्ञेयम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|----------|------------|-----------|--------|
| पं० | वाण्याः | वाणीभ्याम् | वाणीभ्यः | अपा० |
| ष० | वाण्याः | वाण्योः | वाणीनाम् | सम्ब० |
| स० | वाण्याम् | वाण्योः | वाणीषु | अधि० |
| | हे वाणि | हे वाण्यौ | हे वाण्यः | सम्बो० |

[९७] ईकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'नदी' शब्दः (नदी, सरित्)

| | | | | |
|-------|---------|-----------|----------|---------|
| प्र० | नदी | नद्यौ | नद्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | नदीम् | नद्यौ | नदीः | कर्म |
| तृ० | नद्या | नदीभ्याम् | नदीभिः | करण |
| च० | नद्यै | नदीभ्याम् | नदीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | नद्याः | नदीभ्याम् | नदीभ्यः | अपा० |
| ष० | नद्याः | नद्योः | नदीनाम् | सम्ब० |
| स० | नद्याम् | नद्योः | नदीषु | अधि० |
| | हे नदि | हे नद्यौ | हे नद्यः | सम्बो० |

एवं कर्त्री, दण्डिनी, कुमारी, सुन्दरी, रमणी, बुद्धिमती,

कामिनी, श्रेयस्वी, मैत्री, पुत्री, नारी, प्रभृतयः ।

[९८] ईकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'सखी' शब्दः (सखी, सहेली)

| | | | | |
|-------|--------|-----------|---------|---------|
| प्र० | सखी | सख्यौ | सख्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | सखीम् | सख्यौ | सखीः | कर्म |
| तृ० | सख्या | सखीभ्याम् | सखीभिः | करण |
| च० | सख्यै | सखीभ्याम् | सखीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सख्याः | सखीभ्याम् | सखीभ्यः | अपा० |

(१) 'नदट्' इति पचादौ पाठात् टित्वान्ङीप् । 'गौरी' शब्दवत् साधनप्रकारो बोध्यः । (२) 'सख्यश्चिद्वीति भाषायाम्' इति ङीष्, अत्र 'लिङ्गविशिष्टपरिभाषया अनङादयस्तु न "विभक्तौ लिङ्गविशिष्टाऽप्रहणम्" (विभक्तिनिमित्तके कार्ये कर्तव्ये प्रातिपदिकप्रहणे लिङ्गविशिष्टस्य प्रहणं नास्तीत्यर्थः) इति भाष्योक्तपरिभाषया निषेधात्तेन गौरीवत् कार्यं ज्ञेयम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------|----------|----------|--------|
| प्र० | सख्याः | सख्योः | सखीनाम् | सम्ब० |
| द्वि० | सख्याम् | सख्योः | सखीषु | अधि० |
| | हे सखि | हे सख्यौ | हे सख्यः | सम्बो० |

[९९] ईकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'लक्ष्मी' शब्दः (माँ लक्ष्मी)

| | | | | |
|-------|-------------|---------------|--------------|---------|
| प्र० | लक्ष्मीः | लक्ष्म्यौ | लक्ष्म्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | लक्ष्मीम् | लक्ष्म्यौ | लक्ष्मीः | कर्म |
| तृ० | लक्ष्म्या | लक्ष्मीभ्याम् | लक्ष्मीभिः | करण |
| च० | लक्ष्म्यै | लक्ष्मीभ्याम् | लक्ष्मीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | लक्ष्म्याः | लक्ष्मीभ्याम् | लक्ष्मीभ्यः | अपा० |
| ष० | लक्ष्म्याः | लक्ष्म्योः | लक्ष्मीणाम् | सम्ब० |
| स० | लक्ष्म्याम् | लक्ष्म्योः | लक्ष्मीषु | अधि० |
| | हे लक्ष्मि | हे लक्ष्म्यौ | हे लक्ष्म्यः | सम्बो० |

एवम्-अवी-तरी-तन्त्री-प्रभृतयः ।

[१००] ईकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'स्त्री'शब्दः [औरत]

| | | | | |
|-------|--------------------|--------------|------------------|---------|
| प्र० | स्त्री | स्त्रियौ | स्त्रियः | कर्त्ता |
| द्वि० | स्त्रियम्-स्त्रीम् | स्त्रियौ | स्त्रियः-स्त्रीः | कर्म |
| तृ० | स्त्रिया | स्त्रीभ्याम् | स्त्रीभिः | करण |

(१) लक्षधातोः 'लक्ष्मिण्युट च' इति ईप्रत्यये मुडागमे च 'लक्ष्मी' शब्दः ।
अव्यन्तत्वाच्च सुलोपः । 'कृदिकारादि'ति ङीष्णि तु सुलोपो भवत्येवेति सिद्धान्तः ।
अत एव लक्ष्मीर्लक्ष्मी हरिप्रिये'ति द्विवचकोशस्सङ्गच्छते । शेषं गौरीवत् ।

(२) अवी-तन्त्री-तरी-लक्ष्मी-धी-ही-श्रीणामुणादिषु ।

सप्तस्त्रीलिङ्गशब्दानां न सुलोपो कदा चनः ॥ १ ॥

(३) स्यायतोऽस्यां शुक्रशोणिते इति स्त्री', स्त्यायतेर्ङुट 'लोपोव्योरि'ति य-
लोपः, टित्त्वान्ङीप् । अव्यन्तत्वात्सुलोपः । (४) स्त्रियाः । (५) 'वाऽम्शघोः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|------------|--------------|-------------|---------|
| च० | स्त्रियै | स्त्रीभ्याम् | स्त्रीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | स्त्रियाः | स्त्रीभ्याम् | स्त्रीभ्यः | अपा० |
| ष० | स्त्रियाः | स्त्रियोः | स्त्रीणाम् | सम्ब० |
| स० | स्त्रियाम् | स्त्रियोः | स्त्रीषु | अधि० |
| | हे स्त्रि | हे स्त्रियौ | हे स्त्रियः | सम्ब० |

[१०१] ह्रस्वान्तः पुंलिङ्गः 'अतिस्त्रि' शब्दः

(स्त्रीको जीतनेवाला जितेन्द्रिय)

| | | | | |
|-------|-------------------------------|-----------------|------------------------------|---------|
| प्र० | अतिस्त्रिः | अतिस्त्रियौ | अतिस्त्रियः | कर्ता |
| द्वि० | { अतिस्त्रियम् अतिस्त्रिम् | अतिस्त्रियौ | अतिस्त्रिभ्यः अतिस्त्रीन् | कर्म |
| तृ० | अतिस्त्रिणा | अतिस्त्रिभ्याम् | अतिस्त्रिभिः | करण |
| च० | अतिस्त्रिये | अतिस्त्रिभ्याम् | अतिस्त्रिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अतिस्त्रेः | अतिस्त्रिभ्याम् | अतिस्त्रिभ्यः | अपा० |
| ष० | अतिस्त्रेः | अतिस्त्रियोः | अतिस्त्रीणाम् | सम्ब० |
| स० | अतिस्त्रौ | अतिस्त्रियोः | अतिस्त्रिषु | अधि० |
| | हे अतिस्त्रे | हे अतिस्त्रियौ | हे अतिस्त्रियः | सम्ब० |

(१) 'यूत्राख्यौ नदी । आप्नद्या' । 'आटश्च' । 'स्त्रियाः' । (२) इयङ् वाधित्वा परत्वाद्गुट् । (३) डेराम्, इयङ् । (४) प्रसङ्गात् पुंसि विशेषं दर्शयति । स्त्रियमतिक्रान्तः यः इति विग्रहे 'अत्यादयः' इति समासः । गोस्त्रियोरिति ह्रस्वः । दीर्घरूपवचनत्वाभावात् सुलोपः । (५) एरुदेशविद्धतन्यायेन (स्थानिवद्भावेन) 'स्त्रियाः' इत्ययङ् । (६) 'जसि च' । जस्, टा, ङसि, ङस्, आम्, ङीत्येतेषु 'अतिस्त्रि' शब्दस्य इयङ् नेत्येतत् शनोकेन षड्गुह्याति—

गुणनाभावौत्वनुद्धिः परत्वात् पुंसि वाच्यते ।

क्रीवे नुमा च स्त्रीशब्दस्येयङित्यवधार्यताम् ॥

पुंसि गुण-नाभाव-औत्त्व-नुद्धिः, क्रीवे नुमा च परत्वात् स्त्रीशब्दस्य इयङ् वाच्यते 'इत्यवधार्यतामित्यन्वयः । (७) वाऽम्शसोः । (८) परत्वात् धिसंज्ञाप्रयुक्तकार्यं हरिवत् भवति । (९) 'ह्रस्वस्य गुणः' ।

[१०२] ह्रस्वान्तो नपुंसकलिङ्गः 'अतिस्त्रि' शब्दः
(स्त्रीको जीतने वाला-जितेन्द्रिय, कुल)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---|------------------------------|----------------|---------|
| प्र० | अतिस्त्रि | अतिस्त्रिणी | अतिस्त्रिणी | कर्त्ता |
| द्वि० | अतिस्त्रि | अतिस्त्रिणी | अतिस्त्रिणी | कर्म |
| तृ० | अतिस्त्रिणा | अतिस्त्रिभ्याम् | अतिस्त्रिभिः | करण |
| च० | { अतिस्त्रिये अतिस्त्रिणे | अतिस्त्रिभ्याम् | अतिस्त्रिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { अतिस्त्रेः अतिस्त्रिणः | अतिस्त्रिभ्याम् | अतिस्त्रिभ्यः | अपा० |
| ष० | { अतिस्त्रेः अतिस्त्रिणः | अतिस्त्रियोः अतिस्त्रिणोः | अतिस्त्रिणाम् | सम्ब० |
| स० | { अतिस्त्रौ अतिस्त्रिणि | अतिस्त्रियोः अतिस्त्रिणोः | अतिस्त्रिषु | अधि० |
| | { हे ^६ अतिस्त्रे हे अतिस्त्रि | हे अतिस्त्रिणी | हे अतिस्त्रिणी | सम्बो० |

[१०३] ह्रस्वान्तः स्त्रीलिङ्गः 'अतिस्त्रि' शब्दः
(स्त्रीको पराजीत करने वाली)

| | | | | |
|-------|-------------------------------|-------------|---------------------------|---------|
| प्र० | अतिस्त्रिः | अतिस्त्रियौ | अतिस्त्रियः | कर्त्ता |
| द्वि० | { अतिस्त्रियम् अतिस्त्रिमू | अतिस्त्रियौ | अतिस्त्रियः अतिस्त्रीः | कर्म |

(१) द्वियमतिक्रान्तं कुलम् 'अतिस्त्रि' । 'स्वमोर्नपुंसकात् । (२) 'नपुंसकाच्च' । इति शीभावे इयङ् बाधित्वा परत्वात् 'इकोऽचि विभक्तौ' । (३) 'शिसर्वनामस्थानमि' त्युक्तत्वाद्दीर्घः । णत्वम् । (४) इयङ् नुमं च बाधित्वा धित्वाच्चाभावः । अत्र 'तृतीयादिष्वि'ति पुंवत्वे तदभावे च रूपे न विशेषः अत एवोक्तं कौमुद्यां- 'हेप्रभृतावि'ति । (५) 'तृतीयादिष्वि'ति पुंवद्भावपक्षे पुल्लिङ्गाऽतिस्त्रिशब्दवत् । पुंवत्त्वाभावपक्षे तु नुमि'वारिवत् सर्वं बोध्यम् । (६) वारिवत् । (७) द्वियमतिक्रान्ता या इति विग्रहः प्रथमा-द्वितीययोः पुंवत् केवलं शशिनत्वमिति विशेषः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|------------------------------|-----------------|-------------------|---------|
| तृ० | अतिस्त्रिया | अतिस्त्रिभ्याम् | अतिस्त्रिभिः | करण |
| च० | { अतिस्त्रियै अतिस्त्रिये | अतिस्त्रिभ्याम् | अतिस्त्रिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { अतिस्त्रियाः अतिस्त्रेः | अतिस्त्रिभ्याम् | अतिस्त्रिभ्यः | अपा० |
| ष० | { अतिस्त्रियाः अतिस्त्रेः | अतिस्त्रियोः | अतिस्त्रीणाम् | सम्ब० |
| स० | { अतिस्त्रियाम् अतिस्त्रौ | अतिस्त्रियोः | अतिस्त्रिषु | अधि० |
| | हे अतिस्त्रे | हे अतिस्त्रियौ | हे अतिस्त्रियः | सम्बो० |
| [१०४] ईकारान्तः स्त्रीलिङ्ग 'श्री' शब्दः (लक्ष्मी, शोभा) | | | | |
| प्र० | श्रीः | श्रियौ | श्रियः | कर्त्ता |
| द्वि० | श्रियम् | श्रियौ | श्रियः | कर्म |
| तृ० | श्रिया | श्रीभ्याम् | श्रीभिः | करण |
| च० | श्रियै-श्रिये | श्रीभ्याम् | श्रीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | श्रियाः-श्रियः | श्रीभ्याम् | श्रीभ्यः | अपा० |
| ष० | श्रियाः-श्रियः | श्रियोः | श्रीणाम्-श्रीयाम् | सम्ब० |

(१) स्त्रीलिङ्गत्वात्त्वाभावे 'इयङ्' । (२) 'ङिति ह्रस्वश्च' इत्यत्र चकारात् इय-
 ङुवङ्स्थानौ स्त्रीशब्दभिन्नौ नित्यस्त्रीलिङ्गावीदृतौ नदीसंज्ञौ वा स्तो ङिति परे, इत्य-
 र्थकङिति' इत्येकं वाक्यम् । ततः-स्त्रीलिङ्गौ ह्रस्वौ चेषणोवणौ 'नदीसंज्ञौ वास्तो-
 ङिति परे इत्यर्थक 'ह्रस्वः' इत्यपरं वाक्यम् । एवञ्च अपरवाक्यात् 'अतिस्त्रिश-
 ङ्दस्य ङित्सु नदीत्वविविकल्पो भवति । 'अस्त्री'ति पर्युदास्तु न-इयङ्गुवङ्स्थानाविति
 यत्रान्वयेति तत्रैव तत्सम्बन्धस्याऽस्त्रीत्यस्याऽनुवृत्तिरुचितत्वात् । नदीत्वाभावपक्षे
 तु पुंवत् । (३) श्रयन्ति एताम् इति श्रीः । 'क्विवचिप्रच्छिश्रिसुद्रुप्रुज्वा दीर्घोऽस-
 म्प्रसारणञ्' इति क्विप् ऋतेदीर्घश्च । अङ्गन्तत्वात् सुलोपः । (४) धात्ववयव-
 त्वात् इयङ् । (५) 'नेयङ्गुवङ्स्थानावस्त्री' इति सूत्रं प्रबाध्य 'ङिति ह्रस्वश्चे'ति
 नदीत्वो विकल्पः । अभावपक्षे सर्वत्र इयङ् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--|-------------|------------|---------|
| ख० | श्रियाम्-श्रियि | श्रियोः | श्रीषु | अधि० |
| | हे श्रीः | हे श्रियौ | हे श्रियः | सम्बो० |
| [१०५] | ईकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'प्रधी' शब्दः (उच्च ध्यान करनेवाली) | | | |
| प्र० | प्रधीः | प्रध्यौ | प्रध्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रध्यम् | प्रध्यौ | प्रध्यः | कर्म |
| तृ० | प्रध्या | प्रधीभ्याम् | प्रधीभिः | करण |
| च० | प्रध्वै | प्रधीभ्याम् | प्रधीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रध्याः | प्रधीभ्याम् | प्रधीभ्यः | अपा० |
| ष० | प्रध्याः | प्रध्योः | प्रधीनाम् | सम्ब० |
| स० | प्रध्याम् | प्रध्योः | प्रधीषु | अधि० |
| | हे प्रधि | हे प्रध्यौ | हे प्रध्यः | सम्बो० |

[१०६] ईकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'ग्रामणी' शब्दः ।

| | | | | |
|------|---------|-------------------------|-----------|---------|
| प्र० | ग्रामणी | ग्रामण्यौ | ग्रामण्यः | कर्त्ता |
| | | पूर्वेत् रूपं बोध्यम् । | | |

(१) नेयङि'ति नदीत्वनिषेधात् 'अम्वाथे' ति ह्रस्वो न । (२) लक्ष्मीवत् । (३) प्रकृष्टा धीर्यस्याः, प्रकर्षेण ध्यायति वेति विग्रहे 'यू खाख्यौ नदी' । नचैवं द्वि-
तीयविग्रहे प्रधीशब्दस्य क्रियाशब्दतया त्रिलिङ्गत्वेन नित्यस्त्रीत्वाभावात् नदीसंज्ञा
कथमिति वाच्यम् 'पदान्तरं विनापि स्त्रियां वर्तमानत्वमिति नित्यस्त्रीत्वस्वीकारेण-
दोषादिति वृत्तिकारादयः । पदान्तरमिति—पदान्तरासमभिव्याहाराऽभावेपि शब्दः
स्त्रीरूपार्थबोधकः स नित्यः स्त्रीलिङ्गः इत्यर्थः । कैयटमते तु लिङ्गान्तरानभिधाय-
कत्वं नित्यस्त्रीत्वमिति । तन्मते पुंवद्रूपम्, लिङ्गान्तरेति—स्त्रीलिङ्गान्यलिङ्गानभिधाय-
कत्वमेव नित्यस्त्रीत्वमित्यर्थः । एवञ्च प्रकृष्टा धीरिति विग्रहे द्वयोर्मते लक्ष्मीवदेवे-
ति । (४) नच ग्रामं नयति=नियमयतीति ग्रामणीशब्दस्य प्रधीशब्दवत् पदान्तरं
विनापि स्त्रियां वर्तमानत्वात् नित्यस्त्रीत्वेन नदीकार्यस्य दुर्वारत्वात् कथं पुंवदिति
चेत्सत्यम्, ग्रामनयनस्य लोके उत्सर्गतः = सामान्यतः, पुंघर्मतया = पुरुषकर्तव्य

[१०७] उकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'धेनु' शब्दः (नई व्याई गौ)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------------|------------|----------|---------|
| प्र० | धेनुः | धेनू | धेनवः | कर्त्ता |
| द्वि० | धेनुम् | धेनू | धेनूः | कर्म |
| तृ० | धेन्वा | धेनुभ्याम् | धेनुभिः | करण |
| च० | धेन्वै, धेनवे | धेनुभ्याम् | धेनुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | धेन्वाः, धेनोः | धेनुभ्याम् | धेनुभ्यः | अपा० |
| ष० | धेन्वाः, धेनोः | धेन्वोः | धेनूनाम् | सम्ब० |
| स० | धेन्वाम्, धेनौ | धेन्वोः | धेनुषु | अधि० |
| | हे धेनो | हे धेनू | हे धेनवः | सम्बो० |

एवमेव-रज्जु-रेणु-लयु-खरु-हनु-तनु-प्रभृतयः ।

[१०८] उकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'क्रोष्टु' शब्दः (गिदड़नी)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------------|------------------|----------------|---------|
| प्र० | क्रोष्ट्री | क्रोष्ट्र्यौ | क्रोष्ट्र्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | क्रोष्ट्रीम् | क्रोष्ट्र्यौ | क्रोष्ट्रीः | कर्म |
| तृ० | क्रोष्ट्र्या | क्रोष्ट्रीभ्याम् | क्रोष्ट्रीभिः | करण |
| च० | क्रोष्ट्र्यै | क्रोष्ट्रीभ्याम् | क्रोष्ट्रीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | क्रोष्ट्र्याः | क्रोष्ट्रीभ्याम् | क्रोष्ट्रीभ्यः | अपा० |
| ष० | क्रोष्ट्र्याः | क्रोष्ट्र्योः | क्रोष्ट्रीणाम् | सम्ब० |

तया, पदान्तर—(ब्राह्मणीत्यादि) समभिव्याहारं विना स्त्रीलिङ्गाऽप्रतीतिः । एवञ्च वृत्तिकारमतेऽपि नित्यस्त्रीत्वाभावात् नदीत्वाभावेन पुंनदेवेति सिद्धान्तः । एवं खलपूः-कटपूः-इत्यादिशब्दानामपि वृत्तिकारादिमतेऽपि नित्यस्त्रीत्वाभावात् पुंनदेव रूपं ज्ञेयम् । (१) उकारस्य गुणावादेशौ, शेषं कार्यं सर्वत्र मति-शब्दवत् बोध्यम् । (२) 'स्त्रियां च' इति तृज्वद्धावे 'ऋनेभ्यो ङीप्' इति ङीपि क्रोष्टु × ई इति स्थिते यणि क्रोष्ट्रीशब्दात् सुबुत्पत्तिः । वस्तुतस्तु 'स्त्रियां च' इत्यस्याङ्गत्वात् अङ्गेन प्रत्ययस्याक्षेपात् विभक्तौ परतः एवात्र तृज्वद्धावः ततो ङीबिति बोध्यम् । अन्यत् कार्यं गौरीवत् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----|---------------|-------------------------|----------------|--------|
| स० | क्रोष्ट्याम् | क्रोष्ट्याः | क्रोष्ट्रीषु | अधि० |
| | हे क्रोष्ट्रि | हे क्रोष्ट्र्या | हे क्रोष्ट्रथः | सम्बो० |
| | | एवम् उष्ट्री प्रभृतयः । | | |

[१०९] ऊकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'वधू' शब्दः (बहु जी)

| | | | | |
|-------|---------|-----------|----------|---------|
| प्र० | वधूः | वध्वौ | वध्वः | कर्त्ता |
| द्वि० | वधूम | वध्वौ | वधूः | कर्म |
| तृ० | वध्वा | वधूभ्याम् | वधूमिः | करण |
| च० | वध्वै | वधूभ्याम् | वधूभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | वध्वाः | वधूभ्याम् | वधूभ्यः | अपा० |
| ष० | वध्वाः | वध्वोः | वधूनाम् | सम्ब० |
| स० | वध्वाम् | वध्वोः | वधूषु | अधि० |
| | हे वधु | हे वध्वौ | हे वध्वः | सम्बो० |

एवं श्वश्रू-कर्कन्धू-जम्बू-चम्बू-यवागू-अन्दू-इत्यादयः ऊकारान्ताः ।

[११०] ऊकारान्त-स्त्रीलिङ्गो 'भ्रू' शब्दः (भ्रूकुटी, भौंह)

| | | | | |
|-------|----------------|------------|-------------------|---------|
| प्र० | भ्रूः | भ्रुवौ | भ्रुवः | कर्त्ता |
| द्वि० | भ्रुवम् | भ्रुवौ | भ्रुवः | कर्म |
| तृ० | भ्रुवा | भ्रुभ्याम् | भ्रुमिः | करण |
| च० | भ्रुवै-भ्रुवे | भ्रुभ्याम् | भ्रुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | भ्रुवाः-भ्रुवः | भ्रुभ्याम् | भ्रुभ्यः | अपा० |
| ष० | भ्रुवाः-भ्रुवः | भ्रुवोः | भ्रुणाम्-भ्रुवाम् | सम्ब० |

(१) वहधातोः 'वहो धश्च' इति ऊप्रत्ययेः हस्य धश्चादेशे वधूशब्दः । (२) धात्ववयवोवर्णाभावाद्बुवडादेशाऽप्राप्तया यण्, अस्यापि साधनप्रकारो गौरीशब्द-वत् बोध्यम् । (३) भ्रमतीति भ्रूः 'भ्रमतेश्च ड्' इति भ्रमतेर्ङ्प्रत्यये डित्वा-द्विलोपः । (४) 'अचिःसुधातुभ्रुवामि' रयुवडि, श्रीशब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|---|--|--------------------------|--------------------------|----------------|
| स० | भ्रवाम्-भ्रुवि हे भ्रुः | भ्रुवोः हे भ्रुवौ | भ्रुषु हे भ्रुवः | अधि० सम्बो० |
| [१११] अकारान्तः स्त्रीलिङ्ग 'सुभ्रू' शब्दः (सुन्दर भौंह वाली) | | | | |
| प्र० | सुभ्रूः | सुभ्रुवौ | सुभ्रुवः | कर्त्ता |
| द्वि० | सुभ्रुषम् | सुभ्रुवौ | सुभ्रुवः | कर्म |
| तृ० | सुभ्रुवा | सुभ्रुभ्याम् | सुभ्रुभिः | करण |
| च० | { सुभ्रुवै सुभ्रुवे | सुभ्रुभ्याम् | सुभ्रुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { सुभ्रुवाः सुभ्रुवः | सुभ्रुभ्याम् | सुभ्रुभ्यः | अपा० |
| ष० | { सुभ्रुवाः सुभ्रुवः | सुभ्रुवोः | सुभ्रुणाम् सुभ्रुवाम् | सम्ब० |
| स० | { सुभ्रुवाम् सुभ्रुवि हे सुभ्रुः | सुभ्रुवोः हे सुभ्रुवौ | सुभ्रुषु हे सुभ्रुवः | अधि० सम्बो० |

(१) सु = शोभना भूर्यस्याः इति बहुव्रीहिः, 'अमेश्च इः' इति विहितस्य इ-प्रत्ययस्य स्त्रीप्रत्ययाभावात् समासे कृते 'गोस्त्रियोः' इति ह्रस्वो न । (२) 'अचिश्नुधातुभ्रुवाम्' इति उवङ् । (३) 'ङितिह्रस्वश्च' इति नदीत्वपक्षे आट्, वृद्धिः, उवङ् । नदीत्वाभावे उबङि 'सुभ्रुवे' इति । एवं सिद्धसोरपि बोध्यम् । (४) 'वामि' इति नदीत्वे नुटि दीर्घे णत्वम्, विकल्पपक्षे उवङ् । (५) नदीत्वे डेराम्, आट्, उवङ् । नदीत्वाभावपक्षे तु उवङेव । (६) 'नेयङुबङ्' इति भ्रूशब्दस्य तदन्तस्य (सुभ्रूशब्दस्य) च 'यूस्त्राख्यौ नदी' इति प्राप्तनदीत्वस्य निषेधात् 'अम्बाथे'ति ह्रस्वो न । नचैवं "हा पितः क्वासि हे सुभ्रु" (हे सुभ्रु = सीते, क्वासि = कुत्र वतते, (त्वायाऽहं रामः) हापितः त्याजितः, विधिनेति शेषः) इति भट्टिप्रयोगोऽनुपपन्नः इति वाच्यम्, सीताविरहव्यथितस्य रामस्य प्रमादत् निःसरितेयमुक्तिरिति बहवः । अन्ये तु 'सामान्ये नपुंसकम्' इति कथंचित् समादधुः ।

[११२] ऊकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'खलपू' शब्दः
(खलिहान को सफा करने वाली)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------|------------|-----------|---------|
| प्र० | खलपूः | खलप्वौ | खलप्वः | कर्त्ता |
| द्वि० | खलप्वम् | खलप्वौ | खलप्वः | कर्म |
| तृ० | खलप्वा | खलपूभ्याम् | खलपूभिः | करण |
| च० | खलप्वे | खलपूभ्याम् | खलपूभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | खलप्वः | खलपूभ्याम् | खलपूभ्यः | अपा० |
| ष० | खलप्वः | खलप्वोः | खलप्वाम् | सम्ब० |
| स० | खलप्वि | खलप्वोः | खलपूषु | अधि० |
| | हे खलपूः | हे खलप्वौ | हे खलप्वः | सम्बो० |

[११३] ऊकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'पुनर्भू' शब्दः
(पुनर्विवाहिता स्त्री)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | पुनर्भूः | पुनर्भवौ | पुनर्भवः | कर्त्ता |
| द्वि० | पुनर्भवम् | पुनर्भवौ | पुनर्भवः | कर्म |
| तृ० | पुनर्भवा | पुनर्भूभ्याम् | पुनर्भूभिः | करण |
| च० | पुनर्भवे | पुनर्भूभ्याम् | पुनर्भूभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | पुनर्भवाः | पुनर्भूभ्याम् | पुनर्भूभ्यः | अपा० |
| ष० | पुनर्भवाः | पुनर्भवोः | पुनर्भूणाम् | सम्ब० |
| स० | पुनर्भवाम् | पुनर्भवोः | पुनर्भूपु | अधि० |
| | हे पुनर्भूः | हे पुनर्भवौ | हे पुनर्भवः | सम्बो० |

(१) खलं पुनातीति खलपूः खलपवनस्योत्सर्गतः पुं धर्मतया पदान्तरं विना
त्रियां वर्तमानत्वाभावेन नित्यस्त्रीत्वाभावात् नदीसंज्ञा न भवति, एवंच पुं वत् कार्यं
बोध्यम् । (२) पुनश्च भवतीति पुनर्भूः । (३) 'दृन्करे'ति यण् । (४) 'दृन्करे'
ति यणा उवचो बाधनेन 'नेयद्बुवद्' इति निषेधस्याप्रवृत्त्या 'यूस्त्राख्यौ' इति नदीत्वे
दत्प्रयुक्तकार्यं ज्ञेयम् । (५) नदीत्वाद्गुटि समानपदत्वाभावेपि 'एकाजुत्तरे'ति णत्वम् ।

[११४] ऊकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'वर्षाम्' शब्दः (मेढक, दादुर)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------------------------------|-----------------|------------------------------------|---------|
| १० | वर्षाम् | वर्षाम्भौ | वर्षाम्भवः | कर्त्ता |
| द्वि० | वर्षाम्भ्यम् | वर्षाम्भौ | वर्षाम्भवः | कर्म |
| तृ० | वर्षाम्भा | वर्षाम्भूभ्याम् | वर्षाम्भूमिः | करण |
| च० | { वर्षाम्भवे (वर्षाम्भवे) | वर्षाम्भूभ्याम् | वर्षाम्भूभ्यः | सम्प्र० |
| प० | { वर्षाम्भवः (वर्षाम्भाः) | वर्षाम्भूभ्याम् | वर्षाम्भूभ्यः | अपा० |
| ष० | { वर्षाम्भवः (वर्षाम्भाः) | वर्षाम्भवोः | वर्षाम्भ्वाम् (वर्षाम्भूणाम्) | सम्ब० |
| स० | { वर्षाम्भिव (वर्षाम्भवाम्) | वर्षाम्भवोः | वर्षाम्भूषु | अधि० |
| | { हे वर्षाम्भूः (हे वर्षाम्भु) | हे वर्षाम्भवौ | हे वर्षाम्भवः | सम्बो० |

[११५] ऊकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'स्वयम्भू' शब्दः

(१) 'वद्वादिभ्यश्च' इति ङीषो वैकल्पिकत्वपक्षे 'वर्षाम्भू' शब्दः । ङीषि पक्षे तु 'वर्षाम्भवी' शब्दो बोध्यः, अत एव—“शिली गण्डूपदी भेकी वर्षाम्भवी कमठी डुलिः” इत्यमरकोशे 'वर्षाम्भवी' शब्दो दृश्यते । वर्षाम्भु भवतीति वर्षाम्भूः (भेकः) । (२) अजादौ 'एरनेकावः' इति यणः 'न भूसुधियोः' इति निषेधे प्राप्ते 'वर्षाम्भ्वश्च' इति यण् । (३) अमृशसोरपि पूर्वरूपं पूर्वसवर्णदौर्घं च बाधित्वा 'वर्षाम्भ्वश्चे' ति यण् । (४) 'भेक्यां पुनर्नवार्यां स्त्री वर्षाम्भूर्दुर्दुरे पुमान्' इति यादवोक्त्या भेकजातौ वर्षाम्भूशब्दस्य द्विलिङ्गत्वेन—“लिङ्गान्तराऽनभिधायकत्वं नित्यस्त्रीत्वम्” इति कैय-टोक्त्या नित्यस्त्रीत्वाभावात् नदीत्वाभावेन यण् । “पदान्तरं विनाऽपि स्त्रियां वर्त-मानत्वं नित्यस्त्रीत्वम्” इति वृत्तिकारादीनां मते तु वर्षाम्भूशब्दस्य जातिशब्दतया गङ्गा, माला, शब्दवत् पदान्तरं विनापि स्त्रियां वर्तमानतया नित्यस्त्रीत्वात् 'यूष्मा-रूपी' इति नदीत्वेन तत्प्रयुक्तकार्यं भवत्येवेति तन्मते कोष्ठान्तर्गतं रूपं बोध्यम् ।

(स्वयं पैदा होने वाली)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------|----------------|---------------|---------|
| प्र० | स्वयम्भूः | स्वयम्भुवौ | स्वयम्भुवः | कर्त्ता |
| द्वि० | स्वयम्भुवम् | स्वयम्भुवौ | स्वयम्भुवः | कर्म |
| तृ० | स्वयम्भुवा | स्वयम्भूभ्याम् | स्वयम्भूमिः | करण |
| च० | स्वयम्भुवे | स्वयम्भूभ्याम् | स्वयम्भूभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | स्वम्भुवः | स्वम्भूभ्याम् | स्वम्भूभ्यः | अपा |
| ष० | स्वयम्भुवः | स्वयम्भुवोः | स्वयम्भुवाम् | सम्ब० |
| स० | स्वयम्भुवि | स्वयम्भुवोः | स्वयम्भूषु | अधि० |
| | हे स्वयम्भूः | हे स्वयम्भुवौ | हे स्वयम्भुवः | सम्बो० |

[११६] ऋकारान्तः स्त्रीलिङ्ग 'स्वसृ' शब्दः (वहन)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------|-------------|------------|---------|
| प्र० | स्वसा | स्वसारौ | स्वसारः | कर्त्ता |
| द्वि० | स्वसारम् | स्वसारौ | स्वसृः | कर्म |
| तृ० | स्वस्रा | स्वसृभ्याम् | स्वसृभिः | करण |
| च० | स्वस्रे | स्वसृभ्याम् | स्वसृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | स्वसुः | स्वसृभ्याम् | स्वसृभ्यः | अपा० |
| ष० | स्वसुः | स्वस्रोः | स्वसृणाम् | सम्ब० |
| स० | स्वसरि | स्वस्रोः | स्वसृषु | अधि० |
| | हे स्वसः | हे स्वसारौ | हे स्वसारः | सम्बो० |

(१) स्वयं भवतीति स्वयम्भूः । “स्वयंभूश्चतुराननः” इति कोशात् स्वयम्भू-शब्दस्य चतुरानने रूढत्वात् तस्य यौगिकस्य पदान्तरं विना स्त्रियामवृत्तेरिति वृत्ति-कारादीनां मतेऽपि न नित्यस्त्रीत्वम्, कैयटमते तु अनेकलिङ्गत्वात् नित्यस्त्रीत्वा-भावः सुस्पष्ट एवेति । एवञ्च उभयमपेऽपि स्वयम्भूशब्दस्य पुंवत् रूपं ज्ञेय-मिति तत्त्वम् । (२) सु उपपदात् अस् धातोः ‘सावसेर्ऋन्’ इत्युणादिसूत्रेण ऋनि प्रत्यये यणि ‘स्वसृ’ शब्दः तस्मात् ‘ऋनेभ्यः’ इति ङीप्प्राप्तः ‘न षट्स्वसादिभ्यः’ इति निषेधात् भवति । ‘ऋदुसनस्र’ इत्यनङि अप्तृञिति दीर्घः । (३) ‘ऋतो ङीगिति गुणे अप्तृञिति दीर्घः । (४) ‘ऋत उत’ । (५) ‘ऋतो ङीगिति गुणे हल्ङ्वादिङोपे विसर्गः ।

[११७] ऋकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'ननान्द' शब्दः (ननद)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | ननान्दा | ननान्दरौ | ननान्दरः | कर्त्ता |
| द्वि० | ननान्दरम् | ननान्दरौ | ननान्दः | कर्म |
| तृ० | ननान्द्रा | ननान्दभ्याम् | ननान्दभिः | करण |
| च० | ननान्द्रे | ननान्दभ्याम् | ननान्दभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | ननान्दुः | ननान्दभ्याम् | ननान्दभ्यः | अपा० |
| ष० | ननान्दुः | ननान्द्रोः | ननान्दृणाम् | सम्ब० |
| स० | ननान्दरि | ननान्द्रोः | ननान्देषु | अधि० |
| | हे ननान्दः | हे ननान्दरौ | हे ननान्दरः | सम्बो० |

[११८] ऋकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'दुहितृ' शब्दः (कन्या)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------|----------------|--------------|---------|
| प्र० | दुहिता | दुहितरौ | दुहितरः | कर्त्ता |
| द्वि० | दुहितरम् | दुहितरौ | दुहितृः | कर्म |
| तृ० | दुहित्रा | दुहित्रिभ्याम् | दुहित्रिभिः | करण |
| च० | दुहित्रे | दुहित्रिभ्याम् | दुहित्रिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | दुहितुः | दुहित्रिभ्याम् | दुहित्रिभ्यः | अपा० |
| ष० | दुहितुः | दुहित्रोः | दुहितृणाम् | सम्ब० |
| स० | दुहितरि | दुहित्रोः | दुहित्रिषु | अधि० |
| | हे दुहितः | हे दुहितरौ | हे दुहितरः | सम्बो० |

[११९] ऋकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'यातृ' शब्दः (यह एक नाम परस्पर दिवराणी जिठानी (छोटी बड़ी दयादनी) का है

(१) न नन्दति = कृतायामपि सेवायां न तुष्यति, इति ननान्दा 'नञि च नन्देः' इत्युणादिसूत्रेण 'द्वनदि संवृद्धौ' इत्यस्माद्धातोः नञि उपपदे ऋन्, अनञा-दिकार्यं मातृशब्दवत् ज्ञेयम् । (२) दोषिश्च दुहिता, 'नप्तृनेष्टृत्वष्टृ' इत्युणादि सूत्रेण निपातनात् दुद्धातोः तृचि इटि गुणाऽभावे च 'दुहितृ' शब्दः अनञादि-कार्यं मातृशब्दवत् बोध्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------|------------|----------|---------|
| प्र० | याता | यातरौ | यातरः | कर्त्ता |
| द्वि० | यातरम् | यातरौ | यातृः | कर्म |
| तृ० | यात्रा | यातृभ्याम् | यातृभिः | करण |
| च० | यात्रे | यातृभ्याम् | यातृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | यातुः | यातृभ्याम् | यातृभ्यः | अपा० |
| ष० | यातुः | यात्रोः | यातृणाम् | सम्ब० |
| स० | यातरि | यात्रोः | यातृषु | अधि० |
| | हे यातः | हे यातरौ | हे यातरः | सम्बो० |

[१२०] ऋकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'मातृ' शब्दः (माता)

| | माता | मातरौ | मातरः | कर्त्ता |
|-------|---------|------------|----------|---------|
| प्र० | माता | मातरौ | मातरः | कर्त्ता |
| द्वि० | मातरम् | मातरौ | मातृः | कर्म |
| तृ० | मात्रा | मातृभ्याम् | मातृभिः | करण |
| च० | मात्रे | मातृभ्याम् | मातृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | मातुः | मातृभ्याम् | मातृभ्यः | अपा० |
| ष० | मातुः | मात्रोः | मातृणाम् | सम्ब० |
| स० | मातरि | मात्रोः | मातृषु | अधि० |
| | हे मातः | हे मातरौ | हे मातरः | सम्बो० |

(१) यतते इति याता, 'यतेवृद्धिश्च' इत्युणादिसूत्रेण ऋनि उपधावृद्धौ 'यातृ' शब्दो निष्पन्नः । "भार्यास्तु भ्रातृवर्गस्य यातरः स्युः परस्परम्" इत्यमरः । मातृ-शब्दवत् अनडादिकार्यं बोध्यम् । (२) मान्यते पूज्यते इति माता, 'मात्र पूजा-याम्' इत्यस्माद्धातोः 'नप्तृनेष्टृ' इत्युणादिसूत्रेण निपातनात् तृचि नलोपश्च अनडा-दिकार्यं पितृशब्दवत् । (३) 'अप्तृञि'ति सूत्रे नप्त्रादिग्रहणेन 'भौणादिभृत्तृ-जन्तादिषु दप्त्रादीनामेव दीर्घ इति प्रागुक्तं न विस्मर्तव्यम् । तथा च 'पितृ' शब्दवत् मातृशब्दस्याऽपि साधनप्रकारो बोध्यः । केवलं शसि विभक्तौ स्त्रीत्वात् नत्वाऽभावः इति विशेषः ।

[१२१] ओकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'द्यौ' शब्दः (आकाश)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------|------------|-----------|---------|
| प्र० | द्यौः | द्यावौ | द्यावः | कर्त्ता |
| द्वि० | द्याम् | द्यावौ | द्याः | कर्म |
| तृ० | द्यावा | द्योभ्याम् | द्योभिः | करण |
| च० | द्यवे | द्योभ्याम् | द्योभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | द्योः | द्योभ्याम् | द्योभ्यः | अपा० |
| ष० | द्योः | द्यवोः | द्यवाम् | सम्ब० |
| स० | द्यवि | द्यवोः | द्योषु | आधि० |
| | हे द्यौः | हे द्यावौ | हे द्यावः | सम्बो० |

[१२२] ऐकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'रौ' शब्दः (धन--संपत्ति)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------|---------|--------|---------|
| प्र० | रौः | रायौः | रायः | कर्त्ता |
| द्वि० | रायम् | रायौ | रायः | कर्म |

इत्यादि पुंष्वत् ।

[१२३] औकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'नौ' शब्दः (नाव)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------|----------|--------|---------|
| प्र० | नौः | नावौ | नावः | कर्त्ता |
| द्वि० | नावम् | नावौ | नावः | कर्म |
| तृ० | नावा | नौभ्याम् | नौभिः | करण |
| च० | नावे | नौभ्याम् | नौभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | नावः | नौयाम् | नौभ्यः | अपा० |
| ष० | नावः | नावोः | नावाम् | सम्ब० |

(१) 'गमेर्बोः' इति सूत्रे बहुलप्रहणस्य वक्ष्यमाणत्वेन, बाहुलकात् द्युतेरपि लोप्रत्यये डित्वाङ्लोपे 'द्यौ' शब्दः, तस्मात् सौ 'ओतो गित्' इति णिद्वद्भावात् इदौ रुत्वे विसर्गे साधुः । एवं च 'गो' शब्दवत् कार्यं बोध्यम् । (२) रात्येनमिति राः । 'राः स्त्रीत्येके' इति क्षीरस्वाम्युक्तेः स्त्रीलिङ्गोप्ययमिति । 'रायो हलि' इति सूत्रेण आत्वादिकार्यं तु पुंष्वदेव बोध्यम् । (३) ग्लानुदिभ्यां द्यौः इति ङीप्रत्यये

| | | | | |
|----|--------|---------|---------|--------|
| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| स० | नावि | नावोः | नौषु | अधि० |
| | हे नौः | हे नावौ | हे नावः | सम्बो० |

इति अजन्तस्त्रीलिङ्गशब्दाः ॥ २ ॥

अथ अजन्तनपुंसकलिङ्गशब्दाः ॥ ३ ॥

[१२४] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'ज्ञान' शब्दः (बुद्धि)

| | | | | |
|-------|-------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | ज्ञानम् | ज्ञाने | ज्ञानानि | कर्त्ता |
| द्वि० | ज्ञानम् | ज्ञाने | ज्ञानानि | कर्म |
| तृ० | ज्ञानेन | ज्ञानाभ्याम् | ज्ञानैः | करण |
| च० | ज्ञानाय | ज्ञानाभ्याम् | ज्ञानेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | ज्ञानात्-द् | ज्ञानाभ्याम् | ज्ञानेभ्यः | अपा० |
| ष० | ज्ञानस्य | ज्ञानयोः | ज्ञानानाम् | सम्ब० |
| स० | ज्ञाने | ज्ञानयोः | ज्ञानेषु | अधि० |
| | हे ज्ञान | हे ज्ञाने | हे ज्ञानानि | सम्बो० |

द्वित्वाट्टिलोपे नौशब्दः । तस्य हलादौ न कश्चिद्विकारः । अजादौ तु अवादेशे 'ग्लौ' शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् ।

इति सोत्तरा कौमुदीरूपलतायाम् अजन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरणम् ॥ २ ॥

(१) ज्ञमिज्ञानम् । ल्युट् 'युवौरनाको' । कृत्तद्धिते'ति प्रातिपादिकात् सुबुत्पत्तिः तस्य 'स्वमोर्नपुंसकादिति लुकि प्राप्ते 'अतोऽम्' इत्यमि 'अभिपूर्वः । (२) 'नपुंसकाच्च' इति शीभावे कृते 'सुबनपुंसकस्ये'ति पर्युदासेन अस्वर्वनामस्थानत्वात् 'यचिभम्' इति भसंज्ञायाम् 'यस्येति च' इत्यकारलोपे प्राप्ते 'औः' इया प्रतिषेधो वाच्यः' इति वार्तिकेन निषेधे 'आद्गुणः । (३) 'जज्ञासोः शिः' इति इयादेशे 'शि' सर्वनामस्थानम्' इति सर्वनामस्थानसंज्ञायाम् 'नपुंसकस्य झलचः' इति नुमि 'सर्वनामस्थाने चे'ति उपधादीर्घः । (४) 'अतोऽम्' इति अतोऽम्विधानसामर्थ्यात् 'स्वमोर्नपुंसकात्' इति लुच् न भवति । (५) इत आरभ्य सुब्विभक्तिपर्यन्तम् 'राम' शब्दवत् तत्तत् कार्यं बोध्यम् । (६) सम्युद्धिलोपात् परत्वात् सोरमादेशे पूर्वरूपे च कृते तस्यान्तवद्भावात् ह्रस्वान्तमङ्गं भवति ततः परस्य सम्यु-

[१२५] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'धन' शब्दः (धन)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------|-----------|----------|---------|
| प्र० | धनम् | धने | धनानि | कर्त्ता |
| द्वि० | धनम् | धने | धनानि | कर्म |
| तृ० | धनेन | धनाभ्याम् | धनैः | करण |
| च० | धनाय | धनाभ्याम् | धनेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | धनात्-द् | धनाभ्याम् | धनेभ्यः | अपा० |
| ष० | धनस्य | धनयोः | धनानाम् | सम्ब० |
| स० | धने | धनयोः | धनेषु | अधि० |
| | हे धन | हे धने | हे धनानि | सम्बो० |

(१२६) अकारान्त नपुंसकलिङ्गो 'वन' शब्दः (जंगल)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------|-----------|----------|---------|
| प्र० | वनम् | वने | वनानि | कर्त्ता |
| द्वि० | वनम् | वने | वनानि | कर्म |
| तृ० | वनेन | वनाभ्याम् | वनैः | करण |
| च० | वनाय | वनाभ्याम् | वनेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | वनात्-द् | वनाभ्याम् | वनेभ्यः | अपा० |
| ष० | वनस्य | वनयोः | वनानाम् | सम्ब० |
| स० | वने | वनयोः | वनेषु | अधि० |
| | हे वन | हे वने | हे वनानि | सम्बो० |

(१२७) अकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'फल' शब्दः (फल)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|------|-------|---------|--------|---------|
| प्र० | फलम् | फले | फलानि | कर्त्ता |

द्वैर्भकारमात्रं यत् परिशष्टं तस्य 'एद् ह्रस्वादि'ति लोपः । 'एद् ह्रस्वादि'ति सूत्रे लक्ष्यानुरोधात् सम्बुद्ध्याक्षिप्तमङ्गं सम्बुद्धौ नान्वेति, किन्तु सम्बुद्धयवयवहृत्येवेति। ततश्च एवन्तात् ह्रस्वान्तात् चाऽज्ञात् परो यः सम्बुद्धयवयवो हल् तस्य लोपः, इति निष्ठाद्यर्थेन न कश्चिद्दोषः इति भावः । (१) अत्र सर्वस्मिन् प्रयोगे ज्ञानशब्दवत् तत्तत् कार्यं बोध्यम् । (२) अत्राऽपि सर्वस्मिन् प्रयोगे 'ज्ञान' शब्दवत्-तत्तत् प्रयोगे सर्वाणि कार्याणि बोध्यानि । (३) फलशब्देऽपि ज्ञानशब्दवत्

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------|-----------|----------|---------|
| द्वि० | फलम् | फले | फलानि | कर्म |
| तृ० | फलेन | फलाभ्याम् | फलैः | करण |
| च० | फलाय | फलाभ्याम् | फलेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | फलाद्-इ | फलाभ्याम् | फलेभ्यः | अपा० |
| ष० | फलस्य | फलयोः | फलानाम् | सम्ब० |
| स० | फले | फलयोः | फलेषु | अधि० |
| | हे फल | हे फले | हे फलानि | सम्बो० |

एवं मुख, सुख, वचन, नेत्र, नयन, चित्र, पुष्प, पत्र, जल, तोय, बल, दुग्ध, विष, वस्त्र, शस्त्र, पुस्तक, हवन, कार्य, कन्दुक, श्लेष्म, पद्य, पारितोषिक, संस्कृत, स्वास्थ्य, ओदन, पथ्य, भोजन, भ्रमण व्याकरण, परित्राण, सत्य, अभ्ययन, एकान्त, उद्यान, आदि अकारान्ताः समानशब्दाः ।

[१२८] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः सर्वनाम 'सर्व' शब्दः ।

| | | | | |
|-------|--------------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | सर्वम् | सर्वे | सर्वाणि | कर्ता |
| द्वि० | सर्वम् | सर्वे | सर्वाणि | कर्म |
| तृ० | सर्वेण | सर्वाभ्याम् | सर्वैः | करण |
| च० | सर्वस्मै | सर्वाभ्याम् | सर्वेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सर्वस्मात्-इ | सर्वाभ्याम् | सर्वेभ्यः | अपा० |
| ष० | सर्वस्य | सर्वयोः | सर्वेषाम् | सम्ब० |
| स० | सर्वस्मिन् | सर्वयोः | सर्वेषु | अधि० |
| | हे सर्व | हे सर्वे | हे सर्वाः | सम्बो० |

सर्वाणि कार्याणि भवन्ति । एवं तत्समशब्दानामपि बोध्यम् । (१) सोरमादेशे पूर्वहूपम् । (२) 'नपुंसकाच्च' इति शीभावे गुणः । (३) 'अशसोः शिः' इति श्यादेशे 'नपुंसकस्य झलवः' इति नुमि उपधादीर्घे 'अटक्प्राङिति' णत्वम् । (४) अम्, औट्, शस् विभक्तिषु पुनः प्रथमाविभक्तिवत् कार्यं ज्ञेयम् । (५) इत् आरभ्य सुच्चिभक्तिपर्यन्तं पुंवत् तत्तत् कार्यमवधेयम् । (६) ज्ञान शब्दवत् ।

(१२९) अकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'विश्व' शब्दः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------------|----------------|------------|---------|
| प्र० | विश्वम् | विश्वे | विश्वानि | कर्त्ता |
| द्वि० | विश्वम् | विश्वे | विश्वानि | कर्म |
| तृ० | विश्वेन | विश्वाम्भ्याम् | विश्वैः | करण |
| च० | विश्वस्मै | विश्वाम्भ्याम् | विश्वेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | विश्वस्मात्-द् | विश्वाम्भ्याम् | विश्वेभ्यः | अपा० |
| ष० | विश्वस्य | विश्वयोः | विश्वेषाम् | सम्ब० |
| स० | विश्वस्मिन् | विश्वयोः | विश्वेषु | अधि० |
| | हे विश्व | हे विश्वे | हे विश्वाः | सम्बो० |

(१३०) अकारान्त-नपुंसकलिङ्गो नित्यं द्विवचनान्तः 'उभ' शब्दः ।

| | | | |
|-----------------------|----------------|-----------------|----------------|
| प्र०-उभे ^२ | द्वि०-उभे | तृ०-उभाम्भ्याम् | च०-उभाम्भ्याम् |
| पं०-उभाम्भ्याम् | ष०-उभाम्भ्याम् | स०-उभयोः | सम्बो०-हे उभे |

[१३१) अकारान्त-नपुंसकलिङ्गो द्विवचनरहितः 'उभय' शब्दः ।

| | | | | |
|-------|--------------|---|-----------|---------|
| प्र० | उभयम् | ० | उभयानि | कर्त्ता |
| द्वि० | उभयम् | ० | उभयानि | कर्म |
| तृ० | उभयेन | ० | उभयैः | करण |
| च० | उभयस्मै | ० | उभयेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | उभयस्मात्-द् | ० | उभयेभ्यः | अपा० |
| ष० | उभयस्य | ० | उभयेषाम् | सम्ब० |
| स० | उभयस्मिन् | ० | उभयेषु | अधि० |
| | हे उभय | ० | हे उभयानि | सम्बो० |

(१) 'सर्व' शब्दवत् 'विश्व' शब्देऽपि सर्वाणि कार्याणि भवन्ति । केवलमत्र णत्वं न भवतीति विशेषः । (२) स्त्रीलिङ्गे नपुंसके च 'उभ' शब्दस्य समानानि रूपाणि भवन्त्यपि कार्ये किञ्चिद्विशेषः, तच्च 'विश्व' शब्दस्य द्विवचनवद् बोध्यम् । (३) 'विश्व' शब्दस्य एकवचन-बहुवचनवत् 'उभय' शब्दस्याऽपि कार्यं ज्ञेयम् ।

[१३२] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'कतर' शब्दः (दो में कौनसा)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------|------------|-----------|---------|
| प्र० | कतरत्-द् | कतरे | कतराणि | कर्त्ता |
| द्वि० | कतरत्-द् | कतरे | कतराणि | कर्म |
| तृ० | कतरेण | कतराभ्याम् | कतरैः | करण |
| च० | कतरस्मै | कतराभ्याम् | कतरेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | कतरस्मात्-द् | कतराभ्याम् | कतरेभ्यः | अपा० |
| ष० | कतरस्य | कतरयोः | कतरेषाम् | सम्ब० |
| स० | कतरस्मिन् | कतरयोः | कतरेषु | अधि० |
| | हे कतरत्-द् | हे कतरे | हे कतराणि | सम्बो० |

[१३३] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'कतम' शब्दः (बहुतों में कौनसा)

| | | | | |
|------|----------|------|--------|---------|
| प्र० | कतमत्-द् | कतमे | कतमानि | कर्त्ता |
|------|----------|------|--------|---------|

(१) द्वयोरेकस्य निर्धारणे गम्ये निर्धार्यमाणवाचक 'किम्'शब्देन 'किं यत्तदो निर्धारणे द्वयोरेकस्य डतरच्' इति सूत्रेण डतरचि ङित्वाङिलोपे 'कतर' इति । ततः सौ 'अद्ङडतरादिभ्यः पञ्चभ्यः' इति सोरदूढादेशे ङकारस्येत्संज्ञायां लोपे च कृते 'कतर X अद्' इति स्थिते 'टेः' इत्यनेन रेफादकारस्य (टेरित्यस्य) लोपे 'वाऽवसाने' इति वैकल्पिकचत्वे 'स्वमोर्नपुंसकात्' इति सुब्लुक् । नच 'कतर X अद्' इति दशायां पररूपेणैव 'कतरद्' इति सिद्धे ङित्करणं किमर्थमिति चेदत्र केचित्-ङित्वाऽभावे ङिलोपस्य प्राप्त्यभावेन पररूपं प्रबाध्य पूर्वसवर्णदीर्घः स्यादिति समाहितम् । वस्तुतस्तु तन्मन्दं दकारादेशविधानेनैव दीर्घवारणसम्भवात् । नन्वैवं तदा ङित्करणं व्यर्थं किमिति ? न, दकारादेशविधाने 'हे कतरत्' इत्यादौ दकारस्य स्थानिवत्त्वेन सम्बुद्धित्वात् ह्रस्वान्तादङ्गात् परत्वाच्च लोपे 'हे कतर' इत्यनिष्टप्रयोगाऽपत्तेः । 'किं यत्तदो निर्धारणे द्वयोरेकस्य डतरच्', इति सूत्रे द्वयोरित्युपलक्षणम् । अत एव 'प्रत्यः' इति सूत्रे भाष्ये 'बहुष्वासीनेषु कश्चित् कश्चित् पृच्छति कतरो देवदत्तः' इति भाष्यं सङ्गच्छते । (२) इत आरभ्य सुब्विमक्तिपर्यन्तं सर्वाणि कार्याणि सर्वशब्दवत् बोध्यानि । (३) बहूनां मध्ये एकस्य निर्धारणे किम्-यत्-यत्-शब्देभ्यः डतमज्वा स्यादित्यर्थक 'वा बहूनां जातिपरिग्रहे डत'

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------|------------|-----------|---------|
| द्वि० | कतमत्-द् | कतमे | कतमानि | कर्म |
| तृ० | कतमेन | कतमाभ्याम् | कतमैः | करण |
| च० | कतमस्मै | कतमाभ्याम् | कतमेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | कतमस्मात्-द् | कतमाभ्याम् | कतमेभ्यः | अपा० |
| प० | कतमस्य | कतमयोः | कतमेषाम् | सम्ब० |
| स० | कतमस्मिन् | कतमयोः | कतमेषु | अधि० |
| | हे कतमत्-द् | हे कतमे | हे कतमानि | सम्बो० |

एवं यतर, यतम, ततर, ततम, शब्दाः ।

[१३४] अकारान्त-नपुंसकः 'अन्य' शब्दः (दूसरा-फल)

| | | | | |
|-------|---------------|-------------|------------|---------|
| प्र० | अन्यत्-द् | अन्ये | अन्यानि | कर्त्ता |
| द्वि० | अन्यत्-द् | अन्ये | अन्यानि | कर्म |
| तृ० | अन्येन | अन्याभ्याम् | अन्यैः | करण |
| च० | अन्यस्मै | अन्याभ्याम् | अन्येभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अन्यस्मात्-द् | अन्याभ्याम् | अन्येभ्यः | अपा० |
| प० | अन्यस्य | अन्ययोः | अन्येषाम् | सम्ब० |
| स० | अन्यस्मिन् | अन्ययोः | अन्येषु | अधि० |
| | हे अन्यत्-द् | हे अन्ये | हे अन्यानि | सम्बो० |

[१३५] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'अन्यतर' शब्दः (दो में एक कार्य)

| | | | | |
|-------|-------------|---------|-----------|---------|
| प्र० | अन्यतरत्-द् | अन्यतरे | अन्यतराणि | कर्त्ता |
| द्वि० | अन्यतरत्-द् | अन्यतरे | अन्यतराणि | कर्म |

मच् इति सूत्रेण किम्शब्दात् ङतमच् प्रत्यये ङित्वाट्टिलोपे 'कतम्' शब्दः । ततः 'अद्ङङतरे'ति सूत्रे-ङतर, ङतम, अन्य, अन्यतर-इतर इति पञ्च सर्वादि-गणपठिताः ङतरादयस्तेन 'कतर' शब्दवत् 'कतम' शब्देऽपि अद्ङादिकार्यं समानमेवेति शैयम् । अत सूत्रे ङतर-ङतमौ प्रत्ययौ तेन 'प्रत्ययग्रहणे'ति परिभाषया तदन्तविधिना ङतरान्त, ङतमान्त इत्यर्थेन कतर-कतमशब्दयोः अद्ङादेशो भवतीति पूर्वोक्तं न विस्मर्तव्यम् । (१-२) 'कतर' शब्दवत् अद्ङादि सर्वं कार्यमवधेयम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-----------------|---------------|--------------|---------|
| तृ० | अन्यतरेण | अन्यतराभ्याम् | अन्यतरैः | करण |
| च० | अन्यतरस्मै | अन्यतराभ्याम् | अन्यतरेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अन्यतरस्मात्-द् | अन्यतराभ्याम् | अन्यतरेभ्यः | अपा० |
| ष० | अन्यतरस्य | अन्यतरयोः | अन्यतरेषाम् | सम्ब० |
| स० | अन्यतरस्मिन् | अन्यतरयोः | अन्यतरेषु | अधि० |
| | हे अन्यतरत्-द् | हे अन्यतरे | हे अन्यतराणि | सम्बो० |

[१३६] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'इतर' शब्दः (दूसरा-कार्य)

| | | | | |
|-------|--------------|------------|-----------|---------|
| प्र० | इतरत्-द् | इतरे | इतराणि | कर्ता |
| द्वि० | इतरत्-द् | इतरे | इतराणि | कर्म |
| तृ० | इतरेण | इतराभ्याम् | इतरैः | करण |
| च० | इतरस्मै | इतराभ्याम् | इतरेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | इतरस्मात्-द् | इतराभ्याम् | इतरेभ्यः | अपा० |
| ष० | इतरस्य | इतरयोः | इतरेषाम् | सम्ब० |
| स० | इतरस्मिन् | इतरयोः | इतरेषु | अधि० |
| | हे इतरत्-द् | हे इतरे | हे इतराणि | सम्बो० |

[१३७] अकारान्त—नपुंसकलिङ्गः 'अन्यतम' शब्दः

(बहुत में एक)

| | | | | |
|-------|----------|---------|-----------|-------|
| प्र० | अन्यतमम् | अन्यतमे | अन्यतमानि | कर्ता |
| द्वि० | अन्यतमम् | अन्यतमे | अन्यतमानि | कर्म |

(१) 'कतर' शब्दवत् 'इतर' शब्दस्यापि अद्वादि कार्यं बोध्यम् । (२) 'अन्यतम' शब्दस्य क्त्विधादिशब्दवत् अव्युत्पन्नप्रातिपदिकत्वेन प्रकृतिप्रत्ययविभाग-विहीनात् उतमप्रत्ययान्तत्वाभावेन 'अद्दुडतरादिभ्यः' इति अद्वादेशो न । एवञ्च सर्वादिगणे पाठाभावेन सर्वनामकार्यमपि न भवति । नन्वेवं सति अन्यतम-शब्देन बहुनिर्धारणाऽवगमः कथं स्यादिति चेत्सत्यम्, स्वभावात् बहुविषये वर्तते इति कौमुद्यां प्रतिपादितत्वात् । एवंच 'ज्ञान' शब्दवत् कार्यं बोध्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-------------|---------------|--------------|---------|
| तृ० | अन्यतमेन | अन्यतमाभ्याम् | अन्यतमैः | करण |
| च० | अन्यतमाय | अन्यतमाभ्याम् | अन्यतमेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अन्यतमात्-इ | अन्यतमाभ्याम् | अन्यतमेभ्यः | अपा० |
| ष० | अन्यतमस्य | अन्यतमयोः | अन्यतमानाम् | सम्ब० |
| स० | अन्यतमे | अन्यतमयोः | अन्यतमेषु | अधि० |
| | हे अन्यतम | हे अन्यतमे | हे अन्यतमानि | सम्बो० |

[१३८] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'एकतर' शब्दः (दे में एक)

| | | | | |
|-------|--------------|-------------|------------|---------|
| प्र० | एकतरम् | एकतरे | एकतराणि | कर्ता |
| द्वि० | एकतरम् | एकतरे | एकतराणि | कर्म |
| तृ० | एकतरेण | एकतराभ्याम् | एकतरैः | करण |
| च० | एकतरस्मै | एकतराभ्याम् | एकतरेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | एकतरस्मात्-इ | एकतराभ्याम् | एकतरेभ्यः | अपा० |
| ष० | एकतरस्य | एकतरयोः | एकतरेषाम् | सम्ब० |
| स० | एकतरस्मिन् | एकतरयोः | एकतरेषु | अधि० |
| | हे एकतर | हे एकतरे | हे एकतराणि | सम्बो० |

[१३९] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'नेम' शब्दः (आधा-फल)

| | | | | |
|-------|---------|------------|----------|---------|
| प्र० | नेमम् | नेमे | नेमानि | कर्ता |
| द्वि० | नेमम् | नेमे | नेमानि | कर्म |
| तृ० | नेमेन | नेमाभ्याम् | नेमैः | करण |
| च० | नेमस्मै | नेमाभ्याम् | नेमेभ्यः | सम्प्र० |

(१) 'एक' शब्दात् 'एकाच्च प्राचाम्' इति सूत्रेण डतरच् प्रत्यये डित्वाट्टिलोपे 'एकतर' शब्दः, तस्मात् सौ 'अद्ढडतरादिभ्यः' इति अद्ढादेशे प्राप्ते 'एकतरात् प्रतिषेधो वक्तव्यः' इति वार्तिकेन निषेधात् न भवति । एवञ्च 'सर्व' शब्दवत् कार्य बोध्यम् । 'एकतरम्' इति लक्ष्यमेव लक्ष्यीकृत्य एकतरम्, ज्ञानवदित्युक्तं परममूले नत्वेन स्मयादेशो प्रतिषिद्यते ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|--------------|------------|-----------|--------|
| पं० | नेमस्तात्-द् | नेमाभ्याम् | नेमेभ्यः | अपा० |
| ष० | नेमस्य | नेमयोः | नेमेषाम् | सम्ब० |
| स० | नमस्मिन् | नेमयोः | नेमेषु | अधि० |
| | हे नेम | हे नेमे | हे नेमानि | सम्बो० |

[१४०] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'सम' शब्दः (सब)

| | | | | |
|-------|-------------|-----------|----------|---------|
| प्र० | समम् | समे | समानि | कर्ता |
| द्वि० | समम् | समे | समानि | कर्म |
| तृ० | समेन | समाभ्याम् | समैः | करण |
| च० | समस्मै | समाभ्याम् | समेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | समस्मात्-द् | समाभ्याम् | समेभ्यः | अपा० |
| ष० | समस्य | समयोः | समेषाम् | सम्ब० |
| स० | समस्मिन् | समयोः | समेषु | अधि० |
| | हे सम | हे समे | हे समानि | सम्बो० |

एवं त्व, सिम, प्रभृतयः सर्वनाम शब्दाः ।

[१४१] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'पूर्व' शब्दः (पहला वस्तु)

| | | | | |
|-------|----------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | पूर्वम् | पूर्वे | पूर्वाणि | कर्ता |
| द्वि० | पूर्वम् | पूर्वे | पूर्वाणि | कर्म |
| तृ० | पूर्वेण | पूर्वाभ्याम् | पूर्वैः | करण |
| च० | पूर्वस्मै | पूर्वाभ्याम् | पूर्वैभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | पूर्वस्मात्-द् | पूर्वाभ्याम् | पूर्वैभ्यः | अपा० |
| ष० | पूर्वस्य | पूर्वयोः | पूर्वेषाम् | सम्ब० |
| स० | पूर्वस्मिन् | पूर्वयोः | पूर्वेषु | अधि० |
| | हे पूर्व | हे पूर्वे | हे पूर्वाणि | सम्बो० |

(१) सर्वादिगणपठितानां सर्वेषामपि शब्दानां सर्वनामप्रयुक्तकार्यं 'सर्वशब्द-
वत्, अन्यत्कार्यं 'ज्ञान' शब्दवत् ज्ञेयमिति निष्कर्षः ।

(१४२) अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'पर' शब्दः ।

| | | | | |
|-------|-------|---------|--------|---------|
| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| प्र० | परम् | परे | पराणि | कर्त्ता |
| द्वि० | परम् | परे | पराणि | कर्म |

इत्यादि 'पूर्व' शब्दवत् ।

[१४३] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'अपर' शब्दः (दूसरा वस्तु)

| | | | | |
|-------|-------|------|--------|---------|
| प्र० | अपरम् | अपरे | अपराणि | कर्त्ता |
| द्वि० | अपरम् | अपरे | अपराणि | कर्म |

इत्यादि 'पूर्व' शब्दवत् ।

एवं दक्षिण, उत्तर, अवर, अधर, स्व, अन्तर इत्यादयोऽङ्गन्ताः
सर्वनामशब्दाः 'पूर्व' शब्दवत् ।

[१४४] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'प्रथम' शब्दः (पहला वस्तु)

| | | | | |
|-------|------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | प्रथमम् | प्रथमे | प्रथमानि | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रथमम् | प्रथमे | प्रथमानि | कर्म |
| तृ० | प्रथमेन | प्रथमाभ्याम् | प्रथमैः | करण |
| च० | प्रथमाय | प्रथमाभ्याम् | प्रथमेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रथमात्-इ | प्रथमाभ्याम् | प्रथमेभ्यः | अपा० |
| ब० | प्रथमस्य | प्रथमयोः | प्रथमानाम् | सम्ब० |
| स० | प्रथमे | प्रथमयोः | प्रथमेषु | अधि० |
| | हे प्रथम | हे प्रथमे | हे प्रथमानि | सम्बो० |

एवं चरम, अल्प, अर्ध, कतिपय, द्वय, द्वितय, शब्दानामपि
'प्रथम' शब्दवत् रूपाणि बोध्यानि ।

[१४५] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'अजर' शब्दः (नया-वृक्ष)

(१) 'प्रथम' शब्दस्याऽपि साधानकार्यं ज्ञान' शब्दवत् बोध्यम् । (२) अवि-
यमाना जरा यस्य वृक्षस्येति विप्रहे 'नयोऽस्त्यर्थानाम्' इति बहुव्रीहिसमासे
दियमानपदस्य लोपे च 'गोस्त्रियोः' इत्युपसर्जनहस्वे 'अजर' शब्दः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------------------|------------------|---------------------|---------|
| प्र० | अजरम् | { अजरे अजरसी | अजराणि अजरांसि | कर्त्ता |
| द्वि० | { अजरम् अजरसम् | अजरे अजरसी | अजराणि अजरांसि | कर्म |
| तृ० | { अजरेण अजरसा | अजराभ्याम् | अजरैः | करण |
| च० | { अजराय अजरसे | अजराभ्याम् | अजरेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { अजरात्-द् अजरसः | अजराभ्याम् | अजरेभ्यः | अपा० |
| ष० | { अजरस्य अजरसः | अजरयोः अजरसोः | अजराणाम् अजरसाम् | सम्ब० |

(१) सोरमादेशे पूर्वरूपे च सिद्धम् । 'अजर × अम्' इति दशार्थां जरसादेशः कुतो नेति चेन्मैवं, सन्निपातपरिभाषया अदन्तसन्निपाताश्रयस्य अमः अदन्तत्वविधातकजरसादेशं प्रति निमित्तत्वायोगात् । (२) 'नपुंसकाच्चे'ति शीभावे जरसादेशे रूपम् । (३) पूर्वविप्रतिषेधात् 'अज्ञसोः शिः' इति शिभावे कृते नुम्-जरसोः प्राप्तयोः नुमपेक्षया परत्वाज्जरस् ततो झलन्तत्वान्नुम् । अत एव 'नुम्जरसोः प्राप्तयोः परत्वाज्जरस्' इति भाष्यं सङ्गच्छते । यत्तु शिभावात् परत्वाज्जरस् ततः झलन्तत्वान्नुमित्युक्तं तन्मन्दम्, शिभावात् पूर्वं जसः सर्वनामस्थानत्वाऽभावेन नुमोऽप्रसक्त्या 'नुम्जरसोः प्राप्तयोः' इति पूर्वोक्तभाष्याऽसंगतेः । एवञ्च नुमि कृते 'सान्तमहतः संयोगस्य' इति दीर्घे 'नश्चापदान्तस्येत्यनुस्वारे सिद्धम् । (४) 'अजर × अम्' इति स्थिते 'स्वमोर्नपुंसकात्' इति लुगप्राप्तः तं प्रवाध्य अपवादत्वात् अम्भावः प्राप्तः तच्च बाधित्वा परत्वात् विभाषया जरसादेशः । नचैवं लुगपवादस्याऽम्भावस्य जरसादेशेन बाधितत्वे सति 'अपवादे निषिद्धे पुनरुत्सर्गस्य स्थितिः' इति न्यायेन अमो लुक् कुतो नेति वाच्यम्, सन्निपातपरिभाषाविरोधात् । (५) इत आरभ्य सुबिभक्तिपर्यन्तं पुंवत् (पुंसि निर्जरशब्दवत्) कार्यं बोध्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----|-----------------|-----------------------|---------------------------|--------|
| स० | { अजरे अजरसि | अजरयोः अजरसोः | अजरेषु | अधि० |
| | हे अजर | { हे अजरे हे अजरसी | { हे अजराणि हे अजरांसि | सम्बो० |

[१४६] अकारान्त-नपुंसकलिङ्गे 'हृदय' शब्दः (हृदय)

| | | | | |
|-------|----------------------------|-----------------------------|---------------------------------|----------------|
| १० | हृदयम् | हृदये | हृदयानि | कर्त्ता |
| द्वे० | हृदयम् | हृदये | { हृदयानि हृदि | कर्म |
| तृ० | { हृदयेन हृदा | हृदयाभ्याम् हृदभ्याम् | हृदयैः हृद्भिः | करण |
| च० | { हृदयाय हृदे | हृदयाभ्याम् हृदभ्याम् | हृदयेभ्यः हृद्भ्यः। | सम्प्र० |
| पं० | { हृदयात्-वृ हृदः | हृदयाभ्याम् हृद्भ्याम् | हृदयेभ्यः हृद्भ्यः | अपा० |
| प० | { हृदयस्य हृदः | हृदयोः हृदोः | हृदयानाम् हृदाम् | सम्ब० |
| स० | { हृदये हृदि हे हृदय | हृदयोः हृदोः हे हृदये | हृदयेषु हृत्सु हे हृदयानि | अधि० सम्बो० |

(१४७) अकारान्त-नपुंसकलिङ्गे 'उदक' शब्दः (जल)

| | | | | |
|------|-------|------|--------|---------|
| प्र० | उदकम् | उदके | उदकानि | कर्त्ता |
|------|-------|------|--------|---------|

(१) 'हृदय' शब्दस्य सुटि (सु, औ, जस् अम्, औट्) विभक्तिषु 'ज्ञान' शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (२) शसः शिभावे 'पददङिति सूत्रेण हृदयशब्दस्य हृदादेशे शोः सर्वनामस्थानत्वात् नपुंसकस्य झलचः' इति ऋकारात्परतो नुमि अनुस्वारपरसवर्णौ । (३) हृदादेशः, नुम् तु न भवति नपुंसकलिङ्गे शोरेव सर्वनामस्थानधंशाभिधानात् । एवंच इत आरभ्य सुविविभक्तिपर्यन्तं विशेषकार्याऽनभिधानात् हृदादेशमात्रं भवतीति न विस्मर्तव्यम् । हृदादेशाभावपक्षे तु सर्वत्र 'ज्ञान' शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (४) 'उदकशब्दस्यापि सुटि 'ज्ञान'शब्दवत् कार्याणि भवन्ति ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------------------------------|-------------------------------|-----------------------------|----------------|
| द्वि० | उदकम् | उदके | उदकानि-उदानि | कर्म |
| तृ० | { उदकेन उद्गो | उदकाभ्याम् उद्भ्याम् | उदकैः उदभिः | करण |
| च० | { उदकाय उद्दे | उदकाभ्याम् उदभ्याम् | उदकेभ्यः उदभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { उदकात्-द् उद्दुनः | उदकाभ्याम् उदभ्याम् | उदकेभ्यः उदभ्यः | अपा० |
| ष० | { उदकस्य उद्दुः | उदकयोः उद्गोः | उदकानाम् उद्गाम् | सम्ब० |
| स० | { उदके उद्दुनि-उद्दनि हे उदक | उदकयोः उद्दुनोः हे उदके | उदकेषु उदसु हे उदकानि | अधि० सम्बो० |

[१४८] अकारान्तो नपुंसकलिङ्गः 'आस्य' शब्दः (मुख)

| | | | | |
|-------|--------|-------|--------------------|-------|
| प्र० | आस्यम् | आस्ये | आस्यानि | कर्ता |
| द्वि० | आस्यम् | आस्ये | { आस्यानि आसानि | कर्म |

(१) शसः शिभावे 'पदन्नि'ति सूत्रेण उदकशब्दस्य उदन्नादेशे 'सर्वनामस्थाने चे'ति दीर्घः । 'उदन् × इ' इति दशायाम् 'अल्लोपोनः' इति, 'विभाषा छिद्योः' इति वा अल्लोपस्तु न भवति, शैः सर्वनामस्थानत्वात् । उदन्नादेशाऽभावपक्षे 'ज्ञान' शब्दवत् सर्वाणि कार्याणि बोध्यानि । (२) उदन्नादेशे 'अल्लोपोनः' इत्यल्लोपः । (३) भ्यामादौ हलि उदन्नादेशे 'स्वादिष्वि'ति पदत्वात् नलोपः । (४) 'विभाषा छिद्योः' इत्यल्लोपः । (५) सुटि, शसादौ आसन्नादेशाऽभावपक्षे च 'ज्ञान' शब्दवत् कार्यं बोध्यम् । (६) शसः शिभावे 'पद्दन्नि'ति सूत्रेण आस्यशब्दस्य आसन्नादेशे 'सर्वनामस्थाने चे'ति दीर्घः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|--------------------------|-------------------------|----------------------|---------|
| तृ० | { आस्येन आस्ना | आस्याभ्याम् आसभ्याम् | अस्यैः आसभिः | करण |
| च० | { आस्वाय आस्ने | आस्याभ्याम् आसभ्याम् | आस्येभ्यः आसभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { आस्यात्-इ आस्नः | आस्याभ्याम् आसभ्याम् | आस्येभ्यः आसभ्यः | अपा० |
| प० | { आस्यस्य आस्नः | आस्ययोः आस्नोः | आस्यानाम् आस्नाम् | सम्ब० |
| स० | { आस्ये आस्नि आसनि | आस्ययोः आस्नोः | आस्येषु आससु | अधि० |
| | हे आस्य | हे आस्ये | हे आस्यानि | सम्बो० |

[१४९] अकारान्तो नपुंसकलिङ्गो 'मांस' शब्दः (मांस)

| | | | | |
|-------|-------------------|---------------------------|--------------------|---------|
| प्र० | मांसम् | मांसे | मांसानि | कर्त्ता |
| द्वि० | मांसम् | मांसे | मांसानि, मांसि | कर्म |
| तृ० | { मांसेन मांसा | मांसाभ्याम् मांसभ्याम् | मांसैः मांसिभिः | करण |

(१) आसन्नादेशे 'अत्लोपोनः' इत्यत्लोपः । एवञ्च उदन्नादेशवत् आसन्नादेशपक्षेऽपि तत्तत् कार्यं समानमेवेत्यवधेयम् । (२) 'मांस' शब्देऽपि सुटि, शसादौ मांसादेशाभावपक्षे च 'ज्ञान'शब्दवत् तत्तत् कार्यं भवति । (३) शिभावे सति 'मांस-पृतना-सानूनां मांस-पृत्-स्नेवो वाच्याः शसादौ वा' इति वार्तिकेन अजन्त 'मांस' शब्दस्य ह्रलन्त 'मांस' आदेशः । (४) मांसादेशे सति 'स्वादिष्वि'ति पदत्वेन सकारस्य संयोगान्तलोपः । नचैवं नकारस्य श्रवणं फुत इति चेच्छ्रुणु ? 'मांस' आदेशे नकारस्य 'नश्चापदान्तस्ये'ति कृतानुस्वारस्य निर्देशेन अत्र सकारस्य संयोगान्तलोपे सति 'निमित्ताऽपाये नैमित्तिकस्याऽ-नपायः' इति परिभाषया निमित्तस्य सकारस्य अपाये सति नैमित्तिकस्य अनुस्वारस्याऽपि निवृत्तिसम्भवात् । अत्र समयज्ञाः--'पदूदन्नि'ति सूत्रे 'वस्तुतस्तु

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|----------------------|---------------------------|-----------------------|---------|
| च० | { मांसाय मांसे | मांसाभ्याम् मान्भ्याम् | मांसेभ्यः मान्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { मांसात्-इ मांसः | मांसाभ्याम् मान्भ्याम् | मांसेभ्यः मान्भ्यः | अपा० |
| ष० | { मांसस्य मांसः | मांसयोः मांसोः | मांसानाम् मांसाम् | सम्ब० |
| स० | { मांसे मांसि | मांसयोः मांसोः | मांसेषु मान्सु | अधि० |
| | हे मांस | हे मांसे | हे मांसानि | सम्बो |

[१५०] आकारान्तो नपुंसकलिङ्गः 'श्रीपा' शब्दः
(लक्ष्मी रक्षक कुल)

प्रभृतिप्रहणं प्रकारार्थमित्युक्त्वा, हृदयादिशब्दानां सुट्यपि हृदाद्यादेशं साधयन्ति [प्रभृतिप्रहणं प्रकारार्थम्' इति ग्रन्थाऽशयं सप्तपृष्ठेऽपि प्रतिपादितमस्माभिः प्रसङ्गादत्राऽपि विलिख्यते] तेषामयमाशयः—प्रभृतिप्रहणं प्रकारार्थम्, प्रकारभेद-सादृश्यम्, सादृश्यञ्च—“तद्भिन्नत्वे सति तद्गतभूयो धर्मवत्वम् । तथा शसादिभिन्ने शसादिसदृशे प्रत्यये पदाद्यादेश इत्यर्थः । शसादिसादृश्यं सुप्त्वेनैव ग्राह्यं न तु पदत्वेनेति, अत एव 'हृदयस्य हृत्लेखयदण्लासेषु' इति सूत्रं चरितार्थं मन्यथा अनेनैव 'हृत्लेखः' इत्यादिसिद्धे तद्व्यर्थं स्यात् । नन्वेमपि प्रथमैकवचनं 'हृत्' इति प्रयोगाऽनुपपत्तिरेव शोर्लुका लुप्तत्वेन 'न लुप्तते'ति प्रत्ययलक्षणनिषेधादिति चेन्मैवं, हृदाद्यादेशविधौ तस्याऽनित्यत्वात् । अत एव पच्यते अस्यामिपि पचनी, 'करणाधिकरणयोश्च' इति ल्युटि टित्वाढीप् । मांसस्य पचनी 'मांसपचनी' इति भाष्यप्रयोगे प्रत्ययलक्षणात् ङस्प्ररत्वेन मांसशब्दस्य 'मांस' इत्यादेशोपपत्तिः सङ्गता । नचैवं 'सुप्तिञन्तमि'ति पदसंज्ञायाः प्रकृतिप्रत्ययधर्मत्वेन केवलाङ्गधर्मत्वाऽभावात् 'न लुप्तते'त्यस्य निषेधाऽप्रवृत्त्या 'मांसपचनी' इत्यत्र अन्तर्घटितं ङसं लुप्तमाश्रित्य मांसित्यस्य पदत्वेन सकारस्य संयोगान्तकोपो दुर्निवार इति वाच्यम्, मांसादेशस्य अयस्मयादिगणे पठितत्वात् 'अयस्मयादीनि ङन्दधि' इति भत्वेनादोषादिति दिक् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | श्रीपम् | श्रीपे | श्रीपाणि | कर्त्ता |
| द्वि० | श्रीपम् | श्रीपे | श्रीपाणि | कर्म |
| तृ० | श्रीपेण | श्रीपाभ्याम् | श्रीपैः | करण |
| च० | श्रीपाय | श्रीपाभ्याम् | श्रीपेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | श्रीपात्-द् | श्रीपाभ्याम् | श्रीपेभ्यः | अपा० |
| प० | श्रीपस्य | श्रीपयोः | श्रीपाणाम् | सम्ब० |
| स० | श्रीपे | श्रीपयोः | श्रीपेषु | अधि० |
| | हे श्रीप | हे श्रीपे | हे श्रीपाणि | सम्बो० |

(१) श्रियं पाति=रक्षतीति, श्रीपा। 'आतोऽनुपसर्गे कः' इति कं बाधित्वा 'आतो मनिन्कनिब्वनिपश्च' चकारात् इत्यनेन, 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति वा विचि, (केचित्तु 'क्विप् च' इति सूत्रेण क्विप् इत्युक्तं तन्मन्दं, भाष्याऽनुक्तत्वात्) 'ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य' इति ह्रस्वे सोरमादेशे पूर्वरूपे 'ज्ञान' शब्दवत् । (२) णत्वं वर्जयित्वा श्रीपाशब्दे सर्वं कार्यं 'ज्ञान' वत्, तच्च णत्वं भिन्नपदस्थत्वात् 'अट्कुप्वाङित्यनेनाऽप्राप्त्या 'एकाजुत्तरे'ति बोध्यम् । (३) नन्वत्र ह्रस्वत्वे कृतेऽपि एकदेशविकृतन्यायेन धातुत्वात् दीर्घे कृते आकारान्तत्वाच्च 'आतो घातोः' इत्याल्लोपः कृतो न, भत्वाऽभावस्तु न शङ्क्यः, यादेशस्य स्वतो यकारादितया स्थानिवत्त्वेन स्वादिप्रत्ययतया च तस्मिन्परे भत्वस्य सुलभत्वादिति चेन्न, उपजीव्यविरोधेन सन्नपातपरिभाषाविरोधात् । नच अदन्तत्वमुपजीव्य प्रवृत्तौ यादेशः आल्लोपं प्रति कथमनिमित्तं स्यादिति चेतस्यम्, यादेशस्तावत् ह्रस्वत्वमवर्णत्वमपजीव्य प्रवर्तते यतस्तद्विधावेव 'अतः' इत्यनुवृत्तेः । ततश्च ह्रस्वत्वम् अवर्णत्वञ्च समुदितं यादेशस्योपजीव्यम्, तत्र 'कष्टाय' इति निर्देशेन सन्नपातपरिभाषां बाधित्वा कृतेऽपि दीर्घे ह्रस्वत्वांश एव निवृत्तः, अवर्णत्वांशस्तु वर्तते एव, तस्याऽप्याल्लोपेन निवृत्तौ तु उपजीव्यविधातः स्यादेवेति भवेदेव सन्नपातपरिभाषाविरोध इत्यास्तान्तावत् । केचित्तु लक्षणप्रतिपदोक्तपरिभाषाधमणादत्राल्लोपशब्दैव नोदेतीति वदन्ति ।

[१५१] आकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'विश्वपा' शब्दः (विश्वरक्षक कुल)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------|---------------|--------------|---------|
| प्र० | विश्वपम् | विश्वपे | विश्वपानि | कर्त्ता |
| द्वि० | विश्वपम् | विश्वपे | विश्वपानि | कर्म |
| तृ० | विश्वपेन | विश्वपाभ्याम् | विश्वपैः | करण |
| च० | विश्वपाय | विश्वपाभ्याम् | विश्वपेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | विश्वपात्-इ | विश्वपाभ्याम् | विश्वपेभ्यः | अपा० |
| ष० | विश्वपस्य | विश्वपयोः | विश्वपानाम् | सम्ब० |
| स० | विश्वपे | विश्वपस्योः | विश्वपेषु | अधि० |
| | हे विश्वप | हे विश्वपे | हे विश्वपानि | सम्बो० |

[१५२] इकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'वारि' शब्दः

(अभाषितपुंसकः (जल))

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------|------------|----------|---------|
| प्र० | वारि | वारिणी | वारीणि | कर्त्ता |
| द्वि० | वारि | वारिणी | वारीणि | कर्म |
| तृ० | वारिणा | वारिभ्याम् | वारिभिः | करण |
| च० | वारिणे | वारिभ्याम् | वारिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | वारिणः | वारिभ्याम् | वारिभ्यः | अपा० |
| ष० | वारिणः | वारिणोः | वारीणाम् | सम्ब० |
| स० | वारिणि | वारिणोः | वारिषु | अधि० |

(१) विश्वं पातीति विश्वपा, 'श्रीपा' शब्दवत् सर्वं कार्यं बोध्यम् । (२) 'स्वमोर्नपुंसकात्' । 'आपः स्त्री भूमिनि वार्वारि सलिलं कमलं जलम्' इत्यमरः । (३) स्त्रीभावे 'इकोऽचि विभक्तौ' इति नुमि णत्वम् । (४) शिभावे नुमि दीर्घे णत्वम् । (५) घित्वान्नाभावे णत्वम्, रूपे विशेषाऽभावेऽपि नुमपेक्षया परत्वेन नाभावस्यैव न्याज्यत्वात् । (६) हे-वसि-वसु 'घेर्त्ति' इति गुणं बाधित्वा 'वृद्धौत्वतृज्व-द्वावगुणेभ्यः' इति वार्तिकेन नुमि णत्वम् । (७) यणं बाधित्वा नुमि णत्वम् । (८) नुमं बाधित्वा 'नुमचिरे'ति नुटि दीर्घे णत्वम् । (९) 'अच्च घेः' इत्यौत्वं बाधित्वा नुमि णत्वम् ।

| | | | |
|----------------------|-----------|-----------|--------|
| एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| { हे वारि हे वारि | हे वारिणी | हे वारीणि | सम्बो० |

[१५३] इकारान्त-नपुंसकलिङ्गो भाषितपुंस्कः 'अनादि'

शब्दः (ब्रह्मा)

| | | | | |
|-------|---------------------|----------------------|-----------|---------|
| प्र० | अनादि | अनादिनी | अनादीनि | कर्त्ता |
| द्वि० | अनादि | अनादिनी | अनादीनि | कर्म |
| तृ० | अनादिना | अनादिभ्याम् | अनादिभिः | करणः |
| च० | { अनादि अनादिने | अनादिभ्याम् | अनादिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { अनादिः अनादिनः | अनादिभ्याम् | अनादिभ्यः | अपा० |
| ष० | { अनादिः अनादिनः | अनाद्योः अनादिनोः | अनादीनाम् | सम्ब० |

(१) हे ऋपो, हे ऋपु, इति भाष्योदाहरणात् 'नछमते'त्यस्याऽनित्यत्वपक्षे प्रत्ययलक्षणेन 'ह्रस्वस्य गुणः' इति सम्बुद्धिनिमित्तको गुणः, नित्यत्वे तु-हे वारि । ह्रस्वो 'हरि' वत् बोध्यम् । (२) प्रथमाद्वितीयोः 'वारि' शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (३) तृतीयादिषु भाषितपुंस्कं पुवद्गालवस्य' = भाषितः पुमान् येन प्रवृत्तिनिमित्तेन तत् भाषितपुंस्कम्, अर्थात् नपुंसकत्वे लिङ्गान्तरे च यस्य एकमेव वाच्यतावच्छेदकं तच्छब्दस्वरूपं भाषितपुंस्कशब्देन विवक्षितमिति निष्कर्षः । प्रकृते तु न विद्यते आदिः=उत्पत्तिः, यस्य सः अनादिः=ईश्वरः, अनादिः=अविद्या, अनादिः=ब्रह्म ततश्च उत्पत्यभावात्मकमनादित्वं पुरस्कृत्य स्त्रीपुंनपुंसकतत्तत् व्यक्तिप्रत्यायकः 'अनादि' शब्दः इति, भवति तस्य प्रवृत्तिनिमित्तक्ये भाषितपुंस्कता । एवञ्च प्रकृतप्रयोगे घित्वान्नाभावो बोध्यः । पुंवत्वाभावे नुमि रूपे विशेषाऽभावेऽपि छित्वादौ विशेषः स्यात् । (४) पुंवत्वे घित्वात् 'घेर्ङिति' इति गुणे भयादेशः । एवञ्च पुंवत्वे हरेवत्, तदभावे, भ्यादौ, हलि च णत्वं विहाय वारिवत् कार्यं बोध्यम् । आमितूभयपक्षेपि 'नुमचिरे'ति नुट् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----|-------------------------|----------------------|------------|--------|
| स० | { अनादौ अनादिनि | अनाद्योः अनादिनोः | अनादिषु | अधि० |
| | { हे अनादे ह अनादिनि | हे अनादिनी | हे अनादीनि | सम्बो० |

[१५४] इकारान्त-नपुंसकलिङ्गः भाषितपुंस्कः 'शुचि' शब्दः
(पवित्र, सफेद)

| | | | | |
|-------|----------------------|--------------------|-----------|---------|
| प्र० | शुचि | शुचिनी | शुचीनि | कर्त्ता |
| द्वि० | शुचि | शुचिनी | शुचीनी | कर्म |
| तृ० | शुचिना | शुचिभ्याम् | शुचीभिः | करण |
| च० | { शुचये शुचिने | शुचिभ्याम् | शुचिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { शुचेः शुचिनः | शुचिभ्याम् | शुचिभ्यः | अपा० |
| ष० | { शुचेः शुचिनः | शुच्योः शुचिनोः | शुचीनाम् | सम्ब० |
| स० | { शुचौ शुचिनि | शुच्योः शुचिनोः | शुचिषु | अधि० |
| | { हे शुचे हे शुचि | हे शुचिनी | हे शुचीनि | सम्बो० |

एवं दुर्मति, सुरभि, इत्यादयो भाषितपुंस्काः = पुंस्त्वे नपुंसकत्वे च
एकप्रवृत्तिनिमित्ताः इति भावः ।

(१) 'अनादि' शब्दवत् 'शुचि' शब्दस्यापि साधनकार्यं बोध्यम् । (२) शु-
विशब्दस्य गुणवाचकत्वेन विशेष्यनिघ्नत्वात् नपुंसके भिन्नलिङ्गे च प्रवृत्तिनिमित्तै-
क्यात् तृतीयादौ पुंवत्वविकल्पो भवत्येवेति सिद्धान्तः । एवञ्चात्र पुंवत्वे घित्वा-
न्नाभावः । तदभावेऽपि नुमि 'शुचिना' इत्येवेति न रूपे विशेषः । क्त्वादौ
अनादिशब्दवत् विशेषः स्यादित्यवधेयम् ।

[१५५] इकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'दधि' शब्दः (दही)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------------|-----------|----------|---------|
| प्र० | दधि | दधिनी | दधीनि | कर्त्ता |
| द्वि० | दधि | दधिनी | दधीनि | कर्म |
| तृ० | दध्ना | दधिभ्याम् | दधिभि | करण |
| च० | दध्ने | दधिभ्याम् | दधिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | दध्नः | दधिभ्याम् | दधिभ्यः | अपा० |
| ष० | दध्नः | दध्नोः | दध्नाम् | सम्ब० |
| अ० | { दधिनि दधनि | दध्नोः | दधिषु | अधि० |
| | { हे दधे हे दधि | हे दधिनी | हे दधीनि | सम्बो० |

[१५६] इकारान्त-नपुंसकलिङ्गः, 'अतिदधि' शब्दः
(दही को अतिक्रमण करने वाला-कुल)

| | | | | |
|-------|----------|--------------|------------|---------|
| प्र० | अतिदधि | अतिदधिनी | अतिदधीनि | कर्त्ता |
| द्वि० | अतिदधि | अतिदधिनी | आतिदधीनि | कर्म |
| तृ० | अतिदध्ना | अतिदधिभ्याम् | अतिदधिभिः | करण |
| च० | अतिदध्ने | अतिदधिभ्याम् | अतिदधिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अतिदध्नः | अतिदधिभ्याम् | अतिदधिभ्यः | अपा० |
| ष० | अतिदध्नः | अतिदध्नोः | अतिदध्नाम् | सम्ब० |

(१) प्रथमाद्वितीययोः 'अनादि' शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (२) टादावचि तु 'अस्थि-दधि-सकथ्यक्षणाभनद्धुदात्तः' इत्यनङि 'अरलोपोनः' इत्यल्लोपः । (३) अनादेरो 'विभाषा लिङ्योः' इत्यल्लोपविकल्पः । (४) दधि अतिक्रान्तं कुलम् 'अतिदधि' । अस्याऽपि 'दधि' वत् साधनकार्यं ज्ञेयम् । (५) 'पदाङ्गाऽधिकारे तस्य नदन्तस्य च' (प०)=पदाऽधिकारे अङ्गाऽधिकारे च यस्य यद्विहितं तत् यस्य

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----|--------------------------|-------------|-------------|--------|
| स० | { अतिदधि अतिदधनि | अतिदधोः | अतिदधिषु | अधि० |
| | { हे अतिदधे हे अतिदधि | हे अतिदधिनी | हे अतिदधीनि | सम्बो० |

[१५७] इकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'अस्थि' शब्दः (हड्डी)

| | | | | |
|-------|------------------------|-------------|------------|---------|
| प्र० | अस्थि | अस्थिनी | अस्थीनि | कर्त्ता |
| द्वि० | अस्थि | अस्थिनी | अस्थीनि | कर्म |
| तृ० | अस्थना | अस्थिम्याम् | अस्थिभिः | करण |
| च० | अस्थने | अस्थिम्याम् | अस्थिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अस्थनः | अस्थिम्याम् | अस्थिभ्यः | अपा० |
| ष० | अस्थनः | अस्थनोः | अस्थनाम् | सम्ब० |
| स० | { अस्थनि अस्थनि | अस्थनोः | सस्थिषु | अधि० |
| | { हे अस्थे हे अस्थि | हे अस्थिनी | हे अस्थीनि | सम्बो० |

[१५८] इकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'सक्थि' शब्दः ।

(घुटने के ऊपरवाले हिस्सा)

| | | | | |
|-------|--------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | सक्थि | सक्थिनी | सक्थीनि | कर्त्ता |
| द्वि० | सक्थि | सक्थिनी | सक्थीनि | कर्म |
| तृ० | सक्थना | सक्थिम्याम् | सक्थिभिः | करण |
| च० | सक्थने | सक्थिम्याम् | सक्थिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सक्थनः | सक्थिम्याम् | सक्थिभ्यः | अपा० |

(के वलस्य) तदन्तस्य च भवतीत्यर्थः । एवञ्च 'अस्थिदधी'त्यनञादेशस्य अत्राऽधिकारस्थत्वात् केवलस्य = 'दधि' शब्दस्य, तदन्तस्य—अतिदधि' शब्दस्य, च भवतीति भावः । (१-२) अस्थि, सक्थ, अक्षि, शब्दानापि 'दधि' शब्दवत् तत्तत् कार्य समानमेवेत्यवधेयम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|---|---|-----------------------|-----------------------|----------------|
| प० | सकथ्न्ः | सकथ्नोः | सकथ्नाम् | सम्ब० |
| स० | { सकथ्नि सकथनि हे सकथे हे सकथि | सकथ्नोः हे सकथिनी | सकथिषु हे सकथीनि | अधि० सम्बो० |
| [१५९] इकारान्तनपुंसकलिङ्गोऽभाषितपुंसकः 'अक्षि'शब्दः (आँख) | | | | |
| प्र० | अक्षि | अक्षिणी | अक्षीणि | कर्त्ता |
| द्वि० | अक्षि | अक्षिणी | अक्षीणि | कर्म |
| तृ० | अक्षणा | अक्षिभ्याम् | अक्षिभिः | करण |
| च० | अक्षणे | अक्षिभ्याम् | अक्षिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अक्षणः | अक्षिभ्याम् | अक्षिभ्यः | अपा० |
| प० | अक्षणः | अक्षणोः | अक्षणाम् | सम्ब० |
| स० | अक्षिण-अक्षणि हे अक्षे-अक्षि | अक्षणोः हे अक्षिणी | अक्षिषु हे अक्षीणि | अधि० सम्बो० |

[१६०] ईकारान्त-नपुंसकलिङ्गो भाषितपुंसकः 'सुधी' शब्दः
(बुद्धिमान् कुल)

| | | | | |
|-------|--------------------|------------|---------|---------|
| प्र० | सुधि | सुधिनी | सुधीनि | कर्त्ता |
| द्वि० | सुधि | सुधिनी | सुधीनि | कर्म |
| तृ० | { सुधिया सुधिना | सुधिभ्याम् | सुधिभिः | करण |

(१) सुष्टु ध्यायतीति सुधी, ध्यायते सम्प्रसारणञ् इति क्तिप् यकारणस्य सम्प्रसारणमिकारः तस्य पूर्वरूपे 'हलः' इति दीर्घः । ततः ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य' इति एस्वत्वे प्रथमाद्वितीययोः अनादि' शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (२) इयत् न नुमा बाधात् । (३) सुध्यातृत्वस्य शोभनज्ञानवत्त्वस्य वा प्रवृत्तनिमित्तस्य पुंनपुंसकयोरेकमेवेति भाषितपुंसकत्वात् 'तृतीयादिष्वि'ति पुंवत्वपक्षे तुमभावादिष्व् । यण् तु न 'न भूसुधियोः' इति निषेधात् । एवं पुंवत्वपक्षे सर्वत्र बोध्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|----------------------|--------------------|------------------------|---------|
| च० | { सुधिये सुधिने | सुधिभ्याम् | सुधिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { सुधियः सुधिनः | सुधिभ्याम् | सुधिभ्यः | अपा० |
| ष० | { सुधियः सुधिनः | सुधियोः सुधिनोः | सुधिभ्याम् सुधीनाम् | सम्ब० |
| स० | { सुधियि सुधिनि | सुधियोः सुधिनोः | सुधिषु | अधि० |
| | { हे सुधे हे सुधि | हे सुधिनी | हे सुधिनि | सम्बो० |

[१६१] ईकारान्त-नपुंसकलिङ्गो भाषितपुंस्कः 'प्रधी' शब्दः

| | | | | |
|-------|------------------------|----------------------|------------------------|---------|
| प्र० | प्रधि | प्रधिनी | प्रधीनि | कर्ता |
| द्वि० | प्रधि | प्रधिनी | प्रधीनि | कर्म |
| तृ० | { प्रध्या प्रधिना | प्रधिभ्याम् | प्रधिभिः | करण |
| च० | { प्रध्ये प्रधिने | प्रधिभ्याम् | प्रधिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { प्रध्यः प्रधिनः | प्रधिभ्याम् | प्रधिभ्यः | अपा० |
| ष० | { प्रध्यः प्रधिनः | प्रध्योः प्रधिनोः | प्रध्याम् प्रधीनाम् | सम्ब० |
| स० | { प्रध्यि प्रधिनि | प्रध्योः प्रधिनोः | प्रधिषु | अधि० |
| | { हे प्रधे हे प्रधि | हे प्रधिनी | हे प्रधीनि | सम्बो० |

(१) 'सुधी' शब्दवत् 'प्रधी'शब्दस्याऽपि सर्वं कार्यं समानमेत्यवधेयम् । केवलं पुंवत्वपक्षे तृतीयादावचि 'न भूसुधियोः' इति निषेधाऽभावात् इयञ्छादेशं प्रनास्य 'एरनेकाचः' इत्यनेन यणिति विशेषः ।

[१६२] उकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'मधु' शब्दः (सहृद वा मद्य)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------------|-----------|----------|---------|
| प्र० | मधु | मधुनी | मधूनि | कर्ता |
| द्वि० | मधु | मधुनी | मधूनि | कर्म |
| तृ० | मधुना | मधुभ्याम् | मधुभिः | करण |
| च० | मधुने | मधुभ्याम् | मधुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | मधुनः | मधुभ्याम् | मधुभ्यः | अपा० |
| ष० | मधुनः | मधुनोः | मधूनाम् | सम्ब० |
| स० | मधुनि | मधुनोः | मधुषु | श्राधि० |
| | हे मधो, हेमधु | हेमधुनी | हे मधूनि | सम्बो० |

[१६३] उकारान्त-नपुंसकोऽभाषितपुंस्कः 'अम्बु' शब्दः (जल)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | अम्बु | अम्बुनी | अम्बूनि | कर्ता |
| द्वि० | अम्बु | अम्बुनी | अम्बुनि | कर्म |
| तृ० | अम्बुना | अम्बुभ्याम् | अम्बुभिः | करण |
| च० | अम्बुने | अम्बुभ्याम् | अम्बुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अम्बुनः | अम्बुभ्याम् | अम्बुभ्यः | अपा० |
| ष० | अम्बुनः | अम्बुनोः | अम्बूनाम् | सम्ब० |

(१) 'स्वमोर्नपुंसकात्' इति सुब्लुक् । (२) 'नपुंसकाच्च' इति शीभावे 'नपुंसकस्येति' जुम् । (३) 'जशोसोः शिः' इति शिभावे जुमि दीर्घः । (४) 'मधु मद्ये पुष्परसे' 'मधुर्वसन्ते चैत्रे च' इति कोशात् भाषितपुंस्कत्वेऽपि पुंनपुंसकयोः मद्यत्व-वसन्तत्वादिरूपप्रवृत्तिनिमित्तभेदात् 'तृतीयादिष्विति' न पुंवत्वविकल्पः, तेन 'इकोचि' इति जुमेव । यद्यप्यत्र पुंवत्वे चित्वाच्चाभावे रूपे विशेषाऽभावेऽपि हेविभक्त्यादौ मधुने-मधवे इति रूपान्तराऽपतिः स्यादिति भावः । (५) 'नुमचिरे'ति नुटि दीर्घः । (६) 'वारि' वत् । (७) मधुशब्दकत् कार्य शोष्यम् । (८) अम्बुशब्दस्य नित्यनपुंसकत्वेन अभाषितपुंस्कत्वात् 'तृतीयादिष्वित्यस्य प्राप्तिरेव नास्तीति' सारम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|---------------|------------|------------|---------|
| स० | अम्बुनि | अम्बुनोः | अम्बुषु | अधि० |
| | हेअम्बो अम्बु | हे अम्बुनी | हे अम्बूनि | सम्बो० |
| [१६४] उकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'वसु' शब्दः (धन) | | | | |
| प्र० | वसुं | वसुनी | वसूनि | कर्ता |
| द्वि० | वसु | वसुनी | वसूनि | कर्म |
| तृ० | वसुना | वसुभ्याम् | वसुभिः | करण |
| च० | वसुने | वसुभ्याम् | वसुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | वसुनः | वसुभ्याम् | वसुभ्यः | अपा० |
| ष० | वसुनः | वसुनोः | वसुनाम् | सम्ब० |
| स० | वसुनि | वसुनोः | वसुषु | अधि० |
| | हेवसो, वसु | हे वसुनी | हे वसूनि | सम्बो० |

[१६५] उकारान्त-नपुंसकलिङ्गोऽभाषितपुंस्कः 'अश्रु' शब्दः (मांसू)

| | | | | |
|-------|---------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | अश्रुं | अश्रुणी | अश्रूणि | कर्ता |
| द्वि० | अश्रु | अश्रुणी | अश्रूणि | कर्म |
| तृ० | अश्रुणा | अश्रुभ्याम् | अश्रुभिः | करण |
| च० | अश्रुणे | अश्रुभ्याम् | अश्रुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अश्रुणः | अश्रुभ्याम् | अश्रुभ्यः | अपा० |
| ष० | अश्रुणः | अश्रुणोः | अश्रूणाम् | सम्ब० |
| स० | अश्रुणि | अश्रुणोः | अश्रुषु | अधि० |

(१) मधुशब्दवत् 'वसु' शब्दस्याऽपि साधनप्रकारो बोध्यः । (२) देवभेदेऽनले रश्मौ वसू, रत्ने धने वसु' इति कोशात् 'वसु' शब्दस्य भाषितपुंसकत्वेऽपि । पुत्रपुंसकयोः अनलत्वरत्नत्वादिरूपप्रवृत्तिनिमित्तभेदात् 'तृतीयादिष्विति न पुंवत्वविकल्पः, अतश्च मधुशब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (३) मधुशब्दवत् अश्रुशब्देऽपि कार्यं ज्ञेयम् । (४) 'अश्रु'शब्दस्य नित्यनपुंसकत्वेन भाषितपुंसकत्वाभावात् पुंवत्वशङ्कैव नोदेतीति ।

| | | | |
|-----------------|------------|------------|-------|
| एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| हे अश्रो, अश्रु | हे अश्रुणी | हे अश्रूणि | सम्बो |

[१६६] उकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'लघु' शब्द (छोटा)

| | | | | |
|-------|--------------|----------------|----------|---------|
| प्र० | लघु | लघुनी | लघूनि | कर्ता |
| द्वि० | लघु | लघुनी | लघूनि | कर्म |
| तृ० | लघुना | लघुभ्याम् | लघुभिः | करण० |
| च० | लघवे, लघुने | लघुभ्याम् | लघुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | लघवः, लघुनः | लघुभ्याम् | लघुभ्यः | अपा० |
| प० | लघवः, लघुनः | लघ्वोः, लघुनोः | लघूनाम् | सम्ब० |
| स० | लघ्वि, लघुनि | लघ्वोः, लघुनोः | लघुषु | अधि० |
| | हेलघो, हेलघु | हेलघुनी | हे लघूनि | सम्बो० |

[१६७] उकारान्त-नपुंसकलिङ्गोऽभाषितपुंसकः 'वस्तु' शब्दः (चीज)

| | | | | |
|-------|-----------------|-------------|------------|---------|
| प्र० | वस्तु | वस्तुनी | वस्तूनि | कर्ता |
| द्वि० | वस्तु | वस्तुनी | वस्तूनि | कर्म |
| तृ० | वस्तुना | वस्तुभ्याम् | वस्तुभिः | करण |
| च० | वस्तुने | वस्तुभ्याम् | वस्तुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | वस्तुनः | वस्तुभ्याम् | वस्तुभ्यः | अपा० |
| प० | वस्तुनः | वस्तुनोः | वस्तूनाम् | सम्ब० |
| स० | वस्तुनि | वस्तुनोः | वस्तुषु | अधि० |
| | हे वस्तो, वस्तु | हे वस्तुनी | हे वस्तूनि | सम्बो० |

एवं 'जनु' शब्दादयोऽप्यभाषितपुंस्काः ।

(१) लघुशब्दस्याऽपि प्रथमाद्वितीययोर्मधुवत् कार्यमवधेयम् । (२) लघु-
शब्दस्य गुणवाचकत्वे विशेष्यनिष्पत्त्वात् नपुंसके सिञ्जलिङ्गे च अल्पत्वेन प्रवृ-
त्तिनिरूप्यात् 'तृतीयादिष्व'ति पुंस्त्वविकल्पः । (३) मधुवदस्याऽपि धावनप्रकारो
शेषः । (४) वस्तुशब्दस्य नित्यनपुंसकत्वेन अभाषितपुंसकत्वात् 'तृतीया-
दिष्वीत्यस्य प्रवृत्तिरेव नास्तीति भावः ।

[१६८] उकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'पीलु' शब्दः

पीलुः=वृक्षः, तत्फलं पीलु (फल विशेष)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------------|------------|-----------|---------|
| प्र० | पीलुं | पीलुनी | पीलुनि | कर्ता |
| द्वि० | पीलु | पीलुनी | पीलुनि | कर्म |
| तृ० | पीलुनी | पीलुभ्याम् | पीलुभिः | करण |
| च० | पीलुने | पीलुभ्याम् | पीलुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | पीलुनः | पीलुभ्याम् | पीलुभ्यः | अपा० |
| ष० | पीलुनः | पीलुनोः | पीलुनाम् | सम्ब० |
| स० | पीलुनि | पीलुनोः | पीलुषु | माधि० |
| | हे पीलो, पीलु | हे पीलुनी | हे पीलुनि | सम्बो० |

[१६९] उकारान्त-नपुंसकलिङ्ग 'सानु' शब्दः

(पर्वत का एक हिस्सा)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------------|--------------------------|--------------------|-------|
| प्र० | सानु | सानुनी | सानुनि | कर्ता |
| द्वि० | सानु | सानुनी | { स्नुनि सानुनि | कर्म |
| तृ० | { स्नुनी सानुना | स्नुभ्याम् सानुभ्याम् | स्नुभिः सानुभिः | करण |

(१) पीलोः फलं पीलु, 'ओरञ्' इत्यञ् तस्य 'फले लुक्' इति लुक् । मधु-
शब्दवत् कार्यं श्रेयम् । (२) अत्र 'तृतीयादिष्वि'ति पुंवत्वन्तु न पीलुशब्दस्य
वृक्षत्वव्याप्यजातेर्वृक्षे प्रवृत्तिनिमित्तं, फले तु पीलुशब्दस्य वृक्षत्वव्याप्यजातिवृक्ष-
विशेषप्रभवत्वं वा प्रवृत्तिनिमित्तमित्युभयथाऽपि पुत्रपुंसकयोः प्रवृत्तिनिमित्तभेदात् ;
एवं च मधुशब्दवत् । (३) सुटि मधुशब्दवत् । (४) 'पददन्नि'ति सूत्रस्थ-
'मांस-पृतना-सानुनी मांस-पृत्-स्नवो वाच्यः' इति वार्तिकेन सानुशब्दस्य श-
सादौ स्नुर्विकल्पः । (५) 'स्नुः प्रस्थः सानुस्त्रियाम्' इति कोशात् सानुशब्दस्य
मापितपुंस्कत्वेन 'तृतीयादिष्वि'ति पुंवत्वविकल्पः । एवञ्च पुंवत्वे स्तुत्वे च नामावै

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|------------------------------|------------------------------|-----------------------|---------|
| च० | { स्तवे सानवे सानुने | स्तुभ्याम् सानुभ्याम् | स्तुभ्यः सानुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { स्तोः सानोः सानुनः | स्तुभ्याम् सानुभ्याम् | स्तुभ्यः सानुभ्यः | अपा० |
| प० | { स्तोः सानोः सानुभ्तः | स्तनवोः सानवोः सानुनोः | स्तनूनाम् सानूनाम् | सम्ब० |
| स० | { स्तो सानौ सानुनि | स्तनवोः सानवो सानुनोः | स्तुषु सानुषु | अधि० |
| | { हे सानो हे सानु | हे सानुनी | हे सानूनि | सम्बो० |

[१७०] उकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'प्रियक्रोष्टु' शब्दः

(शृगाल को प्यार करने वाला कुल)

प्र० प्रियक्रोष्टु प्रियक्रोष्टुनी प्रियक्रोष्टूनि कर्ता

'स्तुना' । स्तुत्वविकल्पे नाभावे च 'सानुना' । स्तुत्वपुंवत्वयोः उभयोर्विकल्पे नुमि (सानुना) इति । अत्र पक्षे रूपे विशेषाभावेऽपि कार्ये विशेषः । (१) पुंवत्वे स्तुत्वे च धित्वात् 'वेर्लिति' इति गुणे अवादेशः । स्तुत्वविकल्पे पुंवत्वसत्त्वे पूर्ववत्कार्ये 'सानवे' उभयोर्विकल्पे क्लीवत्वान्नुमि ङयि त्रिणि रूपाणि । एवं ङङि-उस्-ओस्-ओविभक्तिषु त्रिणि २ रूपाणि पूर्ववत् यथा शास्त्रेण साधनीयानि । (२) पुंवत्वे स्तुत्वे च नुटि दीर्घः । स्तुत्वाभावे पुंवत्वाऽभावे न कश्चित् रूपे कार्ये वा विशेषः यतः पुंवत्वाऽभावेऽपि 'नुमचिरे'ति नुडेव स्यादिति तत्त्वम् । (३) प्रियः क्रोष्टा यस्य कुलस्य तदिति विग्रहः (क्रोष्टुशब्दस्य प्रक्रियाकार्यं २६ पृष्ठे द्रष्टव्यम्) प्रथमाद्वितीययोः मधुवत् कार्यं ज्ञेयम् । एकवचनद्विवचनयोः 'तृज्व-त्क्रोष्टु' इति तृज्वत्वं प्राप्तमसर्वनामस्थानत्वाच्च भवति ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|-------|---|--|---------------------------|
| द्वि० | प्रियक्रोष्टु | प्रियक्रोष्टुनी | प्रियक्रोष्टूनि कर्म० |
| तृ० | { प्रियक्रोष्ट्रा प्रियक्रोष्टुना | प्रियक्रोष्टुभ्याम् | प्रियक्रोष्टुभिः करण |
| च० | { प्रियक्रोष्ट्रे प्रियक्रोष्ट्वे प्रियक्रोष्टुने | प्रियक्रोष्टुभ्याम् | प्रियक्रोष्टुभ्यः सम्प्र० |
| पं० | { प्रियक्रोष्टुः प्रियक्रोष्टोः प्रियक्रोष्टुनः | प्रियक्रोष्टुभ्याम् | प्रियक्रोष्टुभ्यः अपा० |
| ष० | { प्रियक्रोष्टुः प्रियक्रोष्टोः प्रियक्रोष्टुनः | प्रियक्रोष्टोः प्रियक्रोष्टोः प्रियक्रोष्टुनोः | प्रियक्रोष्टूनाम् सम्ब० |
| स० | { प्रियक्रोष्टुरि प्रियक्रोष्टौ प्रियक्रोष्टुनि | प्रियक्रोष्टोः प्रियक्रोष्टोः प्रियक्रोष्टुनोः | प्रियक्रोष्टुषु अधि० |
| | { हे प्रियक्रोष्टो हे प्रियक्रोष्टु | हे प्रियक्रोष्टुनी | हे प्रियक्रोष्टूनि सम्बो० |

[१७१] ऊकारान्तः-नपुंसकलिङ्गः 'सुल्ल' शब्दः

(लच्छा काटने वाला अल्ल)

(१) जश्शसोः शिभावे सर्वनामस्थानत्वात् नुमं बाधित्वा तृज्वत्वं प्राप्तं 'वृद्धयौत्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम्पूर्वविप्रतिषेधेन' इति वार्तिकान्न भवति । (२) पुं-वत्वे 'विभाषा तृतीयादिष्विति तृज्वत्वे च यण् । तृज्वत्वाभावे पुंपत्वेन धित्वान्नाभावः । पुंवत्व-तृज्वत्वयोरभावेऽपि नुम् (प्रियक्रोष्टुना) इत्येवेति न रूपे विशेषः, कार्ये तु विशेषः स्पष्ट एव । (३) भ्यामादौ हलि न कश्चित् रूपे कार्ये वा विशेषः । (४) पुंवत्वे तृज्वत्वे यण् । तृज्वत्वाऽभावे धित्वात् गुणे अवादेशः । पुंवत्वतृज्वत्वयोरुभयोरभावे तु नुमि 'प्रियक्रोष्टुने' इति तथा च ङयि त्रिणि रूपाणि । एवं छसिच्छसादापि तृज्वत्वपुंवत्वपक्षे तदभावे च यथा शार्ङ्गं ज्ञेयम् । (५) अत्र पुंवत्वे तृज्वत्वं, तदभावे नुमं च बाधित्वा । 'नुमचिरे'ति नुटि दीर्घः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------------------------|------------|-----------|---------|
| प्र० | सुलुं | सुलुनी | सुलुनि | कर्त्ता |
| द्वि० | सुलु | सुलुनी | सुलुनि | कर्म |
| तृ० | सुलुंश्च सुलुना | सुलुभ्याम् | सुलुभिः | करण |
| च० | सुलुवे सुलुने | सुलुभ्याम् | सुलुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुलुवः सुलुनः | सुलुभ्याम् | सुलुभ्यः | अपा० |
| ष० | { सुलुवः | सुलुवोः | सुलुवाम् | सम्ब० |
| | { सुलुनः | सुलुनोः | सुलुनाम् | |
| स० | { सुलुवि | सुलुवोः | सुलुषु | अधि० |
| | { सुलुनि | सुलुनोः | | |
| | हे सुलु हे सुलु हे सुलुनी | | हे सुलुनि | सम्बो० |

[१७२] ऋकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'धातु' शब्दः (रक्षक कुरु)

| | | | | |
|-------|---------------|------------|---------|---------|
| प्र० | धातु | धातुणी | धातूणि | कर्त्ता |
| द्वि० | धातु | धातुणी | धातूणि | कर्म |
| तृ० | धात्रा धातुणा | धातुभ्याम् | धातुभिः | करण |

(१) सुष्टु लुनातीति सुलु, किप् 'ह्रस्वो नपुंसके'ति ह्रस्वः । सुटि मधुशब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (२) 'ओः सुपी'ति यणं नाधित्वा परत्वान्नुम् । (३) शोभन-लवनकर्तृत्वस्य पुन्नपुंसकयोरेकमेवप्रवृत्तिनिमित्तमिति भाषितपुंसकत्वात् पुंवत्वपक्षे 'ओः सुपी'ति यण्, नाभावस्तु न पुंवत्वे ह्रस्वाऽभावेनाऽधित्वात् । पुंवत्वाऽभावे नुम् । एवं हे ळसि ळसादापवपि पुंवत्वे तदभावे च यथा शास्त्रं ज्ञेयम् । इति । (४) पुंवत्वे यण् तदभावे 'नुमचिरे'ति नुटि दीर्घः । (५) दधातीति 'धातु' रुधाञ् धारणपोषणयोः, अस्मात् तृन् तृज्वा । 'नपुंसकाच्चे'ति सुब्लुकि प्रत्यय-लक्षणेन 'ऋदुसनस्' इत्यनष्टु न 'न लुमते'त्यस्याऽनित्यत्वात् । (६) शीभावे नुमि 'ऋद्वर्णाक्षस्ये'ति णत्वम् । (७) शिभावे नुमि सर्वनामस्थाने चे'ति दीर्घे णत्वम् । 'ऋतो णीति गुणस्तु न पूर्विप्रतिषेधाद्भूमि कृते ऋदन्तत्वाभावात् । (८) धारणपोषणकर्तृत्वरूपप्रवृत्तिनिमित्तस्य पुन्नपुंसकयोरेक्यात् 'तृतीयादिष्वि'ति पुंवत्त्वे नुमभावात् यण् । नाभावरस्तु न ऋदन्तत्वेन धित्वाभावात् । पुंवत्वाभावे तु नुमि णत्वम् । (९) भ्वाभादौ एलि न कश्चित् रूपे कार्ये वा विशेषः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-------------------|--------------------|-----------|---------|
| च० | धात्रे धातृणे | धातृभ्याम् | धातृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | धातुः धातृणः | धातृभ्याम् | धातृभ्यः | अपा० |
| ष० | { धातुः धातृणः | धात्रोः धातृणोः | धातृणाम् | सम्ब० |
| स० | { धातरि धातृणि | धात्रोः धातृणोः | धातृषु | अधि० |
| | हेधातः हेधात् | हेधातृणी | हे धातृणि | सम्बो० |

[१७३] ऋकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'ज्ञात्' शब्दः

(समज्ञने वाला कुल)

| | | | | |
|-------|-----------------------|------------------------|-------------|----------|
| प्र० | ज्ञात् | ज्ञातृणी | ज्ञातृणि | कर्त्ता० |
| द्वि० | ज्ञात् | ज्ञातृणी | ज्ञातृणि | कर्म |
| तृ० | ज्ञात्रा ज्ञातृणा | ज्ञातृभ्याम् | ज्ञातृभिः | करण |
| च० | ज्ञात्रे ज्ञातृणे | ज्ञातृभ्याम् | ज्ञातृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | ज्ञातुः ज्ञातृणः | ज्ञातृभ्याम् | ज्ञातृभ्यः | अपा० |
| ष० | { ज्ञातुः ज्ञातृणः | ज्ञात्रोः ज्ञातृणोः | ज्ञातृणाम् | सम्ब० |
| स० | { ज्ञातरि ज्ञातृणि | ज्ञात्रोः ज्ञातृणोः | ज्ञातृषु | अधि० |
| | हेज्ञातः हेज्ञात् | हेज्ञातृणी | हे ज्ञातृणि | सम्बो० |

(१) पुंवत्वे यण्, तदभावे तु नुमि णत्वम् । एवं ङसि-ङस्-ओ-विभक्ति-
ष्वपि ज्ञेयम् । (२) पुंवत्वे तदभावे च 'नुचिरे'ति नुटि दीर्घे णत्वम् । (३) पुंवत्व-
पक्षे 'ऋतो ङीति गुणः, तदभावे 'वृद्धयौत्वे'ति गुणं बाधित्वा नुमि णत्वम् । (४)
'न लुमते'त्यस्यानित्यत्वात् पक्षे सम्बुद्धिनिमि को ह्रस्वस्य गुणः । (५) धातृ-
शब्दवत् ज्ञातृशब्देऽपि सर्वत्र समानं कार्यमिति ज्ञेयम् । (६) ज्ञातृत्वरूप-
प्रवृत्तिनिमित्तस्य पुनपुंसकयोः समानत्वात् 'तृतीयादिष्वि'ति पुंवत्वविकल्पः ।

[१७४] ऋकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'कर्तृ' शब्दः (करनेवाला कुल)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------------------|------------------------|------------|---------|
| प्र० | कर्तृ | कर्तृणी | कर्तृणि | कर्त्ता |
| द्वि० | कर्तृ | कर्तृणी | कर्तृणि | कर्म |
| तृ० | कर्त्रा कर्तृणा | कर्तृभ्याम् | कर्तृभिः | करण |
| च० | कर्त्रे कर्तृणे | कर्तृभ्याम् | कर्तृभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | कर्तुः कर्तृणः | कर्तृभ्याम् | कर्तृभ्यः | अपा० |
| ष० | { कर्तृः कर्तृणः | { कर्त्राः कर्तृणाः | कर्तृणाम् | सम्ब० |
| स० | { कर्तरि कर्तृणि | { कर्त्राः कर्तृणाः | कर्तृषु | आधि० |
| | हेकर्तः हेकर्तृ | हे कर्तृणी | हे कर्तृणि | सम्बो० |

एवं वक्तृ-नेतृ-हर्तृ-गन्तृ-इत्याबयो भाषितपुंस्काः=

एकप्रवृत्तिनिमित्ताः ।

[१७५] लृकारान्त, नपुंसकलिङ्गो 'गम्लृ' शब्द ।

| | | | | |
|-------|-------|---------|---------|---------|
| प्र० | गम्लृ | गम्लृणी | गम्लृणि | कर्त्ता |
| द्वि० | गम्लृ | गम्लृणी | गम्लृणि | कर्म |

इत्यादि धातृशब्दवत् बोध्यम् ।

[१७६] एकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'सुस्मृते' शब्दः

(सुन्दररूपेण कामदेव को स्मरण करने वाला कुल)

| | | | | |
|------|----------|------------|------------|---------|
| प्र० | सुस्मृति | सुस्मृतिनी | सुस्मृतीनि | कर्त्ता |
|------|----------|------------|------------|---------|

(१) कृधातोः वृत्ति गुणः । धातृशब्दवत् कर्तृशब्दस्याऽपि समानं कार्यं भवतीति ध्येयम् । (२) कर्तृत्वरूपप्रवृत्तिनिमित्तस्य पुत्रपुंसकयोरैक्यात् 'तृतीया-दिष्विति पुंत्वविकल्पः । (३) धातृशब्दवत् साधनप्रकारश्च ज्ञेयः, लोके प्रचुर-प्रयोगाऽभावादत्रत्यविशेषविचारोऽनुपयुक्तः इति समवयस्काः । (४) भः= विष्णुः, तस्यापत्यम्-इः=कामः 'भत इष्' । 'यस्येतिचेत्य'कारलोपः । ततः इः

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------------------------|---------------------------|-----------------------------|---------|
| द्वि० | सुस्मृति | सुस्मृतिनी | सुस्मृतीनि | कर्म |
| तृ० | { सुस्मृतया सुस्मृतिना | सुस्मृतिभ्याम् | सुस्मृतिभिः | करण |
| च० | { सुस्मृतये सुस्मृतिने | सुस्मृतिभ्याम् | सुस्मृतिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { सुस्मृतेः सुस्मृतिनः | सुस्मृतिभ्याम् | सुस्मृतिभ्यः | अपा० |
| ष० | { सुस्मृतेः सुस्मृतिनः | सुस्मृतयोः सुस्मृतिनोः | सुस्मृतयाम् सुस्मृतीनाम् | सम्ब० |
| स० | { सुस्मृतयि सुस्मृतिनि | सुस्मृतयोः सुस्मृतिनोः | सुस्मृतिषु | अधि० |
| | { हे सुस्मृते हे सुस्मृति | हे सुस्मृतिनी | हे सुस्मृतीनि | सम्बो० |

स्मृतो येन स स्मृतेः । सु = शोभनः स्मृतेर्यस्य (कुलस्य) तत् 'सुस्मृति' इति । 'एच इघ्नः स्वादेशे' इति ह्रस्वे सुब्लुकि । 'ह्रस्वो नपुंसके' इत्यनेनैव सिद्धिस्तु न एचो ह्रस्वाऽभावात्, 'एचामपि द्वादश तेषां ह्रस्वाऽभावात्' इति स्मरणादिति भावः । अयमाशयः एचो ह्रस्वाभावेऽपि, एचां पूर्वभागः अकारसदृशः, उत्तरस्तु इव-गोवर्णसदृशः तत्रोभयान्तरतमस्य ह्रस्वस्याऽभावात् पर्यायेण अकार-इकार-उकाराणामुपस्थिते मा कदाप्यकारो भूदिति 'एच इघ्नः' इति नियमार्थमिदं परिभाषासूत्रमारभ्यते । ततश्च तालुस्थानजन्यत्वसाम्येन एकारैकारयोः इकारः, अथ च ओठ-स्थानजन्यत्वसाम्येन ओकारौकारयोः उकार एव ह्रस्वो भवतीति दिक् । (१) शोभनस्मृतित्वरूपग्रवृत्तिनिमित्तस्य पुन्नपुंसकयोरैक्यात् 'तृतीयादौ पुंवत्वविकल्पः सिद्धः इति नवीनाः । तन्मते पुंवरत्वपक्षे ह्रस्वाभावेन 'से' शब्दवत् अयादेशः इति विशेषः । प्राचीनमते तु अत्र न पुंवत्, यतः 'सुस्मृते' शब्दः पुंसि एदन्तः, नपुंसके तु 'सुस्मृति' शब्दः इदन्त इति, पुंसि 'सुस्मृते' शब्दस्य भाषितपुंस्कत्वेन नपुंसके 'सुस्मृति' शब्दस्य तदपेक्षया भिन्नत्वेन भाषितपुंस्कत्वाभावात् । वस्तुतस्तु तन्मन्दम्, 'एकदेशविकृतन्यायस्य (स्थानिवद्भावस्य) जागरूकत्वेन भिन्नत्वाभावात् ।

[१७७] ऐकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'प्रै' शब्दः (अधिक धनवान् कुल)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------------|--------------|------------|---------|
| प्र० | प्रैरि | प्ररिणी | प्ररीणि | कर्त्ता |
| द्वि० | प्ररि | प्ररिणी | प्ररीणि | कर्म |
| तृ० | प्रैरिणा | प्रैराभ्याम् | प्रराभिः | करण |
| च० | प्ररिणे | प्रराभ्याम् | प्रराभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्ररिणः | प्रराभ्याम् | प्रराभ्यः | अपा० |
| ष० | प्ररिणः | प्ररिणोः | प्रैरीणाम् | सम्ब० |
| स० | प्ररिणि | प्ररिणोः | प्ररासु | अधि० |
| | हे प्ररे हे प्ररि | हे प्ररिणी | हे प्ररीणि | सम्बो० |

[१७८] ओकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'प्रद्यो' शब्दः (सुन्दर आकाशवाला वन)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | प्रद्युँ | प्रद्युनी | प्रद्यूनि | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रद्यु | प्रद्युनी | प्रद्यूनि | कर्म |
| तृ० | प्रद्युँना | प्रद्युभ्याम् | प्रद्युभिः | करण |
| च० | प्रद्युने | प्रद्युभ्याम् | प्रद्युभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रद्युनः | प्रद्युभ्याम् | प्रद्युभ्यः | अपा० |
| ष० | प्रद्युनः | प्रद्युनोः | प्रद्यूनाम् | सम्ब० |

(१) प्रकृष्टो रा = धनं यस्य (कुलस्य) तत् 'प्ररि' इति । 'एच इप्रः' इति ह्रस्वे वारिशब्दवत् कार्यं बोध्यम् । (२) नवीनमते तु 'सुस्मृते' शब्दवत् पुंवत्वविकल्पो भवत्येवेति । (३) हलादौ तु एकदेशविकृतन्यायेन (स्थानिवद्भावेन) 'रायो हली'ति आत्वम् । (४) 'नुमचिरे'ति नुटि दीर्घे णत्वम् । नुटि सति 'रायो हली'ति आत्वन्तु न 'सन्निपातपरिभाषाविरोधात् । 'नामी'ति दीर्घे कर्तव्ये सन्निपातपरिभाषाविरोधस्तु न 'नामी'ति दीर्घारम्भसामर्थ्यात् । (५) प्रकृष्टा रौर्त्तस्य (वनस्य) तत् प्रद्यु । 'एच इप्रः स्वादेशे' इति आन्तरतम्यात् ओकारस्य उकारे मधुशब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (६) प्रकृष्टस्वर्गवत्त्वरूपप्रवृत्तिनिमित्तस्य पुंनपुंसकयोरेक्यादत्रापि पुंवत्वविकल्पो भवत्येवेति तत्त्वविदः । परममूलो-

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|----------------------------|--------------|--------------|---------|
| स० | प्रद्युनि | प्रद्युनोः | प्रद्युषु | अधि० |
| | { हे प्रद्यो हे प्रद्यु | हे प्रद्युनी | हे प्रद्यूनि | सम्बो० |
| [१७९] औकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'सुनौ' शब्दः (अच्छी नाववाला कुल) | | | | |
| प्र० | सुनुं | सुनुनी | सुनूनि | कर्त्ता |
| द्वि० | सुनु | सुनुनी | सुनूनि | कर्म० |
| तृ० | सुनुना | सुनुभ्याम् | सुनुभिः | करण० |
| च० | सुनुने | सुनुभ्याम् | सुनुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुनुनः | सुनुभ्याम् | सुनुभ्यः | अपा० |
| ष० | सुनुनः | सुनुनोः | सुनूनाम् | सम्ब० |
| स० | सुनुनि | सुनुनोः | सुनुषु | अधि० |
| | हे सुनो, हे सुनु | हे सुनुनी | हे सुनूनि | सम्बो० |
| इति अजन्तनपुंसकलिङ्गशब्दाः ॥ ३ ॥ | | | | |

अथ हलन्तपुंलिलङ्गशब्दाः ॥ ४ ॥

[१८०] हकारान्तपुंलिलङ्गो 'लिह्' शब्दः (चाटने वाला)

| | | | | |
|-------|-----------|------|------|---------|
| प्र० | लिह्-लिड् | लिहौ | लिहः | कर्त्ता |
| द्वि० | लिहम् | लिहौ | लिहः | कर्म |

करीत्या अत्र न पुंवत् प्रद्योशब्दस्य पुंसि ओदन्तत्वेन नपुंसके उदन्तत्वेनेति-
भाषितपुंसकत्वाभावात् । वस्तुतस्तु तन्न समीचीनम् स्थानिवद्भावेन नपुंसकेऽपि-
ओदन्तत्वस्य सत्त्वात् । (१) सु=शोभना नौर्यस्य (कुलस्य) तत् 'सुनु' । 'एच
इघ्नः' इति आन्तरतम्यात् औकारस्य उकारे मधुवंत् कार्यं ज्ञेयम् । (२) सुस्मृति-
शब्दवत् अत्रापि पुंवत्वविकल्पः इष्ट एवेति तत्त्वविदः ।

इति सोत्तरा कौमुदीरूपलतायाम् अजन्तनपुंसकप्रकरणम् ॥ ३ ॥

(३) लिह् 'आस्वादने' अस्मात् क्विप, हलङ्घ्यादिना सुलोपे 'हो ढः' इति ढत्वे

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|--------------|------------|------------------------|---------|
| तृ० | लिहा | लिह्भ्याम् | लिह्भिः | करण |
| च० | लिहे | लिह्भ्याम् | लिह्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | लिहः | लिह्भ्याम् | लिह्भ्यः | अपा० |
| प० | लिहः | लिहोः | लिहाम् | सम्ब० |
| स० | लिहि | लिहोः | { लिह्त्सु लिह्त्सु | अधि० |
| | हे लिह्-लिह् | हे लिहौ | | हे लिहः |

[१८१] हकारान्त-पुँल्लिङ्गो 'दामलिह्' शब्दः

(रस्सी को चाटने वाला)

प्र० दामलिह्-ङ् दामलिहौ दामलिहः कर्ता

'वावसाने' इति वैकल्पिकचर्त्तवः । (१) स्वादिष्विति पदत्वात् ढत्वे सति ज-
 श्त्वम् । (२) ढत्वे कृते तस्य जश्त्वेन ढः ततः 'खरिचे'ति चर्त्तवस्याऽसिद्धत्वात्
 'दधि धुट्' इति पक्षे धुट्, तस्य चर्त्तवें तकारः, ततो ढस्य चर्त्तवें टः । धुटश्च-
 र्त्तवसम्पन्नस्य तकारस्याऽसिद्धत्वात् 'चयोः द्वितीयाः' इति तस्य थो न भवति ।
 एवं तकारस्य घृत्वमपि न शक्यः 'न पदान्तादि' ति निषेधात् । (३) दाम लेहीति
 'दामलिह्' किप् । तमात्मन इच्छतीत्यर्थे 'सुप आत्मनः' इति क्यच्चि, क्यजन्तस्य
 यातृत्वात् लटि तिपि शपि दामलिह्यति इति । ततः क्यजन्तात् कर्तरि किपि अल्ल-
 पयलोपौ दामलिह् शब्दः । अस्याऽपि साधनकार्यं 'लिह्' शब्दवत् ज्ञेयम् । नचात्र
 दामलिह्शब्दे 'दादेर्धातोर्घः' इति घत्वं कुतोनेति चेच्छुणु -'दादेर्धातोर्घः' इति सूत्रे
 'धातोर्'रित्यावर्तते तत्रैकमतिरच्यमानमुपदेशकालं लक्षयति ततश्च उपदेशे दादे-
 र्धातोर्घस्य घः स्याल्ललि पदान्ते च इत्यर्थो लभ्यते, तेन 'दामलिह्' इत्यत्र घत्वेन
 नाऽतिव्याप्तिः, (अलक्ष्ये लक्षणस्याऽऽगमनमतिव्याप्तिः) धातूपदेशे दामलिहित्ति
 शुब्धातोः पाठाऽभावात् । एवम् 'अधोक्' इत्यत्रापि नाऽव्याप्तिः (लक्ष्ये लक्ष-
 णस्य अनागमनमव्याप्तिः) घत्वप्रवृत्तिवेल्यां दुहेर्देकारादित्वाऽभावेऽपि धातूप-
 देशकाले दादित्वाभावादिति भावः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------|---------------|------------|------|
| द्वि० | दामलिहम् | दामलिहौ | दामलिहः | कर्म |
| तृ० | दामलिहा | दामलिह्भ्याम् | दामलिह्भिः | करण |

इत्यादि 'लिह्' शब्दवत् ।

[१८२] हकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'दुह्' शब्दः

(गौ आदि को दुहने वाला)

| | | | | |
|-------|--------------|------------|----------|---------|
| प्र० | धुक्-धुग् | दुहौ | दुहः | कर्ता |
| द्वि० | दुहम् | दुहौ | दुहः | कर्म |
| तृ० | दुहा | धुग्भ्याम् | धुग्भिः | करण |
| च० | दुहे | धुग्भ्याम् | धुग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | दुहः | धुग्भ्याम् | धुग्भ्यः | अपा० |
| ष० | दुहः | दुहोः | दुहाम् | सम्ब० |
| स० | दुहि | दुहोः | धुंक्षु | अधि० |
| | हे धुक्-धुग् | हे दुहौ | हे दुहः | सम्बो० |

(१) 'दुह प्रपूरणे' अस्मात् क्तिप् 'दुह्' इति । तस्मात् घी 'हल्' इत्यादिना लोपे 'दादेर्धातोर्घः' इति घत्वे 'एकाचो वशो भष' इति झषन्तत्वात् भषभावे चर्त्त्विकल्पः । नच दुहेर्घत्वे धात्ववयवमेकाज्रूपं 'दु' इति 'उघ्' इति च तत्र आद्यो न झषन्तः, अन्त्ये न वश् 'दुघ्' इति तु नाऽवयवः तथा च कथमत्र भषभावेन घकारः स्यादिति वाच्यम्, व्यपदेशवद्भावेन तत्सिद्धेः । राहोश्शरः इति वत् धातावेव धात्ववयवत्वव्यवहारो भवतीति भावः । नचैवमपि 'धातोरुच्यमानं कार्यं तत्प्रत्यये' इति परिभाषया भषभावस्याऽप्रवृत्तिरस्त्येवेति वाच्यम्, प्रत्यये परे धातोरुच्यमानं कार्यं धातुशब्दमुच्चार्य विहितप्रत्यये एव भवतीति परिभाषार्थेन अत्र भषभावस्य धातुकार्यस्य पदान्तनिमित्तत्वेन प्रत्ययनिमित्तत्वाऽभावादुक्तपरिभाषाऽप्रवृत्तेः (२) अजादौ भषभावस्तु न पदान्तत्वाऽभावात् । (३) भ्यामादौ हलि घत्वे कृते 'स्वादिष्विति' पदत्वात् भषभावे जश्त्वम् । अजादौ पदत्वन्तु न भसंज्ञया बाधात् । (४) घत्वे कृते पदान्तत्वप्रयुक्तभषभावे जश्त्वेन गकारः ततः 'खरि च' इति चर्त्त्वस्याऽभिद्धत्वात् पूर्वं पत्वे ततो चर्त्त्वम् ।

[१८३] हकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'द्रुह' शब्दः (द्रोही)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------------------------------------|--------------------------------|---------------------------------|---------|
| प्र० | { ध्रुक-ध्रुग् ध्रुद्-ध्रुङ् | द्रुहौ | द्रुहः | कर्त्ता |
| द्वि० | द्रुहम | द्रुहौ | द्रुहः | कर्म |
| तृ० | द्रुहा | { ध्रुग्भ्याम् ध्रुङ्भ्याम् | ध्रुग्भिः ध्रुङ्भिः | करण |
| च० | द्रुहे | { ध्रुग्भ्याम् ध्रुङ्भ्याम् | ध्रुग्भ्यः ध्रुङ्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | द्रुहः | { ध्रुग्भ्याम् ध्रुङ्भ्याम् | ध्रुग्भ्यः ध्रुङ्भ्यः | अपा० |
| ष० | द्रुहः | द्रुहोः | द्रुहाम् | सम्ब० |
| स० | द्रुहि | द्रुहो | { ध्रुक्षु ध्रुत्सु ध्रुत्सु | आधि० |
| | { हे ध्रुक-ध्रुग् हे ध्रुद्-ध्रुङ् | हे द्रुहौ | हे द्रुहः | सम्बो० |

(१) द्रुह जिघासायाम् अस्मात् सोर्लोपे दादित्वात् ढत्वं बाधित्वा 'दादेः' इति नित्यं घत्वे प्राप्ते इतरेषाम् = सुह्-ष्णुह्-ष्णिहाम्, अदादित्वात् अप्राप्ते पत्वे 'वा द्रुह-सुह्-ष्णुह्-ष्णिहाम्' इति विभाषार्थमारभ्यते । ततश्च अनेन पत्वपक्षे भषभावे चर्त्त्वविकल्पः । घत्वाभावपक्षे तु ढत्वे चर्त्त्वविकल्पः । (२) अजादौ घत्वं न भवति क्षल्परत्वाऽभावात् । एवं भषभावोऽपि न पदान्त त्वाभावात् । (३) पत्वपक्षे पदत्वात् भषभावे जश्त्वम् । घत्वाऽभावपक्षे ढत्वे जश्त्वम् । एवं भिसि भ्यसि च बोध्यम् । (४) पत्वे भषभावे पत्वे चर्त्त्वम् । घत्वाऽभावपक्षे ढत्वे भषभावे षस्य जश्त्वे भुटि षस्य जश्त्वे चर्त्त्वम् । चर्त्त्वस्याऽसिद्धत्वात् 'चयोः द्वितीयाः' इति तस्य यो न भवति । एव' नपदान्तादिति निषेधात् ष्ढत्वञ्च नेति ध्येयम् । पुञ्जभावपक्षे 'लिट्स्व' इति ।

[१८४] हकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'मुह्' शब्दः (अविवेकी)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------------------------|----------------------------|---------------------------|---------|
| प्र० | { मुक्-मुग् मुद्-मुड् | मुहौ | मुहः | कर्ता |
| द्वि० | मुहम् | मुहौ | मुहः | कर्म |
| तृ० | मुहा | { मुग्भ्याम् मुड्भ्याम् | { मुग्भिः मुड्भिः | करण |
| च० | मुहे | { मुग्भ्याम् मुड्भ्याम् | { मुग्भ्यः मुड्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | मुहः | { मुग्भ्याम् मुड्भ्याम् | { मुग्भ्यः मुड्भ्यः | अपा० |
| ष० | मुहः | मुहोः | मुहाम् | सम्ब० |
| स० | मुहि | मुहोः | { मुक्षु मुद्सु मुद्सु | अधि० |
| | { हे मुक् मुग् हे मुद् मुड् | हे मुहौ | हे मुहः | सम्बो० |

[१८५] हकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'ष्णुह्' शब्दः (वमन करने वाला)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------------------------------|--------------------------------|----------------------------|---------|
| प्र० | { ष्णुकं ष्णुग् ष्णुद्-ष्णुड् | ष्णुहौ | ष्णुहः | कर्ता |
| द्वि० | ष्णुहम् | ष्णुहौ | ष्णुहः | कर्म |
| तृ० | ष्णुहा | { ष्णुग्भ्याम् ष्णुड्भ्याम् | { ष्णुग्भिः ष्णुड्भिः | करण |
| च० | ष्णुहे | { ष्णुग्भ्याम् ष्णुड्भ्याम् | { ष्णुग्भ्यः ष्णुड्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | ष्णुहः | { ष्णुग्भ्याम् ष्णुड्भ्याम् | { ष्णुग्भ्यः ष्णुड्भ्यः | अपा० |

(१) 'मुह वैचित्तये' अस्मात् किप् । भषभावं वज्रयित्वा सर्वं कार्यं 'दृह्' शब्दवत् ज्ञेयम् । (२) 'ष्णुह उद्गिरणे' अस्मात् किप् । भषभावकायं विहाय अन्यत् सर्वं दृह् शब्दवत् ।

| | | | | |
|------|------------------------------------|----------|--------------------------------|-------|
| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| प्र० | ःणुहः | ःणुहोः | ःणुहाम् | सम्ब० |
| स० | ःणुहि | ःणुहोः | { ःणुक्षु-ःणुदत्सु ःणुदत्सु | अधि० |
| | { हे ःणुक्-ःणुग् हे ःणुट्-ःणुड् | हे ःणुहौ | हे ःणुहः | |

[१८६] हकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'णिह' शब्दः (प्रेमी)

| | | | | |
|-------|--------------------------------|----------------------------|-----------------------------|---------|
| प्र० | { णिक्-णिग् णिट्-णिड् | णिहौ | णिहः | कर्ता |
| द्वि० | णिहम् | णिहौ | णिहः | कर्म |
| स० | णिहा | { णिग्भ्याम् णिड्भ्याम् | णिग्भिः णिड्भिः | करण |
| च० | णिहे | { णिग्भ्याम् णिड्भ्याम् | णिग्भ्यः णिड्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | णिहः | { णिग्भ्याम् णिड्भ्याम् | णिग्भ्यः णिड्भ्यः | अपा० |
| प० | णिहः | णिहोः | णिहाम् | सम्ब० |
| स० | णिहि | णिहोः | { णिक्षु-णिदत्सु णिदत्सु | अधि० |
| | { हे णिक्-णिग् हे णिट्-णिड् | हे णिहौ | हे णिहः | सम्बो० |

[१८७] हकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'विश्ववाद्' शब्दः (ब्रह्मा)

| | | | | |
|------|--------------------------|-----------|-----------|-------|
| प्र० | { विश्ववाद् विश्ववाड् | विश्ववाटौ | विश्ववादः | कर्ता |
|------|--------------------------|-----------|-----------|-------|

(१) 'णिह प्रीती' अस्मात् ङिप् । अस्मादपि भवभावं पदभित्वा सर्वे कर्म 'हृद्' शब्दत्वं समानं होयम् । (२) दिव्यं महतीत्यर्थे 'बहद्' इति णि

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------------------------|-----------------|------------------------------|---------|
| द्वि० | विश्ववाहम् | विश्ववाहौ | विश्वौहः | कर्म |
| तृ० | विश्वौहा | विश्ववाद्भ्याम् | विश्ववाद्भिः | करण |
| च० | विश्वौहे | विश्ववाद्भ्याम् | विश्ववाद्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | विश्वौहः | विश्ववाद्भ्याम् | विश्ववाद्भ्यः | अपा० |
| ष० | विश्वौहः | विश्वौहोः | विश्वौहाम् | सम्ब० |
| स० | विश्वौहि | विश्वौहोः | { विश्ववाट्सु विश्ववाट्सु | अधि० |
| | हे विश्ववाट् हे विश्ववाड् | हे विश्ववाहौ | हे विश्ववाहः | सम्ब० |

[१८८] हकारान्त-पुंल्लिङ्गः 'अनडुह' शब्दः (बैल)

णकार इत्, इकार उच्चारणार्थः, 'विरपृक्तस्य' इति वलोपः, 'अत उपधायाः' इति वृद्धिः, उपपदसमासः, 'विश्ववाह्' इति । ततः सोर्हल्लथादिना लोपे ढत्वे चत्वंविकल्पः । नच 'वहश्चे'ति सूत्रे 'छन्दसि सहः' इत्यतः छन्दसीति केचिदनुवर्तयन्ति तन्मतपक्षे विश्ववाह्शब्दस्य लोके कथं प्रयोगः इति चेत् ? णिजन्तात् विश्वशब्दपूर्वकात् वाहेः 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति विचि सर्वाऽपहारे 'नेह्वशि कृति' इति निषेधादिडभावे णिलोपे विश्ववाह्शब्दो बोध्यः । वस्तुतस्तु क्तिपोपलक्षणमेतत् विजिति' अन्यथा शक्ति विश्ववाह् अस् इति स्थिते भत्वे कर्तव्ये 'अचः परस्मिन्नि'ति णिलोपस्य स्थानिवत्वात् भत्वाऽभावेन वाहो वकारस्य ऊट् न स्यात्, तस्मात् णिजन्तात् वाहयतेः क्तिवेवेति तत्त्वविदः । अत्र पक्षे स्थानिवत्त्वन्तु न 'क्वौ लुप्तं न स्थानिवत्' इति निषेधात् । अत एव 'प्रष्टौह आगतं प्रष्टवाड् रूपम्' इति भाष्योक्ते 'प्रष्टौहः' इति प्रयोगः सन्नच्छते । (१) भसंज्ञायाम् 'वाह ऊट्' इति सम्प्रसारणम्, सम्प्रसारणञ्चात्र 'य-यासंख्य' सूत्रसहकारेण 'इत्यणः सम्प्रसारणम्' इति ऊकारे 'सम्प्रसारणाच्च' इति पूर्वरूपे 'एत्येधत्पूट्सु' इति वृद्धौ क्तविसर्गौ । (२) लिह्शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् ।

हलन्तपुल्लिङ्गशब्दाः ।

| एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | कर्ता |
|------------|-------------|-------------|---------|
| अनङ्गान् | अनङ्गाहौ | अनङ्गाहः | कर्म |
| अनङ्गाहम् | अनङ्गाहौ | अनङ्गहः | करण |
| अनङ्गहा | अनङ्गह्याम् | अनङ्गिः | सम्प्र० |
| अनङ्गहे | अनङ्गह्याम् | अनङ्ग्यः | अपा० |
| अनुङ्गहः | अनङ्गह्याम् | अनङ्ग्यथः | सम्ब० |
| अनुङ्गहः | अनङ्गहोः | अनङ्गहाम् | अधि० |
| अनङ्गहि | अनङ्गहोः | अनङ्गस्तु | सम्बो० |
| हे अनङ्गन् | हे अनङ्गाहौ | हे अनङ्गाहः | |

(१) अनः=शकटं वहतीत्यर्थे अनसि वहेः क्विप् अनघो ङश्च इति सस्य ङश्च कृते 'वचिस्वपी'ति सम्प्रसारणे पूर्वरूपे च अनङ्गह् शब्दः । तस्मात् सौ 'चतुरनङ्गहोः' इत्यामि यणि 'सावनङ्गहः' इति जुमि हलङ्घादिना सुलोपे संयोगान्तलोपः । अत्र नलोपस्तु न संयोगान्तलोपस्याऽभिद्धत्वात् । एवं नकारस्य दत्वमपि न, जुम्विधानस्य वैयर्थ्यापत्तेः, तथाहि-नुमभावेऽपि हकारस्यैव दत्वेनापि 'अनङ्गाह्'त्यनिष्टप्रयोगसिद्धौ जुम्विधेरनर्थकत्वात् । नच 'चतुरनङ्गहोः' इत्याम् सामान्यविहितः । अपेक्षया 'सावनङ्गहः' इति जुम् विशेषविहितः तथा च तक्रन्यायमूलक 'येननाप्राप्ति'न्यायेन जुमा आमो बाधे 'अनङ्गन्' इति स्यात्, किंच सम्बुद्धौ विशेषविहितत्वात् अम्बुद्धौ इति अमा जुमो बाधे सति ढत्वेन 'हे अनङ्गह्' इति स्यादिति चेच्छृणु ? 'सावनङ्गहः' इत्यत्र 'आच्छीनयोः' इत्यतः आदिति पञ्चम्यन्तमनुवर्तते, अतः अनङ्गहोऽवर्णात् परो जुमित्यर्थेन अवर्णात्परत्वेन विधीयमानं जुमं प्रति आमः उपजीव्यत्वात् उपजीव्योपजीवकयोर्विरोधाऽभावेन बाध्यबाधकभावविरहात् । एवम् 'अम्बुद्धौ' इति विहितोऽम् जुमः उदजीवकत्वेन विरोधाऽभावात्, उपजीव्योपजीवकयोर्बाध्यबाधकभावो न भवति, यथा पितृहृत्पत्नः पुत्रः पितरं न हन्यात्, एवं पिता च पुत्रं न हन्यादिति भावः । (२) सर्वनामस्थानत्वादामि नम् । (३) स्वादिगिति पदात्वात् 'यसुसुमि'ति दत्वम् । (४) दत्वे 'उरिसे'ति चर्तम् । (५) 'अम्बुद्धौ' इति अमि, यणि, जुमि, सुलोपे, संयोगान्तलोपः ।

[१८९] हकारान्त-पुंल्लिङ्गः 'तुरासाह्' शब्दः (इन्द्र)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------------------------|----------------|----------------------------|---------|
| प्र० | { तुराषाट् तुराषाड् | तुरासाहौ | तुरासाहः | कर्ता |
| द्वि० | तुरासाहम् | तुरासाहौ | तुरासाहः | कर्म |
| तृ० | तुरासाहा | तुराषाड्भ्याम् | तुराषाड्भिः | करण |
| च० | तुरासाहे | तुराषाड्भ्याम् | तुराषाड्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | तुरासाहः | तुराषाड्भ्याम् | तुराषाड्भ्यः | अपा० |
| ष० | तुरासाहः | तुरासाहोः | तुरासाहाम् | सम्ब० |
| स० | तुरासाहि | तुरासाहोः | { तुराषाट्सु तुराषाड्सु | अधि० |
| | { हे तुराषाट् हे तुराषाड् | हे तुरासाहौ | हे तुरासाहः | सम्बो |

[१९०] वकारान्तः- 'सुदिव्' शब्द (सुन्दर आकाश से युक्त दिन)

| | | | | |
|-------|---------|--------|--------|-------|
| प्र० | सुधौः | सुदिवौ | सुदिवः | कर्ता |
| द्वि० | सुदिवम् | सुदिवौ | सुदिवः | कर्म |

(१) तुरं सहते इत्यर्थे 'छन्दसि सह' इति ण्विः णकार इत्, इकार उच्चारणार्थः अपृक्तस्य वस्य लोपः उपधावृद्धि 'साह्' इति ततः 'अन्येषामि'ति (इन्द्रसूत्रं क्वचिन्नोपलभ्यते) पूर्वपदस्य दीर्घः । लोके तु सहधातोर्ण्वि उपधावृद्धि 'साहि'ति तस्मात् क्विप् सर्वाऽपहारे णिलोपे 'अन्येषामि'ति पूर्वपदस्य दीर्घः 'नहिवृति' इति सूत्रेण पूर्वपदस्य दीर्घस्तु न सहौ क्विवन्ते परे एव पूर्वपदस्य तेन दीर्घविधानात् । ततः सुलोपे ढत्वे जश्चे 'सहेः साडः सः' इति सस्य सूत्रेण न्यादेशे चर्त्वंम् । (२) अपदान्तत्वान्न षत्वम् । (३) स्वादिण्विति' पदत्वात् ढत्वे पत्वे जश्चे धुट् जश्त्वचर्त्वी । (४) सु=शोभना द्यौर्यस्य स इति विप्रहः । 'दिव औत्' इत्यास्याङ्गत्वात्तदन्तस्याप्यौत्वे यणि क्त्वविसर्गौ, औकारस्य स्यानिवत्वेन हल्त्वात् 'हल्छयादिना सुलोपस्तु न अनल्विधाविति निषेधात् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|------------|--------------|------------|---------|
| तृ० | सुदिवा | सुद्युभ्याम् | सुद्युभिः | करण |
| च० | सुदिवे | सुद्युभ्याम् | सुद्युभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुदिवः | सुद्युभ्याम् | सुद्युभ्यः | अपा० |
| ष० | सुदिवः | सुदिवोः | सुदिवाम् | सम्ब० |
| स० | सुदिवि | सुदिवोः | सुद्युषु | अधि० |
| | हे सुद्यौः | हे सुदिवौ | हे सुदिवः | सम्बो० |

[१११] रेफान्त-पुंल्लिङ्गो नित्यं बहुवचनान्तः 'चतुर' शब्दः (चार)

प्र०-चैत्वारः द्वि०-चतुरः तृ०-चतुर्भिः च०-चतुर्भ्यः
पं०-चतुर्भ्यः ष०-चैतुर्णाम् स०-चतुर्षु सम्बो०हे चत्वारः

[११२] रेफान्त-पुंल्लिङ्गः 'प्रियचतुर' शब्दः

(चार ठो प्रिय है जिसको)

| | | | | |
|----|----------------|-------------------|-----------------|---------|
| १० | प्रियंचत्वाः | प्रियंचत्वारौ | प्रियंचत्वारः | कर्त्ता |
| २० | प्रियंचत्वारम् | प्रियंचत्वारौ | प्रियंचतुरः | कर्म |
| ३० | प्रियंचतुरा | प्रियंचतुर्भ्याम् | प्रियंचतुर्भिः | करण |
| ४० | प्रियंचतुरे | प्रियंचतुर्भ्याम् | प्रियंचतुर्भ्यः | सम्प्र० |

(१) भ्यामादौ हलि 'स्वादिष्वि'ति पदत्वेन 'दिव उत्' इत्युत्वे यण् ।
अजादौ सुदिव्शब्दोऽविकृत एवेति बोध्यम् । (२) 'चतुरनहुहोः' इत्यामि यण् ।
(३) 'पट्चतुर्भ्यश्च' इति नुटि दीर्घे 'अचोरहाभ्यामि'त्यस्य अशिद्धत्वात् पूर्व
'रषाभ्यामि'ति णत्वे ततो द्वित्वम् । पूर्वत्राशिद्धमद्विर्चने' इति निषेधस्तु न द्वित्वे
कर्त्तव्ये अन्यदसिद्धन्नेति तदर्थात् । (४) रेफस्य इणत्वात् 'आदेशः प्रत्ययोः'
इति पठ्ये 'शरोऽची'ति निषेधात् द्वित्वण । (५) प्रियाश्चत्वारो यस्येति बहुमीदौ
विशेष्यनिप्रत्वेन 'प्रियंचतुर' शब्दो एकद्विवचनान्तः । आश्रत्वात् तदन्त-
स्याऽपि 'चतुरनहुहोः' इत्यामि यणि सुलोपे विसर्गः । (६) नुटि चर्त्तनामस्थान-
त्वात्पि यण् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-----------------|------------------|-----------------|-------|
| पं० | प्रियचतुरः | प्रियचतुर्भ्याम् | प्रियचतुर्भ्यः | अपा० |
| ष० | प्रियचतुरः | प्रियचतुरोः | प्रियचतुराम् | सम्ब० |
| स० | प्रियचतुरि | प्रियचतुरोः | प्रियचतुर्षु | अधि० |
| | हे प्रियचत्त्वः | हे प्रियचत्वारौ | हे प्रियचत्वारः | सम्ब० |

[१९३] लकारान्त-पुँल्लिङ्गः 'कमल्' शब्दः

(लक्ष्मी का गुणगान करने वाला)

| | | | | |
|-------|---------|-----------|---------|---------|
| प्र० | कमल् | कमलौ | कमलः | कर्ता |
| द्वि० | कमलम् | कमलौ | कमलः | कर्म |
| तृ० | कमला | कमलभ्याम् | कमलभिः | करण |
| च० | कमले | कमलभ्याम् | कमलभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | कमलः | कमलभ्याम् | कमलभ्यः | अपा० |
| ष० | कमलः | कमलोः | कमलाम् | सम्ब० |
| स० | कमलि | कमलोः | कमल्षु | अधि० |
| | हे कमल् | हे कमलौ | हे कमलः | |

[१९४] मकारान्त-पुँल्लिङ्गः 'प्रशाम्' शब्दः (अत्यन्त शान्त पुरुष)

(१) 'षट्च भ्यश्चे'ति बहुवचननिर्देशात् तदर्थप्राधान्ये एव तस्य प्रवृत्त्या इ गौणत्वान्न नुट् । गौणत्वन्तु-इतरपदार्थनिष्ठविशेष्यतानिरूपितप्रकारताप्रयत्वमिति केचित् । वस्तुतस्तु-'स्वान्तसमुदायपर्याप्तशक्तिनिरूपकार्थनिष्ठविशेष्यतानिरूपितप्रकारतावच्छेदकताप्रयोजकत्वम्' अत एव 'कारीषगन्धीपुत्रः' इत्यत्र सम्प्रसारणसिद्धिः । (२) 'अभ्रसम्बुद्धौ' इत्यमि यणि रुत्वविसर्गौ । (३) कमलं = पद्मम् । कमला = लक्ष्मी, तं तां वा आचष्टे इत्यर्थे 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिच् सुपो लुकि 'णाविष्ठवत्प्रातिपदिकस्ये'ति इष्ठवत्त्वाट्टिलोपे णिजन्तात् कर्तरि विवर्षि णिर्नित् इति णिलोपः । ततः सोर्हल्लुब्धादिलोपः । (४) औजसादिषु नकश्चित् कार्यविशेषः । (५) लकारस्य इण्त्वेन पत्वम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------|---------------|----------------------------|---------|
| प्र० | प्रशान् | प्रशामौ | प्रशामः | कर्ता |
| द्वि० | प्रशामम् | प्रशामौ | प्रशामः | कर्म |
| तृ० | प्रशामा | प्रशान्भ्याम् | प्रशान्भिः | करण |
| च० | प्रशामे | प्रशान्भ्याम् | प्रशान्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रशामः | प्रशान्भ्याम् | प्रशान्भ्यः | अपा० |
| श० | प्रशामः | प्रशामोः | प्रशामाम् | सम्ब० |
| स० | प्रशामि | प्रशामोः | { प्रशान्तसु प्रशान्तसु | अधि० |
| | हे प्रशान् | हे प्रशामौ | हे प्रशामः | सम्बो० |

एवं सलिलमात्रक्षणः—सलिल् सलिलौ सलिलः इत्यादि ।

[१९५] मकारान्त—पुंल्लिङ्गः सर्वनाम 'किम्' शब्दः (कौन)

| | कः | कौ | के | कर्ता |
|-------|------------|----------|--------|---------|
| प्र० | कः | कौ | के | कर्ता |
| द्वि० | कम् | कौ | कान् | कर्म |
| तृ० | केन | काभ्याम् | कैः | करण |
| च० | कस्मै | काभ्याम् | केभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | कस्मात्—द् | काभ्याम् | केभ्यः | अपा० |
| श० | कस्य | कयोः | केषाम् | सम्ब० |

(१) प्रशाम्यतीति 'प्रशान्' । प्रपूर्वात् शम्धातोः क्विपि 'अनुनासिकस्य विषज्जलोरिति दीर्घः । ततः सौ 'मो नो धातोः' इति नत्वे सुलोपः । नलोपस्तु न, नत्वस्याऽधिष्ठत्वात् । अस्य प्रशान् शब्दस्य सत्त्ववाचित्वात् नाप्ययत्वम्, यतः एपरौ असत्त्ववाचिनः एव पाठात् । (२) अजादौ पदत्वाभावान्नत्वन् । (३) भ्यामादौ एलि 'स्वादिपि'ति पदत्वान्नत्वन् । (४) 'नश्चे'ति ध्रुविकल्पः । (५) 'कायतेर्मिरि'ति धिमिप्रत्यये निरयन्नः किम् शब्दः तस्य 'किमः कः' इति कादेशे सर्वशब्दस्य किम् शब्दस्याऽपि साधनकार्त्तव्यम् । 'किमः कः' इत्यनेन अकञ्जविशिष्टस्य 'ककिम्' शब्दस्याऽपि कादेशो भवति, अन्यथा 'कमः कः' इत्येव पठारमे कदातोत्पारणे एवम् एवादिति दि ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|------------------|--------------------------------|--------------------|---------|
| स० | कस्मिन् | कयोः यदादेः सम्बोधनं नास्ति | केषु | अधि० |
| [१९६] मकारान्त-पुंल्लिङ्गः सर्वनाम 'इदम्' शब्दः (यह) | | | | |
| प्र० | अयम् | इमौ | इमे | कर्ता |
| द्वि० | { इमम् (एनम्) | { इमौ (एनौ) | { इमान् (एनान्) | कर्म |
| तृ० | { अनेन (एनेन) | आभ्याम् | एभिः | करण |
| च० | अस्मै | आभ्याम् | एभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अस्मात्-द् | आभ्याम् | एभ्यः | अपा० |
| ष० | अस्य | { अनयोः (एनयोः) | एषाम् | सम्ब० |
| स० | अस्मिन् | { अनयोः (एनयोः) | एषु | अधि० |
| | ० | ० | ० | ० |

(१) प्रचुरप्रयोगाऽदर्शनमेवात्र मूलम् । 'हे स' इति भाष्यप्रयोगस्तु प्रायिको बोध्यः । (२) 'इन्देः किमिर्नलोपश्च' इत्युणादिसूत्रेण किमिप्रत्यये नलोपे च 'इदम्' शब्दः । तस्मात्सौ त्यदाद्यत्वं प्रवाध्य 'इदमो मः' । 'इदोऽय पुंसि' । सुलोपः । (३) त्यदाद्यत्वे पररूपे च 'दश्च' इति मत्वे वृद्धिः । (४) कोष्ठान्तर्गतपाठोऽन्वादेशविषयकः तत्र 'द्वितीयादौस्त्वेनः' इति बोध्यम् । (५) 'अनाप्यकः' इति विशेषः । (६) अत्वे पररूपे 'अनाप्यकः' इति प्राप्तः तं प्रवाध्य 'हलि लोपः' । न च 'अलोन्त्य' परिभाषया इदो दकारस्यैव लोपः स्यादिति वाच्यम्, इदम् शब्दघटक- 'इद्' इत्यस्याऽनर्थकत्वेन 'नानर्थके'ति परिभाषया 'अलोन्त्यस्येत्यस्याऽप्रवृत्तेः । नन्वैवमपि अ x भ्याम् इति स्थिते अङ्गस्य अकारात्मकत्वात् तदन्तत्वाभावेन 'सुपिचे'ति दीर्घो न स्यादिति चेन्न, 'आद्यन्तवदेकस्मिन्नि'त्याद्यन्तवत्त्वेनादोषात् । (७) 'नेदमदसोरकोः' इति भिसः ऐस् न । (८) नित्यत्वात् अनादेशात् प्रागेव स्मैभावे कृते पश्चात् 'हलि लोपः' इत्यनेन अनादेशस्य बाधः इति भावः ।

[१९७] मकारान्त-पुंल्लिङ्गोऽकज्विशिष्टः 'इदकम्' शब्दः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------|------------|----------|---------|
| प्र० | अयंकम् | इमकौ | इमके | कर्त्ता |
| द्वि० | इमकम् | इमकौ | इमकान् | कर्म |
| तृ० | इमकेन | इमकाभ्याम् | इमकैः | करण |
| च० | इमकस्मै | इमकाभ्याम् | इमकेभ्यः | लम्प्र० |
| पं० | इमकस्मात्-द् | इमकाभ्याम् | इमकेभ्यः | अपा० |
| प० | इमकस्य | इमकयोः | इमकेषाम् | सम्ब० |
| स० | इमकस्मिन् | इमकयोः | इमकेषु | अधि० |

[१९८] णकारान्त-पुंल्लिङ्गो विजन्तः 'सुगण्' शब्दः

(अच्छी गणना करने वाला)

| | सुगण् | सुगणौ | सुगणः | कर्त्ता |
|-------|--------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | सुगणम् | सुगणौ | सुगणः | कर्म० |
| द्वि० | सुगणम् | सुगणौ | सुगणः | कर्म० |
| तृ० | सुगणा | सुगण्भ्याम् | सुगण्भिः | करण |
| च० | सुगणे | सुगण्भ्याम् | सुगण्भ्यः | लम्प्र० |
| पं० | सुगणः | सुगण्भ्याम् | सुगण्भ्यः | अपा० |
| प० | सुगणः | सुगणोः | सुगणाम् | सम्ब० |

(१) इदम् शब्दात् 'अव्ययसर्वनाम्ने'ति अकचि तन्मध्यपतितन्यायेन 'इद-
मो मः' इत्यादौ इदम्प्रहणेन इदकम्शब्दस्यापि प्रहणात् मत्वादिकार्यं पूर्ववत् ।
'अनाप्यकः' हलि लोपः 'नेदमदत्तोरकोः' इति सृष्टेः अकार इति निर्देशात्
कारयोमे (अचि) एतानि न प्रवर्तन्ते इति ज्ञेयम् । (२) 'गण संख्याने'
इति सुरादिरदन्तः तस्मात् सुपूर्वात् जिचि अरलोपस्य इत्यभिव्यक्त्वात् उपधापृथक्
भावः । ततः णान्तात् विचि सर्वापहारे 'अन्वेभ्योऽपि इदमरे' इति मिलोपे सुदु-
त्पत्तिः तस्य हल् यादिना लोपः । सुस्विभक्तेः प्राक् न इदित् कार्द्वितोषः
इति बोध्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|---|----------|-------------|---------------------------------|----------|
| स० | सुगणि | सुगणोः | सुगणस्सु सुगणस्सु सुगण्सु | अधि० |
| | हे सुगण् | हे सुगणौ | | हे सुगणः |
| किपि तु—सुगणं सुगणौ सुगणः इत्यादि । | | | | |
| [१९९] नकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'राजन्' शब्दः (राजा) | | | | |
| प्र० | राजा | राजानौ | राजानः | कर्त्ता |
| द्वि० | राजानम् | राजानौ | राज्ञः | कर्म |
| तृ० | राज्ञा | राज्ञभ्याम् | राज्ञभिः | करण |
| च० | राज्ञे | राजभ्याम् | राज्ञभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | राज्ञः | राजभ्याम् | राजभ्यः | अपा० |
| ष० | राज्ञः | राज्ञोः | राज्ञाम् | सम्ब० |

(१) 'ङ्णोः कुकटुकशरि' इति ङुकि 'चयो द्वितीया' इति ङस्य ठः ।
 (२) 'अनुनासिकस्य किञ्जलोः' इति दीर्घः स्यादिति भावः । (३) 'राज् दीप्तौ' अस्मात् 'कनिन् यु-वृषि-तक्षि-राजि-धन्वि-द्यु-प्रति-दिवः' इत्युणा-
 दिसूत्रेण कनिन् । ततः राजन् शब्दात् सौ उपधादीर्घे सुलोपे नलोपः । (४)
 सर्वनामस्थानत्वाद्दीर्घः । (५) शसादावचि भत्वात् 'अल्लोपोनः' इत्यल्लोपे
 नकारस्य इच्छुत्वे ज्योर्ज्ञः । अल्लोपस्य स्थानिवत्त्वात् इच्छुत्वं न स्यादिति न शङ्क्यम्,
 'पूर्वत्रासिद्धे न स्थानिवत्' इति निषेधात् । नाऽप्यन्तरङ्गपरिभाषायाः प्रवृत्तिः,
 चधोद्देशपक्षे 'बाह ऊठ' इति ज्ञापितायाः तस्याः षष्ठाध्यायीस्थत्वेन परिभाषादृष्ट्या
 त्रैपादिकस्य इच्छुत्वस्यैवाऽसिद्धत्वात् । एकतरपक्षेण लक्ष्यसिद्धे पक्षान्तरेण दोषदान-
 स्याऽनुचितत्वादिति कार्यकालपक्षाश्रयणेनात्र दोषदानमुचितमिति दिक् । (६-८)
 'स्वादिध्विति पदत्वात् नलोपे सति भ्यामि दीर्घः, भिसः ऐस्, भ्यसि एत्वन्तु न,
 नलोपस्याऽसिद्धत्वात् । नचैवं 'राजादिव' इत्यादावपि नलोपस्याऽसिद्धत्वात् सर्वण-
 दीर्घो न स्यादिति वाच्यम्, 'न लोपः सुप्स्वर' इति नियमसूत्रस्य जागरूकत्वात् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----|-----------------------------|----------------------|--------------------|----------------|
| स० | राञ्चि राजनि हे राजन् | राञ्चोः हे राजानौ | राजसु हे राजानः | अधि० सम्बो० |

[२००] नकारान्त-पुल्लङ्गः 'प्रतिदिवन्' शब्दः (संपूर्ण प्रकाशवान्)

| | | | | |
|-------|------------------------------|--------------------------------|------------------------------|----------------|
| प्र० | प्रतिदिवा | प्रतिदिवानौ | प्रतिदिवानः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रतिदिवानम् | प्रतिदिवानौ | प्रतिदिवानः | कर्म |
| तृ० | प्रतिदीव्ना | प्रतिदिवभ्याम् | प्रतिदिवभिः | करण |
| च० | प्रतिदीव्ने | प्रतिदिवभ्याम् | प्रतिदिवभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रतिदीव्निः | प्रतिदिवभ्याम् | प्रतिदिवभ्यः | अपा० |
| ष० | प्रतिदीव्निः | प्रतिदीव्नीः | प्रतिदीव्नीनाम् | सम्ब० |
| स० | प्रतिदीव्नि हे प्रतिदिवन् | प्रतिदीव्नीः हे प्रतिदिवानौ | प्रतिदिवसु हे प्रतिदिवानः | अधि० सम्बो० |

एवं महिमन्, अणिमन्, गरिमन्, लघिमन्, इत्यादयोऽपि ।

[२०१] नकारान्त-पुल्लङ्गो 'यज्वन्' शब्दः (यज्ञ करने वाला)

| | | | | |
|-------|----------|------------|---------|---------|
| प्र० | यज्वा | यज्वानौ | यज्वानः | कर्त्ता |
| द्वि० | यज्वानम् | यज्वानौ | यज्वानः | कर्म |
| तृ० | यज्वना | यज्वभ्याम् | यज्वभिः | करण |

(१) 'विभाषा ङिड्योः' । (२) 'न ङिसम्बुद्धयोः' । (३) प्रति दीव्यतीति प्रतिदिवा । उक्थोणादिसूत्रेण कनिनि, उपधादीर्घसुलोपनलोपाः । (४) शसादावचि भत्वादल्लोपे 'हलित्चे'ति दीर्घः, दीर्घे कर्तव्ये अल्लोपस्य स्थानिवत्त्वन्तु न 'न पदान्ते'ति दीर्घविधौ तन्निषेधात् । बहिरङ्गपरिभाषा तु षष्ठाध्यायीस्थत्वेन भ्रष्टाऽपि न प्रवर्तते । (५) भ्यामादौ हलि राजवत् बोध्यम् । (६) 'सुयजो-र्निप्' इति यज्धातोर्ध्वनिप् । क्तिवाभावात् सम्प्रसारणं न, सुटि भ्यामादौ हलि राजवत् । (७) शसादावचि भत्वादल्लोपे प्राप्ते 'न संयोगाद्वमन्तात्' इति निषेधः । शेषकार्यं राजन्शब्दवत् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----|------------|------------|-----------------------------------|-------|
| स० | सुगणि | सुगणोः | { सुगणस्सु सुगणस्सु सुगण्सु | अधि० |
| | द्वे सुगण् | द्वे सुगणौ | द्वे सुगणः | सम्ब० |

किपि तु—सुगोण् सुगणौ सुगणः इत्यादि ।

[१९९] नकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'राजन्' शब्दः (राजा)

| | | | | |
|-------|---------|-------------|-----------|---------|
| अ० | राजा | राजानौ | राजानः | कर्त्ता |
| द्वि० | राजानम् | राजानौ | राज्ञः | कर्म |
| तृ० | राज्ञा | राज्ञभ्याम् | राज्ञभिः | करण |
| च० | राज्ञे | राज्ञभ्याम् | राज्ञभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | राज्ञः | राज्ञभ्याम् | राज्ञभ्यः | अपा० |
| ष० | राज्ञः | राज्ञोः | राज्ञाम् | सम्ब० |

(१) 'ङ्णोः कुकटुकशरि' इति टुकि 'चयो द्वितीया' इति टस्य ठः ।
 (२) 'अनुनासिकस्य किञ्जलोः' इति दीर्घः स्यादिति भावः । (३) 'राज् दीप्तौ' अस्मात् 'कनिन् यु-वृषि-तक्षि-राजि-धन्वि-द्यु-प्रति-दिवः' इत्युणा-
 दिसूत्रेण कनिन् । ततः राजन् शब्दात् सौ उपधादीर्घे सुलोपे नलोपः । (४)
 सर्वनामस्थानत्वाद्दीर्घः । (५) शासादावचि भत्वात् 'अल्लोपोनः' इत्यल्लोपे
 नकारस्य श्चुत्वे ज्योर्ज्ञः । अल्लोपस्य स्थानिवत्त्वात् श्चुत्वं न स्यादिति न शङ्क्यम्,
 'पूर्वत्रासिद्धे न स्थानिवत्' इति निषेधात् । नाऽप्यन्तरङ्गपरिभाषायाः प्रवृत्तिः,
 चथोद्देशपक्षे 'बाह ऊठ' इति ज्ञापितायाः तस्याः षष्ठाध्यायीस्थत्वेन परिभाषादृष्ट्या
 त्रैपादिकस्य श्चुत्वस्यैवाऽसिद्धत्वात् । एकतरपक्षेण लक्ष्यसिद्धे पक्षान्तरेण दोषदान-
 स्याऽनुचितत्वादिति कार्यकालपक्षाश्रयणेनात्र दोषदानमुचितमिति दिक् । (६-८)
 'स्वादिध्विति पदत्वात् नलोपे सति भ्यामि दीर्घः, भिसः ऐस्, भ्यसि एवन्तु न,
 नलोपस्याऽसिद्धत्वात् । नचैवं 'राजादव' इत्यादावपि नलोपस्याऽसिद्धत्वात् सर्वण-
 दीर्घो न स्मादिति वाच्यम्, 'न लोपः सुप्स्वर' इति नियमसूत्रस्य जागरूकत्वात् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--|----------------|----------------|---------|
| स० | { राञ्चि राजनि | राञ्चोः | राजसु | अधि० |
| | हे राजन् | हे राजानौ | हे राजानः | सम्बो० |
| [२००] | नकारान्त-पुंल्लिङ्गः 'प्रतिदिवन्' शब्दः (संपूर्ण प्रकाशवान्) | | | |
| प्र० | प्रतिदिवा | प्रतिदिवानौ | प्रतिदिवानः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रतिदिवानम् | प्रतिदिवानौ | प्रतिदिवानः | कर्म |
| तृ० | प्रतिदीव्ना | प्रतिदिवभ्याम् | प्रतिदिवभिः | करण |
| च० | प्रतिदीव्ने | प्रतिदिवभ्याम् | प्रतिदिवभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रतिदीव्निः | प्रतिदिवभ्याम् | प्रतिदिवभ्यः | अपा० |
| ष० | प्रतिदीव्निः | प्रतिदीव्नीः | प्रतिदीव्नीम् | सम्ब० |
| स० | प्रतिदीव्नि | प्रतिदीव्नीः | प्रतिदिवसु | अधि० |
| | हे प्रतिदिवन् | हे प्रतिदिवानौ | हे प्रतिदिवानः | सम्बो० |

एवं महिमन्, अणिमन्, गरिमन्, लघिमन्, इत्यादयोऽपि ।

| | | | | |
|---------|--|------------|---------|---------|
| [२०१] | नकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'यज्वन्' शब्दः (यज्ञ करने वाला) | | | |
| प्र० | यज्वा | यज्वानौ | यज्वानः | कर्त्ता |
| द्वि० | यज्वानम् | यज्वानौ | यज्वानः | कर्म |
| तृ० | यज्वना | यज्वभ्याम् | यज्वभिः | करण |

(१) 'विभाषा छिद्योः' । (२) 'न छिसम्बुद्धयोः' । (३) प्रति दीव्यतीति प्रतिदिवा । उक्तोणादिसूत्रेण कनिनि, उपधादीर्घसुलोपनलोपाः । (४) शसादावचि भत्वादल्लोपे 'हलिचे'ति दीर्घः, दीर्घे कर्तव्ये अल्लोपस्य स्थानिवत्त्वन्तु न 'न पदान्ते'ति दीर्घविधौ तन्निषेधात् । बहिरङ्गपरिभाषा तु षष्ठाध्यायीस्थत्वेन अत्राऽपि न प्रवर्तते । (५) भ्यामादौ हलि राजवत् वोभ्यम् । (६) 'सुयज्ञो-ह्निप्' इति यज्धातोर्ह्वनिप् । कित्वाभावात् सम्प्रसारणं न, सुटि भ्यामादौ हलि च राजवत् । (७) शसादावचि भत्वादल्लोपे प्राप्ते 'न संयोगाद्गमन्तात्' इति निषेधः । शेषकार्यं राजन्शब्दवत् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-----------|------------|------------|---------|
| अ० | यज्वने | यज्वभ्याम् | यज्वभ्यः | सम्प्र० |
| इं० | यज्वनः | यज्वभ्याम् | यज्वभ्यः | अपा० |
| उ० | यज्वनः | यज्वनोः | यज्वनाम् | सम्ब० |
| लृ० | यज्वनि | यज्वनोः | यज्वसु | अधि० |
| | हे यज्वन् | हे यज्वानौ | हे यज्वानः | |

[२०२] नकारान्त-पुंलिङ्गो 'ब्रह्मन्' शब्दः (ब्रह्मा)

| | | | | |
|-------|-------------|--------------|--------------|---------|
| प्र० | ब्रह्मा | ब्रह्माणौ | ब्रह्माणः | कर्ता |
| द्वि० | ब्रह्माणम् | ब्रह्माणौ | ब्रह्मणः | कर्म |
| तृ० | ब्रह्मणा | ब्रह्मभ्याम् | ब्रह्मभिः | करण |
| च० | ब्रह्मणे | ब्रह्मभ्याम् | ब्रह्मभ्यः | सम्प्र० |
| इं० | ब्रह्मणः | ब्रह्मभ्याम् | ब्रह्मभ्यः | अपा० |
| उ० | ब्रह्मणः | ब्रह्मणोः | ब्रह्मणाम् | सम्ब० |
| लृ० | ब्रह्मणि | ब्रह्मणोः | ब्रह्मसु | अधि० |
| | हे ब्रह्मन् | हे ब्रह्माणौ | हे ब्रह्माणः | सम्बो० |

[२०३] नकारान्त-पुंलिङ्ग 'आत्मन्' शब्दः (आत्मा)

| | | | | |
|-------|----------|------------|----------|---------|
| प्र० | आत्मा | आत्मानौ | आत्मानः | कर्ता |
| द्वि० | आत्मानम् | आत्मानौ | आत्मनः | कर्म |
| तृ० | आत्मना | आत्मभ्याम् | आत्मभिः | करण |
| च० | आत्मने | आत्मभ्याम् | आत्मभ्यः | सम्प्र० |

(१) 'वृहि वृद्धौ' अस्मात् 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इत्युणादिसूत्रेण मनिनि 'वृहेर्नोच्च' इति इदित्वान्नुमा निष्पन्नस्य नकारस्य अकारे ऋकारस्य यणादेशे-
 ब्रह्मन्शब्दः "ब्रह्म तत्त्वं तपो देवो ब्रह्मा विप्रः प्रजापतिः" इत्यमरः । (२) शष्पा
 दावचि 'न संयोगादि'ति अल्लोपनिषेधः । शेषकार्यं राजन् शब्दवत् ज्ञेयम् ।
 (३) लोके प्रचुरप्रयोगदर्शनादत्र लिखितम्, 'ब्रह्मन्' शब्दवत् कार्यं बोध्यम्,
 अत्वाऽभावश्चात्र विशेषः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-----------|------------|------------|--------|
| पं० | आत्मनः | आत्मभ्याम् | आत्मभ्यः | अपा० |
| ष० | आत्मनः | आत्मनोः | आत्मनाम् | सम्ब० |
| स० | आत्मनि | आत्मनोः | आत्मसु | अधि० |
| | हे आत्मन् | हे आत्मानौ | हे आत्मानः | सम्बो० |

एवं कृष्णवर्त्मन्-अनर्वन्-इत्यादयो मकारान्त-वकारान्त-
संयोगादयोऽश्नन्ताः ।

[२०४] नकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'वृत्रहन्' शब्दः (इन्द्र)

| | | | | |
|-------|--------------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | वृत्रहा | वृत्रहणौ | वृत्रहणः | कर्ता |
| द्वि० | वृत्रहणम् | वृत्रहणौ | वृत्रघ्नः | कर्म |
| तृ० | वृत्रघ्ना | वृत्रहभ्याम् | वृत्रहभिः | करण |
| च० | वृत्रघ्ने | वृत्रहभ्याम् | वृत्रहभ्यः | सम्प्र० |
| प० | वृत्रघ्नः | वृत्रहभ्याम् | वृत्रहभ्यः | अपा० |
| ष० | वृत्रघ्नः | वृत्रघ्नोः | वृत्रघ्नाम् | सम्ब० |
| स० | वृत्रघ्नि वृत्रहनि | वृत्रघ्नोः | वृत्रहसु | अधि० |
| | हे वृत्रहन् | हे वृत्रहणौ | हे वृत्रहणः | सम्बो० |

[२०५] नकारान्त-पुंल्लिङ्गः 'शार्ङ्गिन्' शब्दः (भगवान् विष्णु)

(१) वृत्रं हतवान् नित्यर्थे 'ब्रह्मभ्रूणेति हन्धातोः क्विप् । उपपदसमासः । ततः
सौ 'इन्द्रहन्नि'त्यनेन शावेव दीर्घः इति नियमात् उपधादीर्घेऽप्राप्ते 'सौ च' इति
दीर्घं सुलोपनलोपो । (२) समानपदत्वाभावात् 'एकाजि'ति णत्वम् । उपधा
दीर्घं स्तु न, शावेवेति नियमात् । (३) शशादावचि भसंज्ञायामल्लोपे 'हो हन्ते-
रिति कृत्वे च कृते 'अनन्तरस्येति न्यायात् 'हन्तेः' इति प्राप्तस्यैव णत्वस्य 'अ-
पूर्वस्येति निषेधात् सूत्राऽन्तरेणात्र णत्वं दुर्वारमिति न शक्यम्, 'अपूर्वस्येति
पृथग् योगविभागसामर्थ्याद्दुकन्यायं बाधित्वा 'प्रातिपदिकान्ते'ति, 'एकाजुत्तरे'ति,
'कृमिति चेति च प्राप्तस्य णत्वमात्रस्य तेन निषेधात् । (४) 'विभाषा विश्वोः ।
(५) असम्बुद्धावित्युक्तत्वेन 'सौ च' इति न दीर्घः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | शाङ्गी | शाङ्गिणौ | शाङ्गिणः | कर्त्ता |
| द्वि० | शाङ्गिणम् | शाङ्गिणौ | शाङ्गिणः | कर्म |
| तृ० | शाङ्गिणा | शाङ्गिभ्याम् | शाङ्गिभिः | करण |
| च० | शाङ्गिणे | शाङ्गिभ्याम् | शाङ्गिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | शाङ्गिणः | शाङ्गिभ्याम् | शाङ्गिभ्यः | अपा० |
| ष० | शाङ्गिणः | शाङ्गिणोः | शाङ्गिणाम् | सम्ब० |
| स० | शाङ्गिणि | शाङ्गिणोः | शाङ्गिषु | अधि० |
| | हे शाङ्गिन् | हे शाङ्गिणौ | हे शाङ्गिणः | सम्बो० |

[२०६] नकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'यशस्विन्' शब्दः (यशस्वी)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | यशस्वी | यशस्विनौ | यशस्विनः | कर्त्ता |
| द्वि० | यशस्विनम् | यशस्विनौ | यशस्विनः | कर्म |
| तृ० | यशस्विना | यशस्विभ्याम् | यशस्विभिः | करण |
| च० | यशस्विने | यशस्विभ्याम् | यशस्विभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | यशस्विनः | यशस्विभ्याम् | यशस्विभ्यः | अपा० |
| ष० | यशस्विनः | यशस्विनोः | यशस्विनाम् | सम्ब० |
| स० | यशस्विनि | यशस्विनोः | यशस्विषु | अधि० |
| | हे यशस्विन् | हे यशस्विनौ | हे यशस्विनः | सम्बो० |

(१) शाङ्गिम्=धनुः, तदस्याऽस्तीति 'शाङ्गी' 'अत इनि ठनौ' इति इनिः । ततः सौ 'सौ च' इति दीर्घे सुलोप न लोपो । (२) इनन्तत्वेन 'इन्हृन्नि'ति नियमात् दीर्घाऽभावे णत्वम् । (३) अन्नन्तत्वाऽभावादल्लोपो न । (४) यज्ञोऽस्यातीति यशस्वी । 'अयस्मयामेधासृजो विनिः' इति विनिः । 'तसौ मत्वर्थे' इति भत्वाच्च ऋत्वम् । शाङ्गिन् शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । नच अर्थवदिति परिभाषया 'इन् हन्'इति सूत्रेऽर्थवदेव इनो ग्रहणात् 'शाङ्गिन्' इत्यत्रैव इनोऽर्थवत्वात् दीर्घः, यशस्वीत्यत्र तु अनर्थकत्वाच्च स्यादिति वाच्यम्, 'अन्-इन्-अस्-मन्-ग्रहणानि (शाङ्गाणि) अर्थवता च अनर्थकेन च तदन्तविधिं प्रयोजयन्ति' इति 'येन-विधि'रिति सूत्रस्य भाष्योक्तवचनेनादोषात् ।

[२०७] नकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'गुणिन्' शब्दः (गुणवान्)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------|------------|-----------|---------|
| प्र० | गुणी | गुणिनौ | गुणिनः | कर्ता |
| द्वि० | गुणिनम् | गुणिनौ | गुणिनः | कर्म |
| तृ० | गुणिना | गुणिभ्याम् | गुणिभिः | करण |
| च० | गुणिने | गुणिभ्याम् | गुणिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | गुणिनः | गुणिभ्याम् | गुणिभ्यः | अपा० |
| ष० | गुणिनः | गुणिनोः | गुणिनाम् | सम्ब० |
| स० | गुणिनि | गुणिनोः | गुणिषु | अधि० |
| | हे गुणिन् | हे गुणिनौ | हे गुणिनः | सम्बो० |

एवं कारिन्-बलिन्-चक्रिन्-इत्यादयः इधन्ताः ।

[२०८] नकारान्त-पुंल्लिङ्गः 'अर्यमन्' शब्दः (सूर्य)

| | अर्यमा | अर्यमणौ | अर्यमणः | कर्ता |
|-------|----------------------|--------------|------------|---------|
| प्र० | अर्यमा | अर्यमणौ | अर्यमणः | कर्ता |
| द्वि० | अर्यमणम् | अर्यमणौ | अर्यमणः | कर्म |
| तृ० | अर्यमणा | अर्यमणभ्याम् | अर्यमणिः | करण |
| च० | अर्यमणे | अर्यमणभ्याम् | अर्यमण्यः | सम्प्र० |
| पं० | अर्यमणः | अर्यमणभ्याम् | अर्यमण्यः | अपा० |
| ष० | अर्यमणः | अर्यमणोः | अर्यमणाम् | सम्ब० |
| स० | { अर्यमणि अर्यमणि | अर्यमणोः | अर्यमसु | अधि० |
| | हे अर्यमन् | हे अर्यमणौ | हे अर्यमणः | सम्बो० |

(१) गुणोऽस्यास्तीति गुणी । शार्ङ्गिन् शब्दवत् कार्यं बोध्यम् । (२) 'श्वन्-उक्षन्-पूषन्-प्लीहन्-क्लेदन्-स्नेहन्-मूर्धन्-मज्जन्-अर्यमन्-विश्वप्सन्-परि-ज्मन्-मातरिश्वन्-मघवन्' इत्युणादिसूत्रेण कनिप्रत्ययान्तः अर्यमन् शब्दः तस्य साधनकार्यं 'वृत्रहन्' शब्दवत् बोध्यम् । तत्र कुत्वमात्रं विशेषः इति न विस्म-र्तव्यम् ।

[२०९] नकारान्तः-पुंल्लिङ्गः 'पूषन्' शब्दः (सूर्य)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------------|-----------|----------|---------|
| प्र० | पूषा | पूषणौ | पूषणः | कर्ता |
| द्वि० | पूषणम् | पूषणौ | पूषणः | कर्म |
| तृ० | पूषणा | पूषभ्याम् | पूषभिः | करण |
| च० | पूषणे | पूषभ्याम् | पूषभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | पूषणः | पूषभ्याम् | पूषभ्यः | अपा० |
| ष० | पूषणः | पूषणोः | पूषणाम् | सम्ब० |
| स० | { पूषिण पूषणि | पूषणोः | पूषसु | अधि० |
| | हे पूषन् | हे पूषणौ | हे पूषणः | सम्बो |

एवं भ्रूणहन् (गर्भको नष्ट करने वाला) इत्यादयः ।

(२१०) नकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'मघवन्' शब्दः (इन्द्र)

| | | | | |
|-------|----------|---------|---------|-------|
| प्र० | मघवान् | मघवन्तौ | मघवन्तः | कर्ता |
| द्वि० | मघवन्तम् | मघवन्तौ | मघवतः | कर्म |

(१) वृत्रहन् शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (२) मघ्यते पूज्यते इति मघवान् । 'श्वन्नुक्षन्नि'त्यादिसूत्रेण निपातनात् मघधातोः कनिः, अघुगागमः, हस्य घश्च भवति । ततः सौ 'मघवा बहुलम्' इति तृत्वे ऋकारस्य इत्संज्ञायां लोपे च 'उगिदचामि'ति जुमि सुलोपे संयोगान्तलोपे च उपधादीर्घः । नचेद् दीर्घं कर्तव्ये संयोगान्तलोपस्याऽसिद्धत्वं कुतो नेति चेत्सत्यम्, 'मघा बहुलमि'ति सूत्रस्थ बहुलप्रहणेन दीर्घं कर्तव्ये संयोगान्तलोपस्याऽसिद्धत्वाऽभावकल्पनेना-दोषात् । अयम्भावः-लोके वेदे च 'श्वन्नुक्षन्नि'त्युणादिसूत्रेण निपा-तनात् "मघवन्" शब्दात्, तथा च मघः=घनम्, अस्यास्तौत्यर्थे घनप-र्यायात् मघशब्दात् मतुपि 'माडुपधायाश्चे'ति वत्वे "मघवत्" शब्दाच्च 'मघ-वा' 'मघवान्' इत्युभयरूपं 'साध्य' 'मघवा बहुलमि'ति सूत्रं प्रत्याख्यातं भाष्ये । तदसंगतिः स्यात्, सूत्रसत्तायां संयोगान्तलोपस्याऽसिद्धत्वे 'मघवन्' 'मघवा'

एकवचन द्विवचन बहुवचन

| | | | | |
|-----|----------|-------------|------------|---------|
| तृ० | मधवता | मधवद्भ्याम् | मधवद्भिः | करण |
| च० | मधवते | मधवद्भ्याम् | मधवद्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | मधवतः | मधवद्भ्याम् | मधवद्भ्यः | अपा० |
| ष० | मधवतः | मधवतोः | मधवताम् | सम्ब० |
| स० | मधवति | मधवतोः | मधवतसु | अधि० |
| | हे मधवन् | हे मधवन्तौ | हे मधवन्तः | सम्बो० |

[२११] नकारान्तः तृत्वाऽभावे स एव 'मधवन्' शब्दः ।

| | | | | |
|-------|----------|-----------|-----------|---------|
| प्र० | मधवा | मधवानौ | मधवानः | कर्ता |
| द्वि० | मधवानम् | मधवानौ | मधवोः | कर्म |
| तृ० | मधोना | मधवभ्याम् | मधवभिः | करणं |
| च० | मधोने | मधवभ्याम् | मधवभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | मधोनः | मधवभ्याम् | मधवभ्यः | अपा० |
| ष० | मधोनः | मधोनोः | मधोनाम् | सम्ब० |
| स० | मधोनि | मधोनोः | मधवसु | अधि० |
| | हे मधवन् | हे मधवानौ | हे मधवानः | सम्बो० |

[२१२] नकारान्त-पुंलिङ्गः 'श्वन्' शब्दः (कुत्ता)

| | | | | |
|-------|---------|--------|--------|-------|
| प्र० | श्ववा | श्वानौ | श्वानः | कर्ता |
| द्वि० | श्वानम् | श्वानौ | श्वानः | कर्म |

इत्यस्यैव सिद्धिः स्यान्न तु 'मधवान्' इत्यस्येति तस्मादारम्भप्रत्याख्यानयोः फलै-
क्याय बहुलप्रहणमुक्तार्थे ज्ञापकमिति तत्त्वविदः । अत एव "हविर्यक्षिति निःशङ्को
मखेषु मधवानसौ" इति भट्टिवाक्ये 'मधवान्' इत्युक्तिः संगच्छते । (१) तृत्वा-
ऽभावे सुटि राजवत् । (२) शसादावचि तु भत्वे 'स्वयुवमधोनाम्' इति सम्प्रसारणे
पूर्वरूपे गुणः । (३) भ्यामादौ हलि 'स्वादिष्विति पदत्वान्नलोपः । (४) 'श्व-
न्मुक्षन्ति'द्युणादिसूत्रेण कनि-प्रत्ययान्तः । सुटि राजवत् । (५) शसादावचि
भत्वे 'श्वयुवे'ति सम्प्रसारणे पूर्वरूपे रुत्रविसर्गौ ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|------|----------|-----------|-----------|---------|
| तृ० | शुना | श्वभ्याम् | श्वभिः | करण |
| च० | शुने | श्वभ्याम् | श्वभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | शुनः | श्वभ्याम् | श्वभ्यः | अपा० |
| ष० | शुनः | शुनोः | शुनाम् | सम्ब० |
| स्र० | शुनि | शुनोः | श्वसु | अधि० |
| | हे श्वन् | हे श्वानौ | हे श्वानः | सम्बो० |

[२१३] नकारान्त-पुंलिङ्गो 'युवन्' शब्दः (युवा)

| | | | | |
|-------|----------|-----------|-----------|---------|
| प्र० | युवा | युवानौ | युवानः | कर्त्ता |
| द्वि० | युवानम् | युवानौ | यूनः | कर्म |
| तृ० | यूना | युवभ्याम् | युवभिः | करण० |
| च० | यूने | युवभ्याम् | युवभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | यूनः | युवभ्याम् | युवभ्यः | अपा० |
| ष० | यूनः | यूनोः | यूनाम् | सम्ब० |
| स्र० | यूनि | यूनोः | युवसु | अधि० |
| | हे युवन् | हे युवानौ | हे युवानः | सम्बो० |

[२१४] नकारान्त-पुंलिङ्गः 'अर्वन्' शब्दः (घोड़ा)

| | | | | |
|------|-------|----------|----------|---------|
| प्र० | अर्वा | अर्वन्तौ | अर्वन्तः | कर्त्ता |
|------|-------|----------|----------|---------|

(१) भ्यामादौ हलि पत्वान्नलोपः । (२) यौतीति 'युवा' । युधातोः 'कनिन्नयुध-
षितक्षिराजिधन्विद्युप्रतिदिवः' इत्युणादिसूत्रेण कनिनि उवडादेशः । युवन् शब्दोऽपि
सुटि राजवत् । (३) शसादावचि 'श्वयुवमघोनामि'ति वकारस्य सम्प्रसारणे पूर्वरूपे
सवर्णदीर्घे क्तविसर्गौ । एवं सिद्धे सति यकारस्याऽपि सम्प्रसारणन्तु न 'अचः पर-
स्मिन्नि'ति स्थानिवत्वात् सम्प्रसारणपरत्वेन 'न सम्प्रसारणे' इति निषेधात् । यत्तु
यकारस्य सम्प्रसारणे कृते वकारस्य सम्प्रसारणं कृतोनेत्युक्तं तन्न उक्तसूत्रस्य वैय-
र्थ्यादिति दिक् । (४) ऋधातोः 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति वनिपि गुणे रपरत्वे
'अर्वन्' शब्दः । ततः सौ राजवत् । (५) 'अर्वणस्त्रसावनजः' इति नकारस्य
आदेशे ऋकारस्येत्संज्ञायां लोपे च लुमि अनुस्वारपरसवर्णौ ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------|--------------|-------------|---------|
| द्वि० | अर्वन्तम् | अर्वन्तौ | अर्वतः | कर्म |
| तृ० | अर्वता | अर्वद्भ्याम् | अर्वद्भिः | करण |
| च० | अर्वते | अर्वद्भ्याम् | अर्वद्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अर्वतः | अर्वद्भ्याम् | अर्वद्भ्यः | अपा० |
| ष० | अर्वतः | अर्वतोः | अर्वताम् | सम्ब० |
| स० | अर्वति | अर्वतोः | अर्वत्सु | अधि० |
| | हे अर्वन् | हे अर्वन्तौ | हे अर्वन्तः | सम्बो० |

[२१५] नकारान्त-पुंल्लिङ्गः 'पथिन्' शब्दः (रास्ता)

| | | | | |
|-------|-----------|------------|------------|---------|
| प्र० | पन्थाः | पन्थानौ | पन्थानः | कर्त्ता |
| द्वि० | पन्थानम् | पन्थानौ | पन्थः | कर्म |
| तृ० | पथा | पथिभ्याम् | पथिभिः | करण |
| च० | पथे | पथिभ्याम् | पथिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | पथः | पथिभ्याम् | पथिभ्यः | अपा० |
| ष० | पथः | पथोः | पथाम् | सम्ब० |
| स० | पथि | पथोः | पथिषु | अधि० |
| | हे पन्थाः | हे पन्थानौ | हे पन्थानः | सम्बो० |

[२१६] नकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'मथिन्' शब्दः

(दूध, दही आदि मथन करने वाला दण्ड)

(१) शसादावचि असर्वनामस्थानत्वान्न जुम् । (२) 'स्वादिष्विति पद-
त्वात् भ्यामादौ हलि जश्त्वम्, सुपि तु खर्परत्वात् चर्त्त्वमपीति विशेषः ।
(३) 'पत्लृ गतौ' अस्मात् 'पतस्थ च' इत्युणादिसुत्रेण इनिस्थकारश्चान्तादेशे
'पथिन्' शब्दः । ततः सौपरे 'पथिमभ्यमुक्षामात्' इति नकारस्याऽऽत्वे 'इतीऽत्सर्व-
नामस्थाने' इतीकारस्याऽकारे 'धोन्धः' इति न्धादेशे चवर्णदीर्घे चत्वविसर्गौ । (४)
अत्रादौसुटि इकारस्याऽकारादेशे थकारस्य न्धादेशे च उपधादीर्घः । (५) शसादा-
वचि भत्वे 'भस्य टेर्लोपः' इति इनो लोपः (६) भ्यामादिहलादौ . . .

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------|------------|------------|---------|
| प्र० | मन्थाः | मन्थानौ | मन्थानः | कर्त्ता |
| द्वि० | मन्थानम् | मन्थानौ | मथः | कर्म |
| तृ० | मथा | मथिभ्याम् | मथिभिः | करण |
| च० | मथे | मथिभ्याम् | मथिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | मथः | मथिभ्याम् | मथिभ्यः | अपा० |
| ष० | मथः | मथोः | मथाम् | सम्ब० |
| स० | मथि | मथोः | मथिषु | अधि० |
| | हे मन्थाः | हे मन्थानौ | हे मन्थानः | सम्बो० |

[२१७] नकारान्त-पुंल्लिङ्गः 'ऋभुक्षिन्' शब्दः (इन्द्र)

| | | | | |
|-------|-------------|---------------|--------------|---------|
| प्र० | ऋभुक्षाः | ऋभुक्षाणौ | ऋभुक्षाणः | कर्त्ता |
| द्वि० | ऋभुक्षाणम् | ऋभुक्षाणौ | ऋभुक्षः | कर्म |
| तृ० | ऋभुक्षा | ऋभुक्षिभ्याम् | ऋभुक्षिभिः | करण |
| च० | ऋभुक्षे | ऋभुक्षिभ्याम् | ऋभुक्षिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | ऋभुक्षः | ऋभुक्षिभ्याम् | ऋभुक्षिभ्यः | अपा० |
| ष० | ऋभुक्षः | ऋभुक्षोः | ऋभुक्षाम् | सम्ब० |
| स० | ऋभुक्षि | ऋभुक्षोः | ऋभुक्षिषु | अधि० |
| | हे ऋभुक्षाः | हे ऋभुक्षाणौ | हे ऋभुक्षाणः | सम्बो० |

[२१८] नकारान्त-स्त्रीलिङ्गः 'सुपथिन्' शब्दः

(सुन्दर रास्ता वाली नगरी)

सुपि तु षत्वमपीति विशेषः । (१) "मन्था मन्थनदण्डे च वज्र वातेऽपि च स्मृतः" इति कोशः । 'मन्थ विलोढने' । अस्मात् इनिः कित्स्यादित्यर्थक 'मन्थः' इत्युणादिसूत्रेण निष्पन्नो 'मथिन्' शब्दः । कित्वाच्चलोपो बोध्यः । अन्यत् कार्य 'पथिन्' शब्दवत् । (२) अत्र 'योन्थः' इति वर्जमाऽऽत्वादिकार्यं 'पथिन्' शब्दवत् ज्ञेयम् , पात्परत्वात् णत्वमिति विशेषः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------|-------------|------------|---------|
| प्र० | सुपथी | सुपथ्यौ | सुपथ्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | सुपथीम् | सुपथ्यौ | सुपथीः | कर्म |
| तृ० | सुपथ्याः | सुपथीभ्याम् | सुपथीभिः | करण |
| च० | सुपथ्यै | सुपथीभ्याम् | सुपथीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुपथ्याः | सुपथीभ्याम् | सुपथीभ्यः | अपा० |
| प० | सुपथ्याः | सुपथ्योः | सुपथीनाम् | सम्ब० |
| स० | सुपथ्याम् | सुपथ्यौ | सुपथीषु | अधि० |
| | हे सुपथि | हे सुपथ्यौ | हे सुपथ्यः | सम्बो० |

एवं सुमथी सुमथ्यौ सुमथ्यः इत्यादि सुपथिन्वत् ।

[२१९] नकारान्त-स्त्रीलिङ्गः 'अनृभुक्षिन्' शब्दः

(सेनापति (कमाण्डर) के विना सेना)

| | | | | |
|-------|--------------|-----------------|---------------|---------|
| प्र० | अनृभुक्षी | अनृभुक्ष्यौ | अनृभुक्ष्यः | कर्त्ता |
| द्वि० | अनृभुक्षीम् | अनृभुक्ष्यौ | अनृभुक्षीः | कर्म |
| तृ० | अनृभुक्ष्याः | अनृभुक्षीभ्याम् | अनृभुक्षीभिः | करण |
| च० | अनृभुक्ष्यै | अनृभुक्षीभ्याम् | अनृभुक्षीभ्यः | सम्प्र० |

(१) प्रसंगात् स्त्रियामपि रूपमाह । सु=शोभनः, पन्थाः अस्यां=नगर्याम्, रिति बहुव्रीहौ 'ऋनेभ्यः' इति ङीप् 'भस्यटेलोपः इति इनो लोपः । 'न पूजनात्' इति निषेधात् 'ऋक्पूरब्धूः' इत्यप्रत्ययो न भवति । एवम् 'इनः स्त्रियाम्' इति ऋप्रत्ययोऽपि न 'सुवोरनाकौ' इत्यत्र 'सुपथी'ति भाष्योक्तत्वेन तस्याऽनित्यत्वात् । न पूजनादि'त्यत्र निषेधस्तु न, तस्य षचः प्रागेव प्रवृत्तेरिति सिद्धान्तात् । एवञ्च 'गौरी' शब्दवदत्र कार्यं ज्ञेयम् । नच 'लिङ्गविशिष्टे'ति परिभाषया 'पथि-मथी'त्यावं 'थो न्यः' इति न्धादेशश्च कुतो नेति वाच्यम्, विभक्तौ लिङ्गवि-शिष्टाऽप्रहणात् । (२) इदमपि प्रसङ्गादाह । अविद्यमानः ऋभुक्षाः यस्याः इति विप्रदे 'नञोऽस्त्यर्थानामि'ति समासः । ऋभुक्षाशब्दोऽत्र स्वामीपर्यायः 'गौरी' वत् कार्यं ज्ञेयम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|---------------|-----------------|----------------|--------|
| पं० | अनृभुक्ष्याः | अनृभुक्षीभ्याम् | अनृभुक्षीभ्यः | अपा० |
| ब० | अनृभुक्ष्याः | अनृभुक्ष्योः | अनृभुक्षीणाम् | सम्ब० |
| स० | अनृभुक्ष्याम् | अनृभुक्ष्योः | अनृभुक्षीषु | अधि० |
| | हे अनृभुक्षि | हे अनृभुक्ष्यौ | हे अनृभुक्ष्यः | सम्बो० |

[२२०] नकारान्त-नपुंसकलिङ्गः 'सुपथिन्' शब्दः

(सुन्दर रास्ता वाला वन)

| | | | | |
|-------|--------------------------|-------------|--------------|---------|
| प्र० | सुपथि | सुपथी | सुपन्थानि | कर्त्ता |
| द्वि० | सुपथि | सुपथी | सुपन्थानि | कर्म |
| तृ० | सुपथा | सुपथिभ्याम् | सुपथिभिः | करण |
| च० | सुपथे | सुपथिभ्याम् | सुपथिभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुपथः | सुपथिभ्याम् | सुपथिभ्यः | अपा० |
| ब० | सुपथः | सुपथोः | सुपथाम् | सम्ब० |
| स० | सुपथि | सुपथोः | सुपथिषु | अधि० |
| | { हे सुपथि हे सुपथिन् | हे सुपथी | हे सुपन्थानि | सम्बो० |

[२२१] नकारान्त-पुंलिङ्गः 'प्रियपञ्चन' शब्दः

(५ ठो प्रिय है जिसको ऐसा पुरुष)

(१) इदमपि प्रसङ्गादाह । सु = शोभनः पन्थाः अस्य वनस्येति बहुव्रीहिः । ततः नपुंसकत्वात् सुञ्चिकि । धात्वन्तु न, 'न लुमते'ति प्रत्ययलक्षणनिषेधात् । (२) औचः स्त्रीभावे असर्वनामस्थानत्वेन भत्वात् 'भस्य टेलोपः' इति टेः (इनः) लोपः । (३-४) अशशसोः शिभावे तस्य सर्वनामस्थानत्वात् 'इतोऽत्' इत्यत्वे 'थो न्यः' इति न्यादेशे उपधादीर्घः । (५) टादावचि भत्वात् टेलोपः । (६) भ्यामादौ हलि पदत्वात् नलोपः । (७) सुञ्चिकि 'सम्बुद्धौ नपुंसकानां नलोपो वा वाच्यः' (वा) इति विभाषया नलोपः । नलोपे सति 'हे वारे' इति वदत्रापि गुणस्तु न 'नलोपः सुप्स्वरे'ति नलोपस्याऽधिदत्त्वात् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------------|-----------------|-----------------|---------|
| प्र० | प्रियपञ्चा | प्रियपञ्चानौ | प्रियपञ्चानः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रियपञ्चानम् | प्रियपञ्चानौ | प्रियपञ्चजः | कर्म |
| तृ० | प्रियपञ्चजा | प्रियपञ्चभ्याम् | प्रियपञ्चभिः | करण |
| च० | प्रियपञ्चजे | प्रियपञ्चभ्याम् | प्रियपञ्चभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रियपञ्चजः | प्रियपञ्चभ्याम् | प्रियपञ्चभ्यः | अपा० |
| ष० | प्रियपञ्चजः | प्रियपञ्चजोः | प्रियपञ्चजाम् | सम्ब० |
| स० | प्रियञ्चज | प्रियपञ्चजोः | प्रियपञ्चसु | अधि० |
| | हे प्रियपञ्चन् | हे प्रियपञ्चानौ | हे प्रियपञ्चानः | सम्बो० |

[२२२] नकारान्त-पुंलिङ्गः 'प्रियाष्टन्' शब्दः

(८ ठो प्रिय है जिसको ऐसा पुरुष)

| प्र० | { प्रियाँष्टाः प्रियाष्टा | प्रियाँष्टानौ | प्रियाँष्टानः | कर्त्ता |
|------|------------------------------|---------------|---------------|---------|
|------|------------------------------|---------------|---------------|---------|

(१) प्रियाः पञ्च यस्येति बहुव्रीहौ अन्यपदार्थप्रधानत्वात् एक-द्वि-बहुवचनानि सन्ति । सुटि हलादौ च राजवत् । (२) 'षड्भ्यो लुगिति जश्शसोर्न लुक्, एवमामि 'षट्चतुर्भ्यश्चे'ति नुट्यपि न उभयसूत्रे बहुवचननिर्देशेन षट्चतुर्थप्राधान्यावगमात् । (३) शसादावचि भत्वादल्लोपे नस्य श्चुत्वेन अकारे सति अकारद्वयमध्ये चकारः इति बोध्यम् । (४) प्रियाः अष्टौ यस्येति बहुव्रीहौ अन्यपदार्थप्रधानत्वात् एक-द्वि-बहु-वचनानि भवन्ति । सौ हलि आत्वे स्त्वविद्यगौ । आत्वाभावे राजवत् (५) अष्टाभ्यः इति कृतात्वनिर्देशेन जश्शसोरनुमीयमानमात्वं प्राधान्ये सत्येव भवति नतूपसर्जनत्वेऽपि (गौणत्वेऽपि) अष्टाभ्यः इति बहुवचननिर्देशात्, अन्यथा कृतात्वाऽनुकरणेऽपि एकवचनेनैव निर्दिशेत्- 'अष्टा औश्' इति 'अष्ट औश्' इति वा, तेन प्रियाष्टन् शब्दस्य हलादावेव वैकल्पिकमात्वमित्यवधेयम् । 'अष्टन आ विभक्तौ' इत्यत्र 'अष्टनः' इत्येकवचननिर्देशेन अष्टन्शब्दार्थस्य प्राधान्याश्रयणे मानाभावादिति भावः । गौणमुह्यन्यायस्तु नात्र प्रवर्तते, एवं सत्यपि 'अष्टाभ्यः औश्' इत्यत्र बहुवचनवैयर्थ्यात् । तथा च— "प्रियाष्टनो राजवत् सर्व

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------------------------------|---------------------------------------|---------------------------------|--------|
| द्वि० | प्रियाष्टानम् | प्रियाष्टानौ | प्रियाष्टानः | कर्म |
| तृ० | प्रियाष्टाना | { प्रियाष्टाभ्याम् प्रियाष्टभ्याम् | प्रियाष्टाभिः प्रियाष्टभिः | करण |
| च० | प्रियाष्टाने | { प्रियाष्टाभ्याम् प्रियाष्टभ्याम् | प्रियाष्टाभ्यः प्रियाष्टभ्यः | सम्प्र |
| पं० | प्रियाष्टानः | { प्रियाष्टाभ्याम् प्रियाष्टभ्याम् | प्रियाष्टाभ्यः प्रियाष्टभ्यः | अपा |
| ष० | प्रियाष्टानः | प्रियाष्टानोः | प्रियाष्टानाम् | सम्ब |
| स० | { प्रियाष्टानि प्रियाष्टानि | प्रियाष्टानोः | प्रियाष्टानु प्रियाष्टानु | आधि |
| | { हे प्रियाष्टाः हे प्रियाष्टा | हे प्रियाष्टानौ | हे प्रियाष्टानः | सम्ब |

[२२३] त्रिषु लिङ्गेषु समानो नकारान्त 'पञ्चन' शब्दो नित्यं बहुवचना

प्र०-पञ्चं द्वि०-पञ्चं तृ०-पञ्चभिः च०-पञ्चभ्यः
पं०-पञ्चभ्यः ष०-पञ्चानाम् स०-पञ्चानु सम्बो०-हे पञ्च

[२२४] त्रिषु लिङ्गेषु समानः षकारान्त 'षट्' शब्दो नित्यं बहुवचनानं

हाहावच्चाऽपरं हलि' अर्थात् प्रियाष्टन् शब्दस्याजादिषु राजवदेव सर्वं रूपम् हलादिषु तु हाहाशब्दवदिति, चकारात् राजवदपीति तत्तु आत्वाभावे द्रष्टव्यम् (१) अत्राल्लोपे सति षट्त्वन्तु न पूर्वस्माद्धिधिः पूर्वविधिः, इति पञ्चमीसम सपक्षे 'अचः परस्मिन्नि' गति अल्लोपस्य स्थानिवत्त्वात् । 'पूर्वत्रासिद्धीये न स्थानि वत्' इति निषेधस्तु न शङ्क्यः, 'तस्य दोषः संयोगादिलोपलत्वणत्वेषु' इत्युक्तत्वात् । किञ्च कार्यकालपक्षे 'अन्तरङ्ग' परिभाषायाः षष्ठाध्यायीस्थत्वाभावेऽन्तरङ्गे षट्त्वे कर्तव्ये वहिरङ्गस्याल्लोपस्य असिद्धत्वाच्च । (२-३) 'प्लान्ता षट् इति षट्संज्ञायां 'षट्भ्यो लुक्' इति जइशसोर्लुकि नलोपः । (४) भिसादी हलि पदत्वानलोपः । (५) षट्त्वे 'षट्चतुर्भ्यश्च' इति नुटि 'नामी' ति दीर्घस्याऽप्राप्तया नलोपे प्राप्ते तस्याऽसिद्धत्वात् 'नोपधायाः' इति पूर्वं दीर्घं ततो नलोपः ।

१०-षट् द्वि०-षट् तृ०-षट्भिः च०-षट्भ्यः
 १०-षट्भ्यः ष०-षण्णाम् स०-षट्सु सम्बो०-हे षट्

२२५] त्रिषु लिङ्गेषु समानो नकारान्तः 'सप्तन्' शब्दो नित्यं बहुवचनान्तः

१०-सप्त द्वि०-सप्त तृ०-सप्ताभिः च०-सप्तभ्यः
 १०-सप्तभ्यः ष०-सप्तानाम् स०-सप्तसु सम्बो०-हे सप्त

२२६] त्रिषु लिङ्गेषु समानो नकारान्त 'अष्टन्' शब्दो नित्यं बहुवचनान्तः

१०-अष्टौ द्वि०-अष्टौ तृ०-अष्टाभिः च०-अष्टाभ्यः
 १०-अष्टाभ्यः ष०-अष्टानाम् स०-अष्टासु सम्बो०-हे अष्टौ

[२२७] 'अष्टन आ विभक्तौ' इत्यात्वाभावे 'अष्टन्' शब्दः ।

१०-अष्ट द्वि०-अष्ट तृ०-अष्टभिः च०-अष्टभ्यः
 १०-अष्टभ्यः ष०-अष्टानाम् स०-अष्टसु सम्बो०-हे अष्ट

[२२८] नकारान्तत्रिषु लिङ्गेषु समानो 'नवन्' शब्दः ।

१०-नव द्वि०-नव तृ०-नवभिः च०-नवभ्यः

(१) षष् शब्दोऽपि प्रसङ्गादत्रैव लिख्यते, षान्तत्वात् षट्संज्ञायां जश्शसो-
 लुकि जश्त्वचत्वे । (२) 'षट्चतुर्भ्यश्च' इति नुटि ष्टुत्वे 'प्रत्ययेभाषा-
 यामि'ति वचनान्नित्यमनुनासिकः । अनामिति पर्युदासान्न ष्टुत्वनिषेधः ।
 (३) पञ्चन् शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (४) अष्टन आ विभक्तौ' इत्यात्वे
 'अष्टाभ्य औश' इत्यौशि वृद्धिः । ननु हलादौ विहितस्यात्वस्य कथं जश्श-
 सोः प्रवृत्तिरिति चेत्सत्यम्, 'अष्टभिः' इत्यत्रोदात्तववारणाय दीर्घान्तादष्टनः पर-
 स्याऽसर्वनामस्थानविभक्तिदत्तात्सादित्यर्थक 'अष्टनो दीर्घात्' इति सूत्रस्थ दी-
 र्घग्रहणसामर्थ्यात् आत्वस्य वैकल्पिकत्वेन भ्यसि 'अष्टाभ्यः' 'अष्टभ्यः' इति रूप-
 द्वयसत्यपि औश्चिधौ लाघवात् अष्टभ्यः इति वक्तव्ये अष्टाभ्यः इति कृतात्वनि-
 देशात् जश्शसोविषयेऽपि आत्वं भवतीति ज्ञापनस्य जागहकत्वादिति दिक् ।
 (५) आत्वाऽभावे पञ्चन् शब्दवत् सर्वं कार्यं समानं ज्ञेयम् । (६) नवन्शब्दा-
 दारभ्य अष्टादशन् शब्दपर्यन्तमपि पञ्चन्शब्दवत् समानं कार्यम्भवतीति न वि-
 स्मर्तव्यम् ।

पं०-नवभ्यः ष०-नवानाम् स०-नवसु सम्बो०-हे नव

[२२९] नकारान्तस्त्रिषु लिङ्गेषु समानो 'दशन्' शब्दः ।

प्र०-दश द्वि०-दश तृ०-दशभिः च०-दशभ्यः

पं०-दशभ्यः ष०-दशानाम् स०-दशसु सम्बो०-हे दश

[२३०] नकारान्तस्त्रिषु लिङ्गेषु समानः 'एकादशन्' शब्दः ।

प्र०-एकादश द्वि०-एकादश तृ०-एकादशभिः च०-एकादशभ्यः

पं०-एकादशभ्यः ष०-एकादशानाम् स०-एकादशसु हे एकादश

एवं द्वादशन्, त्रयोदशन्, चतुर्दशन्, पञ्चादशन्, षट्दशन्,

अष्टादशन्-शब्दाः त्रिषु लिङ्गेषु समानाः पञ्चन् शब्दवत् ।

[२३१] स्त्रीलिङ्गो 'ऊनविंशति' शब्दः नित्यैकवचनान्तः (१९)

प्र०-ऊनविंशतिः द्वि०-ऊनविंशतिम् तृ०-ऊनविंशत्या

च०- { ऊनविंशत्यै ष०- { ऊनविंशत्याः स०- { ऊनविंशत्याम्
ऊनविंशतये ऊनविंशतेः ऊनविंशतौ

सम्बो० हे ऊनविंशते

एवं 'विंशति' शब्दोऽपि (२०)

[२३२] स्त्रीलिङ्गो नित्यैकवचनान्तः 'त्रिंशत्' शब्दः (३०)

प्र०-त्रिंशत् द्वि०-त्रिंशतम् तृ०-त्रिंशता च०-त्रिंशते

(१) विंशत्यादौ कृतैकशेषे तु द्विवचन-बहुवचनान्तोऽपि भवति, यथा-विंश-
तिश्च २ इति विंशतो' । एवं विंशतिश्च ३ इति विंशतयः', एवमन्यत्रापि ज्ञेयम् ।
शतश्च ३ इति 'शतानि' इति तु 'परममूलोक्तं न विस्मर्तव्यम् । एकादि नवान्तपर्य-
न्तमेकशेषो न भवति अनभिधानात् । एवं प्रचुरप्रयोगाऽभावात् द्वन्द्वोऽभावोऽपि
बोध्यम् । "विंशत्याद्याः सदैकत्वे सर्वाः संख्येयसंख्ययोः" इत्यमरः । अयमभावः
विंशत्यारभ्य संख्यावाचिनाम् एकवचने एव सदा प्रयुङ्क्ते । विंशत्यादिभिः संख्या-
संख्येययोः उभयोर्बोधो भवति । यथा-'विंशतिः छात्राः' अत्र विंशतित्वविशिष्टाः
छात्राः प्रतीयन्ते । 'छात्राणां विंशतिः' इत्यत्र तु छात्रगतविंशतित्वसंख्या प्रती-
यते । एवमन्यत्राप्युच्यते । साधनप्रकारस्तु मतिवत् ।

प०-त्रिंशत् ष०-त्रिंशतः स०-त्रिंशति सम्बो०-हे त्रिंशत्

[२३३] स्त्रीलिङ्गो नित्यैकवचनान्तः 'चत्वारिंशत्' शब्दः (४०)

प्र०-चत्वारिंशत् द्वि०-चत्वारिंशतम् तृ०-चत्वारिंशता
च०-चत्वारिंशते पं०-चत्वारिंशतः ष०-चत्वारिंशतः
स०-चत्वारिंशति सम्बो०-हे चत्वारिंशत्

[२३४] स्त्रीलिङ्गो नित्यैकवचनान्तः 'पञ्चाशत्' शब्दः (५०)

प्र०-पञ्चाशत् द्वि०-पञ्चाशतम् तृ०-पञ्चाशता स०-पञ्चाशते
पं०-पञ्चाशतः ष०-पञ्चाशतः स०-पञ्चाशति हे पञ्चाशत्

[२३५] स्त्रीलिङ्गो नित्यैकवचनान्तः 'षष्टि' शब्दः (६०)

प्र०-षष्टिः द्वि०-षष्टिम् तृ०-षष्ट्या च०- { षष्ट्यै
षष्ट्ये
पं०- { षष्ट्याः ष०- { षष्ट्याः स०- { षष्ट्याम् सम्बो०-हे षष्टे
षष्टेः षष्टेः षष्टौ

[२३६] स्त्रीलिङ्गो नित्यैकवचनान्तः 'सप्तति' शब्दः (७०)

प्र०-सप्ततिः द्वि०-सप्ततिम् तृ०-सप्तत्या च०- { सप्तत्यै
सप्तत्ये
पं०- { सप्तत्याः ष०- { सप्तत्याः स०- { सप्तत्याम् सम्बो०-हे सप्तते
सप्ततेः सप्ततेः सप्ततौ

[२३७] स्त्रीलिङ्गो नित्यैकवचनान्तः 'अशीति' शब्दः (८०)

प्र०-अशीतिः द्वि०-अशीतिम् तृ०-अशीत्या च०- { अशीत्यै
अशीत्ये
पं०- { अशीत्याः ष०- { अशीत्याः स०- { अशीत्याम् सम्बो०-हेअशीते
अशीतेः अशीतेः अशीतौ

[२३८] स्त्रीलिङ्गो नित्यैकवचनान्तो 'नवति' शब्दः (९०)

(१) मतिवत् कार्यं बोध्यम् । (२) मतिवत् कार्यं भवति । (३) मतिवत् कार्यं ज्ञेयम् ।

| | | | |
|-------------------------|------------------------|------------------------|-----------------------|
| प्र०-नवतिः | द्वि०-नवतिम् | तृ०-नवत्या | च०- { नवत्यै नवतये |
| पं०- { नवत्याः नवतेः | ष०- { नवत्याः नवतेः | स०- { नवत्याम् नवतौ | सम्बो०-हे नवते |

[२३९] नपुंसकलिङ्गो नित्यैकवचनान्तः 'शत' शब्दः (१००)

| | | | |
|-----------|------------|----------|--------------|
| प्र०-शतम् | द्वि०-शतम् | तृ०-शतेन | च०-शताय |
| पं०-शतात् | ष०-शतस्य | स०-शते | सम्बो०-हे शत |

एवम्-अयुत-लक्ष-नियुत-शब्दाः ज्ञानवत् । कोटि-शब्दः
स्त्री लिङ्गत्वात् 'रुचि' वत् ।

अथ प्रसङ्गात् संख्यानां गणनाक्रमोप्यत्रैव लिख्यते-

| | | |
|-------------------|--------------|---|
| १ = एकम् | ९ = नव | १८ = अष्टादश |
| २ = द्वे | १० = दश | १९ { ऊनविंशतिः एकोनविंशतिः एकान्विंशतिः एकाद्विंशतिः |
| ३ = त्रीणि | ११ = एकादश | |
| ४ = चत्वारि | १२ = द्वादश | |
| ५ = पञ्च | १३ = त्रयोदश | २० = विंशतिः |
| ६ = षट् | १४ = चतुर्दश | २१ = एकविंशति |
| ७ = सप्त | १५ = पञ्चदश | २२ = द्वाविंशति |
| ८ { अष्टौ अष्ट | १६ = षोडश | २३ = त्रयोविंशतिः |
| | १७ = सप्तदश | २४ = चतुर्विंशतिः |

(१) इदमपि मतिवत् । (२) ज्ञानवत् । (३,५) 'द्वयष्टनः संख्यायामबहु-
ब्रीह्यशीत्योः' = द्विशब्दस्य अष्टनृशब्दस्य च संख्यावाचके उत्तरपदे परे आत्-
स्यात्, न तु बहुव्रीहौ, अशीतिपरे चेत्यर्थः । बहुव्रीहौ निषेधात्, द्वी वा त्रयो
वेति विग्रहे 'संख्याव्यये'ति बहुव्रीहौ 'द्वित्राः' इत्यत्र आत्वं न भवति । अशीतिपरे
आत्वंन्नेत्यस्योदाहरणन्तु अनुपदमेव "द्वयशीतिः" इति वक्ष्यामः । (६) एकेन
न विंशतिः इति विग्रहः । 'एकादिश्चैकस्य चादुक्' इति नञः प्रकृतिभावे अदु-
यागमे च दीर्घे अनुनासिको विकल्पः । (४,७) 'त्रैत्रयः' = प्राक्शतात् संख्याशब्दे

| | | |
|------------------------|-----------------------|-------------------|
| २५ = पञ्चविंशतिः | ४५ = पञ्चचत्वारिंशत् | ६३ { त्रयःषष्टिः |
| २६ = षट्षिंशतिः | ४६ = षट्चत्वारिंशत् | ६४ { त्रिषष्टिः |
| २७ = सप्तविंशतिः | ४७ = सप्तचत्वारिंशत् | ६४ = चतुःषष्टिः |
| २८ = अष्टाविंशतिः | ४८ { अष्टाचत्वारिंशत् | ६५ = पञ्चषष्टिः |
| २९ { ऊनत्रिंशत् | ४८ { अष्टचत्वारिंशत् | ६६ = षट्षष्टिः |
| ३० = त्रिंशत् | ४९ { ऊनपञ्चाशत् | ६७ = सप्तषष्टिः |
| ३१ = एकत्रिंशत् | ४९ { एकोनपञ्चाशत् | ६८ { अष्टाषष्टिः |
| ३२ = द्वात्रिंशत् | ५० = पञ्चाशत् | ६८ { अष्टषष्टिः |
| ३३ = त्रयस्त्रिंशत् | ५१ = एकपञ्चाशत् | ६९ { ऊनसप्ततिः |
| ३४ = चतुस्त्रिंशत् | ५२ { द्विपञ्चाशत् | ६९ { एकोनसप्ततिः |
| ३५ = पञ्चत्रिंशत् | ५२ { द्वापञ्चाशत् | ७० = सप्ततिः |
| ३६ = षट्त्रिंशत् | ५३ { त्रयःपञ्चाशत् | ७१ = एकसप्ततिः |
| ३७ = सप्तत्रिंशत् | ५३ { त्रिपञ्चाशत् | ७२ { द्विसप्ततिः |
| ३८ = अष्टात्रिंशत् | ५४ = चतुःपञ्चाशत् | ७२ { द्वासप्ततिः |
| ३९ { ऊनचत्वारिंशत् | ५५ = पञ्चपञ्चाशत् | ७३ { त्रयःसप्ततिः |
| ४० = चत्वारिंशत् | ५६ = षट्पञ्चाशत् | ७३ { त्रिसप्ततिः |
| ४१ = एकचत्वारिंशत् | ५७ = सप्तपञ्चाशत् | ७४ = चतुःसप्ततिः |
| ४२ { द्वाचत्वारिंशत् | ५८ { अष्टापञ्चाशत् | ७५ = पञ्चसप्ततिः |
| ४२ { द्विचत्वारिंशत् | ५८ { अष्टपञ्चाशत् | ७६ = षट्सप्ततिः |
| ४३ { त्रयश्चत्वारिंशत् | ५९ { ऊनषष्टिः | ७७ = सप्तसप्ततिः |
| ४३ { त्रिचत्वारिंशत् | ५९ { एकोनषष्टिः | ७८ { अष्टसप्ततिः |
| ४४ = चतुश्चत्वारिंशत् | ६० = षष्टिः | ७८ { अष्टसप्ततिः |
| | ६१ = एकषष्टिः | ७९ { ऊनाशीतिः |
| | ६२ { द्विषष्टिः | ७९ { एकानाशीतिः |
| | ६२ { द्वाषष्टिः | ८० = अशीतिः |

उत्तर पदेपरतः त्रिषड्बन्धस्य त्रयस् भादेशः स्यात् नतु बहुव्रीहौ, अशीतिपरं चेत्यर्थः एवञ्च त्रयसादेशे रुत्वे उत्वे च गुणः । (१-३) 'विभाषा चत्वारिंशत्प्रमृती सर्वेषाम्' द्वि-अष्टनः-त्रैश्च प्रागुक्तम् (द्वि-अष्टनोरात्वं, त्रिषड्बन्धस्य त्रयसादेशश्च) वा स्यात् चत्वारिंशदादौ परे इत्यर्थः ।

| | | |
|---------------------------|-----------------------------|------------------------------------|
| ८१ = एकाशीतिः | ९० = नवतिः | ६८ { अष्टानवतिः अष्टनवतिः |
| ८२ = द्वांशीतिः | ९१ = एकनवतिः | |
| ८३ = त्र्यंशीतिः | ६२ { द्वानवतिः द्विनवतिः | ९९ { नवनवतिः ऊनशतम् एकोनशतम् |
| ८४ = चतुरशीतिः | | |
| ८५ = पञ्चाशीतिः | ९४ = चतुर्णवति | १०० = शतम् |
| ८६ = षडशीतिः | ९५ = पञ्चनवतिः | १०१ = एकंशतम् |
| ८७ = सप्ताशीतिः | ९६ = षण्णवतिः | १०२ = द्विशतम् |
| ८८ = अष्टाशीतिः | ९७ = सप्तनवतिः | १०३ = त्रिशतम्, इत्यादि । |
| ८९ { ऊननवतिः एकाननवतिः | | |

अथ संख्यायाः कुत्र विश्राम इत्याह—

“एकं दश शतञ्चैव सहस्रमयुतं तथा ।

लक्षञ्च नियुतञ्चैव कोटिरर्बुदमेव च ॥

वृन्दं खर्वो निखर्वश्च शङ्खः पद्मश्च सागरः ।

अन्त्यं मध्यं परार्द्धञ्च दशवृक्ष्या यथाक्रमम् ॥” इति ।

(१-३) ‘द्वयष्टनः संख्यायामबहुव्रीहौ’ इति सूत्रे, त्रैस्त्रयः’ इति सूत्रे च ननु अशीताविश्रुक्त्वात् द्वयष्टनशब्दयोरात्वं, त्रिशब्दस्य त्रयसादेशश्चाऽत्र न भवतीत्यवधेयम् । (४) एकञ्च शतञ्चेति समाहारद्वन्द्वः । (५-६) द्वौ च शतञ्च, त्रिणि च शतं च इति समाहारद्वन्द्वः । ‘द्वयष्टनः’ इति सूत्रे ‘त्रैस्त्रयः’ इति सूत्रे च ‘प्राक् शतादिति वक्तव्यम्’ (वा०) इत्युक्त्वात् शतशब्दे परे द्विशब्दस्य आत्वं, त्रिशब्दस्य त्रयसादेशो न भवतीति । कर्मधारये तु ‘द्विशतम्’ इत्यस्य २०० ‘त्रिशतम्’ इत्यस्य ३०० इत्यर्थो भवतीति दिक् । (७) एतत् संख्याक्रमो नेदानीं व्यवहारे दृश्यते ।

| | | |
|---------------------|------|--------------------------|
| एकम् = इकाई | | १ |
| दश = दहाई | | १० |
| शतम् = सैकड़ा | | १०० |
| सहस्रम् = हजार | | १००० |
| दशसहस्रम् = दश हजार | | १०००० |
| लक्षम् = लाख | | १००००० |
| दशलक्षम् = दश लाख | | १०००००० |
| कोटिः = कड़ोर | | १००००००० |
| दशकोटिः = दश कड़ोर | | १००००००००० |
| अर्बुदम् = अरब | | १०००००००००० |
| दशार्बुदम् = दश अरब | | १०००००००००००० |
| खर्वः = खरब | | १००००००००००००० |
| दशखर्वः = दश खरब | | १००००००००००००००० |
| नीलम् = नील | | १००००००००००००००० |
| दशनीलम् = दश नील | | १००००००००००००००००० |
| पद्मम् = पदुम | | १०००००००००००००००००० |
| दशपद्मम् = दश पदुम | | १०००००००००००००००००००० |
| शंखः = शंख | | १०००००००००००००००००००० |
| महाशंखः = दश शंख | | १००००००००००००००००००००००० |

अथ च प्रकृतमनुसरामः—

[२४०] षकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'बुध्' शब्दः (समज्ञदार)

| | | | | |
|-------|----------|------------|---------|-------|
| प्र० | भुव-भुव् | बुधौ | बुधः | कर्ता |
| द्वि० | बुधम् | बुधौ | बुधः | कर्म |
| तृ० | बुधा | भुद्भ्याम् | भुद्भिः | करण |

(१) बुध्यते इति भुव् । 'बुध अवगमने' तस्मात् कर्तरि क्तिप् । 'एकाचो-
बशः' इति बकारस्य भषभावे जश्त्वचत्त्वयोः सुलोपः । (२) पदान्तत्वाऽभावात्
न भषभावः । (३) भ्यामादौ हलि 'स्वादिष्विति' पदत्वात् भषभावे जश्त्वम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|--------------|----------|---------|---------|
| च० | बुधे | भुञ्जाम् | भुञ्जः | सम्प्र० |
| पं० | बुधः | भुञ्जाम् | भुञ्जः | अपा० |
| ष० | बुधः | बुधोः | बुधाम् | सम्ब० |
| स० | बुधि | बुधोः | भुत्सु | अधि० |
| | हे भुत्-भुद् | हे बुधौ | हे बुधः | सम्बो० |

[२४१] जान्त-पुँल्लिङ्गो 'युज्' शब्दः (योगी)

| | प्र० | द्वि० | तृ० | च० | पं० | |
|--|---------|------------|----------|----------|----------|---------|
| | युञ् | युञ्जौ | युञ्जः | युञ्जः | युञ्जः | कर्ता |
| | युञ्जम् | युञ्जौ | युञ्जः | युञ्जः | युञ्जः | कर्म |
| | युजा | युग्भ्याम् | युग्भिः | युग्भ्यः | युग्भ्यः | करण |
| | युजे | युग्भ्याम् | युग्भ्यः | युग्भ्यः | युग्भ्यः | सम्प्र० |
| | युजः | युग्भ्याम् | युग्भ्यः | युग्भ्यः | युग्भ्यः | अपा० |

(१) युनञ्तीति युङ् । 'युजिर् योगे' तस्मात् 'ऋत्विगित्यादिसूत्रेण किन् । 'ऋत्युगि'ति सूत्रेण अलाक्षणिकम् (लक्षणानि=सूत्राणि, तैः प्रतिपादितं कार्यं लाक्षणिकं तद्भिन्नमित्यर्थः) अपि किञ्चित् कार्यं निपातनात् भवति, तद्यथा-ऋतौ उपपदे यजधातोः किन्, 'वचिस्वपी'ति सम्प्रसारणं 'ब्रश्चे'ति षत्वाऽपवादकृत्वञ्च । कृपेः किन्, द्वित्वम्, अन्तोदात्तत्वं च । सृजेः कर्मणि किन्, अमागमश्च, दिशोः कर्मणि किन् । उत्पूर्वात् स्निहेः किन्, उदो दलोपः, षत्वञ्च । अङ्गेः सुप्युपपदेः किन् युजेः केवलात् किन् । क्रुञ्चेः केवलात् किन् । इत्यादिकं न विस्मर्तव्यम्, पुनरपि एतत्प्रतिपादनाऽसम्भवादित्यास्तान्तावत् । प्रकृते किनि 'लशक्वे'ति ककारस्य, इकारस्योच्चारणार्थत्वेन 'हलन्त्यमि'ति नकारस्य 'वैरपृक्तस्ये'ति वकारस्य च इत्संज्ञायां लोपे च, किनः सर्वाऽपहारः इति तत्त्वम् । एवंचाऽन्यत्राप्युह्यम् । ततः सौ 'युजेर-समासे' इति नुमि सुलेपे संयोगान्तलोपे च 'क्विन्प्रत्ययस्ये'ति नकारस्य कृत्वेन उकारः । युजावित्यत्र अनुस्वारे परसवर्णे च कृते लकारस्य कृत्वन्तु न परसवर्ण-त्वाऽसिद्धत्वात् । शसादावचि असर्वनामस्थानत्वान्न नुम् । हलि तु पदत्वात् कृत्वं सुपि पत्वञ्चेति विशेषः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---|--------------|-------------|---------|
| १० | युजः | युजोः | युजाम् | सम्ब० |
| स० | युजि | युजोः | युक्षु | अधि० |
| | हे युङ् | हे युञ्जौ | हे युञ्जः | सम्बो० |
| | [२४२] जान्त-पुंल्लिङ्गः 'सुयुज्' शब्दः (सुयोगी) | | | |
| प्र० | सुयुक्-ग् | सुयुजौ | सुयुजः | कर्ता |
| द्वि० | सुयुजम् | सुयुजौ | सुयुजः | कर्म |
| तृ० | सुयुजा | सुयुग्भ्याम् | सुयुग्भिः | करण |
| च० | सुयुजे | सुयुग्भ्याम् | सुयुग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुयुजः | सुयुग्भ्याम् | सुयुग्भ्यः | अपा० |
| ५० | सुयुजः | सुयुजोः | सुयुजाम् | सम्ब० |
| स० | सुयुजि | सुयुजौ | सुयुक्षु | अधि० |
| | हे सुयुक्-ग् | हे सुयुजौ | हे सुयुजः | सम्बो० |
| | [२४३] जकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'खञ्ज्' शब्दः (लंगड़ा, खोंड़ा) | | | |
| प्र० | खन् | खञ्जौ | खञ्जः | कर्ता |
| द्वि० | खञ्जम् | खञ्जौ | खञ्जः | कर्म |
| तृ० | खञ्जा | खन्भ्याम् | खन्भिः | करण |
| च० | खञ्जे | खन्भ्याम् | खन्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | खञ्जः | खन्भ्याम् | खन्भ्यः | अपा० |
| ५० | खञ्जः | खञ्जोः | खञ्जाम् | सम्ब० |
| स० | खञ्जि | खञ्जौ | खन्सु-खन्सु | अधि० |
| | हे खन् | हे खञ्जौ | हे खञ्जः | सम्बो० |

(१) सुष्टु युनक्तीति सुयुक् । सत्सुद्विषेति क्विप् । असमासे इत्युक्तत्वान् नुम् । (२) खञ्जतीति खन् । 'खञ्जि गति वैकल्ये' अस्मात् क्विप्, इदित्वान्नुम्, अनुस्वारपरसवर्णौ । सुलोपे सति संयोगान्तलोपे निमित्ताऽप्यायात् अनुस्वारपरसवर्णयोर्निवृत्तिः । (३) अजादौ पदत्वाऽभावात् संयोगान्तलोपो न । (४) भ्यामादौ इलि 'स्वादिङ्वि'ति पदत्वात् 'योगान्तलोपः । (५) 'नश्चे'ति विभाषया तुगि-

[२४४] अकारान्त-पुंलिङ्गो 'राज्' शब्दः (राजा)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------|------------|---------------|---------|
| प्र० | राट्-राड् | राजौ | राजः | कर्त्ता |
| द्वि० | राजम् | राजौ | राजः | कर्म |
| तृ० | राजा | राड्भ्याम् | राड्भिः | करण |
| च० | राजे | राड्भ्याम् | राड्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | राजः | राड्भ्याम् | राड्भ्यः | अपा० |
| ष० | राजः | राजोः | राजाम् | सम्ब० |
| स्र० | राजि | राजोः | राट्सु-राट्सु | अधि० |
| | हे राट्-राड् | हे राजौ | हे राजः | सम्बो० |

[२४५] जकारान्त-पुंलिङ्गो विभ्राज्' शब्दः

(क्षत्रिय, सर्वव्यापी पुरुष-परमेश्वर)

| | | | | |
|-------|-------------|----------------|--------------|---------|
| प्र० | विभ्राट्-ड् | विभ्राजौ | विभ्राजः | कर्त्ता |
| द्वि० | विभ्राजम् | विभ्राजौ | विभ्राजः | कर्म |
| तृ० | विभ्राजा | विभ्राड्भ्याम् | विभ्राड्भिः | करण |
| च० | विभ्राजे | विभ्राड्भ्याम् | विभ्राड्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | विभ्राजः | विभ्राड्भ्याम् | विभ्राड्भ्यः | अपा० |
| ष० | विभ्राजः | विभ्राजोः | विभ्राजाम् | सम्ब० |

ति विशेषः । (१) राजते इति राट् । 'राजू दीप्तौ' अस्मात् क्विप् हल्ङ्यादिना सुलोपे 'व्रश्च-भ्रश्च-सृज-मृज-यज-राज-भ्राज-छशां षः' इति षत्वे जश्त्वचत्वे । (२) भ्यामादौ हलि पदत्वात् षत्वं जश्त्वञ्च । (३) 'डः सि धुट्' इति धुट् विकल्पो विशेषः । (४) विशेषेण भ्राजते इति विभाट् । 'डु भ्राजू दीप्तौ' फणादिरयम् तेन किपि सुलोपे च सति 'व्रश्चे'ति सूत्रे राजिसाहचर्यात् फणादेशेव भ्राजतेर्ग्रहणात् षत्वम् । शेषं तु राजवत् । फणादिव्यतिरिक्तानान्तु कृत्वं स्यादत एवोक्तं परममूले-विभ्राक् विभ्राग् इत्यादि ।

| एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|---|-----------------|------------------------------|---------|
| विभ्राजिः | विभ्राजौ | { विभ्राट्सु विभ्राट्सु | अधि० |
| हे विभ्राट्-ङ् | हे विभ्राजौ | हे विभ्राजः | सम्बो० |
| [२४६] जान्त-पुंल्लिङ्गो 'देवेज्' शब्दः (पुजारी जी) | | | |
| देवेट्-ङ् | देवेजौ | देवेजः | कर्त्ता |
| देवेजम् | देवेजौ | देवेजः | कर्म |
| देवेजा | देवेड्भ्याम् | देवेड्भिः | करण |
| देवेजे | देवेड्भ्याम् | देवेड्भ्यः | सम्प्र० |
| देवेजः | देवेड्भ्याम् | देवेड्भ्यः | अपा० |
| देवेजः | देवेजोः | देवेजाम् | सम्ब० |
| देवेजि | देवेजोः | { देवेट्सु देवेट्सु | अधि० |
| हे देवेट्-ङ् | हे देवेजौ | हे देवेजः | सम्बो० |
| [२४७] जान्त-पुंल्लिङ्गो 'विश्वसृज्' शब्दः (ब्रह्मा) | | | |
| विश्वसृट्-ङ् | विश्वसृजौ | विश्वसृजः | कर्त्ता |
| विश्वसृजम् | विश्वसृजौ | विश्वसृजः | कर्म |
| विश्वसृजा | विश्वसृड्भ्याम् | विश्वसृड्भिः | करण |
| विश्वसृजे | विश्वसृड्भ्याम् | विश्वसृड्भ्यः | सम्प्र० |
| विश्वसृजः | विश्वसृड्भ्याम् | विश्वसृड्भ्यः | अपा० |
| विश्वसृजः | विश्वसृजोः | विश्वसृजाम् | सम्ब० |
| विश्वसृजि | विश्वसृजोः | { विश्वसृट्सु विश्वसृट्सु | अधि० |
| हे विश्वसृट्-ङ् | हे विश्वसृजौ | हे विश्वसृजः | सम्बो० |

(१) देवान् यजतीति देवेट् । क्विप् यजादित्वात् 'वचिस्वपी'ति सम्प्रसारणे ।
 १द् गुणः । पत्वादिचार्यन्तु राज्वत् । (२) विश्वं सृजतीति विश्वसृट् ।
 ज विश्वे' अस्मात् क्विप् । पत्वादिचार्यं राज्वत् ।

[२४८] जान्त-पुंस्लिङ्गो 'परिमृज्' शब्दः (सफा करने वाला)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------------|---------------|--------------------------|---------|
| प्र० | परिमृट्-ङ् | परिमृजौ | परिमृजः | कर्ता |
| द्वि० | परिमृजम् | परिमृजौ | परिमृजः | कर्म |
| तृ० | परिमृजा | परिमृङ्भ्याम् | परिमृङ्भिः | करण |
| च० | परिमृजे | परिमृङ्भ्याम् | परिमृङ्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | परिमृजः | परिमृङ्भ्याम् | परिमृङ्भ्यः | अपा० |
| ष० | परिमृजः | परिमृजोः | परिमृजाम् | सम्ब० |
| स० | परिमृजि | परिमृजोः | { परिमृट्सु परिमृट्सु | अधि० |
| | हे परिमृट्-ङ् | हे परिमृजौ | हे परिमृजः | सम्बो० |

[२४९] जान्त-पुंस्लिङ्गः 'परिव्राज्' शब्दः (यति, सन्यासी)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------------|-----------------|------------------------------|---------|
| प्र० | परिव्राट्-ङ् | परिव्राजौ | परिव्राजः | कर्ता |
| द्वि० | परिव्राजम् | परिव्राजौ | परिव्राजः | कर्म |
| तृ० | परिव्राजा | परिव्राङ्भ्याम् | परिव्राङ्भिः | करण |
| च० | परिव्राजे | परिव्राङ्भ्याम् | परिव्राङ्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | परिव्राजः | परिव्राङ्भ्याम् | परिव्राङ्भ्यः | अपा० |
| ष० | परिव्राजः | परिव्राजोः | परिव्राजाम् | सम्ब० |
| स० | परिव्राजि | परिव्राजोः | { परिव्राट्सु परिव्राट्सु | अधि० |

(१) परिमार्ष्टीति परिमृट् 'मृज् शुद्धौ' अस्मात् क्विप्, 'क्विति चेति' निषेधात् 'मृज्-वृद्धिः' इति वृद्धिर्न भवति । षत्वादिकार्यन्तु राज्त्वत् । (२) सर्वं परित्यज्य व्रजतीति परि । 'परौ व्रजेः षः पदान्ते इत्युणादिसूत्रेण परानुप-पदेः व्रजेः क्विप् दीर्घः पदान्ते षत्वं च निपात्यते, ततः सौ हल्परत्वात्तस्य लोपे जश्त्वत्त्वं । (३) भ्यामादौ हलि पदत्वात् षत्वे जश्त्वम् । (४) 'ङः सि धुट्' इति वा धुडिति विशेषः ।

एकवचन द्विवचन बहुवचन

हे परित्राट्-इ हे परित्राजौ हे परित्राजः सम्बो०
 एवं सम्राज् (राजाधिराज), देवराज् (इन्द्र), विराज् क्षत्रिय
 परमेश्वर) इत्यादि

[२५०] जान्त-पुंल्लिङ्गो 'विश्वराज्' शब्दः (दुनियां का राजा भगवान्)

| | | | | |
|-------|--------------|------------------|--------------------------------|---------|
| प्र० | विश्वाराट्-इ | विश्वराजौ | विश्वराजः | कर्त्ता |
| द्वि० | विश्वाराजम् | विश्वराजौ | विश्वराजः | कर्म |
| तृ० | विश्वराजा | विश्वाराड्भ्याम् | विश्वाराड्भिः | करण |
| च० | विश्वराजे | विश्वाराड्भ्याम् | विश्वाराड्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | विश्वराजः | विश्वाराड्भ्याम् | विश्वाराड्भ्यः | अपा० |
| ष० | विश्वराजः | विश्वराजोः | विश्वराजाम् | सम्ब० |
| स० | विश्वराजि | विश्वराजोः | { विश्वाराट्सु विश्वाराड्सु | अधि० |

हेविश्वाराट्-इ हेविश्वराजौ हे विश्वराजः सम्बो०

[२५१] जान्त-पुंल्लिङ्गो 'भृज्' शब्दः (मूजा मूजने वाला)

| | | | | |
|-------|---------|------------|---------|---------|
| प्र० | भृट्-इ | भृज्जौ | भृज्जः | कर्त्ता |
| द्वि० | भृज्जम् | भृज्जौ | भृज्जः | कर्म |
| तृ० | भृज्जा | भृज्भ्याम् | भृज्भिः | करण |

(१) विश्वस्मिन् राजते इति विभ्राट् । 'सत्सूद्धिषे'ति किपि उपपदसमासे 'विश्व-
 राज्' शब्दः । तस्मात्सौ हल्परत्वात्तस्य लोपे 'व्रश्चे'ति षत्वे जश्त्वे चत्वे च 'विश्वस्य
 चसुराटोः' इति दीर्घः । 'राट्' इति चत्वेनिर्देशस्य पदान्तत्वोपलक्षणत्वात् जश्त्व-
 पक्षेऽपि दीर्घः । एवं भ्यामादौ हल्यपि बोध्यम् । (२) 'ढः सि धुट्' इति विशेषः ।
 (३) भृज्जतीति भृट् । 'भ्रस्ज पाके' अस्मात् किपि 'प्रहिज्ये'ति सम्प्रसारणे पूर्व-
 रूपे 'भृज्ज्' शब्दः । तस्मात् सौ हल्परत्वात्तस्य लोपे 'स्कोरि'ति सलोत्थे च
 व्रश्चे'ति षत्वे जश्त्वचत्वे । (४) निमित्ताभावात् 'स्कोरि'त्यस्याप्राप्त्या 'क्षला जश्
 मसि' इति प्रबाध्य क्षत्वम् । (५) भ्यामादौ हलि तु पदत्वात् सलोपे षत्वे जत्वम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|------------|------------|---------------|---------|
| च० | भृज्जे | भृङ्भ्याम् | भृङ्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | भृजः | भृङ्भ्याम् | भृङ्भ्यः | अपा० |
| ष० | भृज्जः | भृज्जोः | भृजाम् | सम्ब० |
| ल० | भृज्जि | भृज्जोः | भृङ्सु-भृङ्सु | अधि० |
| | हे भृङ्-ङ् | हे भृङ्जौ | हे भृज्जः | सम्बो० |

[२५२] जान्त-पुंल्लिङ्गः 'ऋत्विज्' शब्दः (पुरोहित)

| | | | | |
|-------|---------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | ऋत्विक्-ग् | ऋत्विजौ | ऋत्विजः | कर्त्ता |
| द्वि० | ऋत्विजम् | ऋत्विजौ | ऋत्विजः | कर्म |
| तृ० | ऋत्विजा | ऋत्विग्भ्याम् | ऋत्विग्भिः | करण |
| च० | ऋत्विजे | ऋत्विग्भ्याम् | ऋत्विग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | ऋत्विजः | ऋत्विग्भ्याम् | ऋत्विग्भ्यः | अपा० |
| ष० | ऋत्विजः | ऋत्विजोः | ऋत्विजाम् | सम्ब० |
| ल० | ऋत्विजि | ऋत्विजोः | ऋत्विंक्षु | अधि० |
| | हे ऋत्विक्-ग् | हे ऋत्विजौ | हे ऋत्विजः | सम्बो० |

एवं बलिभुज् (काक), हुतभुज् (अग्नि), भृतिभुज् (भृत्य-नौ-कर), भूभुज् (राजा), भिषज् (वैद्य) इत्यादयो जान्ताः ।

[२५३] जान्त-पुंल्लिङ्गः 'ऊर्ज' शब्दः (बलवान्)

(१) धुञ्जि विभोषः । (२) 'ऋ गतौ' अस्मात् औणादिकसूत्रेण तुः । ऋतुः = गमनं, प्राप्तिः, दक्षिणाद्रव्यलाभो विवक्षितः । तस्मिन्निति यजन्ति = यज्ञव्यापारं कुर्वन्तीत्यर्थे ऋताद्युपपदे यज् धातोः क्तिनि, 'वचिस्वपी'ति सम्प्रसारणे पूर्वरूपे यणि 'ऋत्विज्' शब्दः । तस्मात् सौ हलङ्यादिलोपे 'व्रश्वे'ति षत्वं प्रनाध्य 'क्तिन्प्रत्ययस्ये'ति कृत्वे चर्त्वंम् । (३) भ्यामादौ हलि पदत्वात् षत्वे जश्त्वम् । (४) सुपि तु स्वर्परत्वेन चर्त्वं 'आदेशः प्रत्यययोः' इति षवमिति विशेषः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | ऊर्क-ग् | ऊर्जौ | ऊर्जः | कर्ता |
| द्वि० | ऊर्जम् | ऊर्जौ | ऊर्जः | कर्म |
| तृ० | ऊर्जा | ऊर्ग्भ्याम् | ऊर्गिभः | करण |
| च० | ऊर्जे | ऊर्ग्भ्याम् | ऊर्ग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | ऊर्जः | ऊर्ग्भ्याम् | ऊर्ग्भ्यः | अपा० |
| ष० | ऊर्जः | ऊर्जौ | ऊर्जाम् | सम्ब० |
| स० | ऊर्जि | ऊर्जोः | ऊर्जुः | अधि० |
| | हे ऊर्क-ग् | हे ऊर्जौ | हे ऊर्जः | सम्बो० |

[२५४] दकारान्त-पुंल्लिङ्गः सर्वनाम 'त्यद्' शब्दः (वह)

| | स्यः | त्वौ | त्ये | कर्ता |
|-------|--------------|------------|----------|---------|
| प्र० | त्यम् | त्यौ | त्यान् | कर्म |
| द्वि० | त्येन | त्याभ्याम् | त्यैः | करण |
| तृ० | त्यस्मै | त्याभ्याम् | त्येभ्यः | सम्प्र० |
| च० | त्यस्मात्-द् | त्याभ्याम् | त्येभ्यः | अपा० |
| पं० | त्यस्य | त्ययोः | त्येषाम् | सम्ब० |
| ष० | त्यस्मिन् | त्ययोः | त्येषु | अधि० |

(त्यदादेः सम्बोधनं नास्ति, प्रचुरप्रयोगाभावात्)

[२५५] दकारान्त-पुंल्लिङ्गः सर्वनाम 'तद्' शब्दः (वह)

| | सः | तौ | ते | कर्ता |
|------|----|----|----|-------|
| प्र० | | | | |

(१) 'ऊर्जं बलप्राणनयोः' अस्मात् चुरादिष्यन्तात् 'भ्राजभासे'त्यादिसूत्रेण क्विपि णिलोपे ऊर्ज् शब्दः । तस्मात् सौ तस्य हल्परत्वात् लोपे 'चोः कुः' कुत्वे चर्त्वम् । 'न पदान्ते'ति निषेधात् कुत्वे कर्त्तव्ये णिलोपस्य स्थानिवत्त्वन्नेति भावः । (२) भ्यामादौ ऋत्विज्त्वत् कार्यं बोध्यम् । (३) 'त्यदादीनामः' इत्यत्वे पररूपे 'तदोः सः सावनन्त्ययोः' इति सत्त्वे स्त्वविचगौ । (४) अत्वे पररूपे वृद्धिः, सत्त्वन्तु न सूत्रे सावित्युक्तेः । (५) 'जसः शी' इति सर्वनामप्रयुक्तकार्यं सर्वशब्दवत् एवमन्यत्राऽप्युक्तम् । (६) 'त्यद्' शब्दवत् कार्यं बोध्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------|----------|--------|---------|
| द्वि० | तम् | तौ | तान् | कर्म |
| तृ० | तेन | ताभ्याम् | तैः | करण |
| च० | तस्मै | ताभ्याम् | तेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | तस्मात्-द् | ताभ्याम् | तेभ्यः | अपा० |
| ष० | तस्य | तयोः | तेषाम् | सम्ब० |
| स० | तस्मिन् | तयोः | तेषु | अधि० |
| | ० | ० | ० | ० |

एवं परमसः परमतौ परमते इत्यादि ।

[२५६] दकारान्त-पुंल्लिङ्गः सर्वनाम 'यद्' शब्दः (जो)

| | | | | |
|-------|------------|----------|--------|---------|
| प्र० | यः | यौ | ये | कर्ता |
| द्वि० | यम् | यौ | यान् | कर्म |
| तृ० | येन | याभ्याम् | यैः | करण |
| च० | यस्मै | याभ्याम् | येभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | यस्मात्-द् | याभ्याम् | येभ्यः | अपा० |
| ष० | यस्य | ययोः | येषाम् | सम्ब० |
| स० | यस्मिन् | ययोः | येषु | अधि० |
| | ० | ० | ० | ० |

[२५७] दकारान्त-पुंल्लिङ्गः सर्वनाम 'एतद्' शब्दः

(यह-अतिशय समीप में)

| | | | | |
|-------|----------------|--------------|------------------|-------|
| प्र० | एषः | एतौ | एते | कर्ता |
| द्वि० | { एतम् एनम् | { एतौ एनौ | { एतान् एनान् | कर्म० |

(१) अत्वादीनामाऽऽङ्गत्वात् 'पदाङ्गाधिकारे' इति परिभाषया तदन्तेऽपि प्रकृत्या 'त्यत्' शब्दवत् कार्यं ज्ञेयम् । (२) अत्वे पररूपे सर्वशब्दवत् 'त्यद्' शब्देऽपि कार्यं ज्ञेयम् । (३) अत्वे पररूपे 'तदोः सः' इति सत्वे षत्वम्, अन्यत् कार्यं सर्वशब्दवत् । केवलमन्वादेशे 'द्वितीयाटौस्त्वेनः' इति विशेषः ।

एकवचन

द्विवचन

बहुवचन

| | | | | |
|-----|----------------|------------------|---------|---------|
| तृ० | { एतेन एनेन | एताभ्याम् | एतैः | करण |
| च० | एतस्मै | एताभ्याम् | एतेभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | एतस्मात्-द् | एताभ्याम् | एतेभ्यः | अपा० |
| ष० | एतस्य | { एतयोः एनयोः | एतेषाम् | सम्ब० |
| स० | एतस्मिन् | { एतयोः एनयोः | एतेषु | अधि० |
| | ० | ० | ० | ० |

[२५८] त्रिषु लिङ्गेषु समानः सर्वनाम 'युष्मद्' शब्दः (तू, तुम्)

प्र० त्वम् युवाम् यूयम् कर्त्ता

(१) 'हे प्रथमयोरम्' इत्यमि 'त्वाहौ सौ' इति मपर्यन्तस्य त्वादेशे 'शेषे लोपः' इति अन्त्यलोपे च । 'अतो गुणे' । अमि पूर्वः । अत्वन्तु न द्विपर्यन्तानामित्युक्तत्वात् । नच स्त्रीत्वविवक्षायां 'त्वं स्त्री' अहं स्त्री' इत्यादौ परमपि 'अमि पूर्वः' इति सूत्रं बाधित्वा अन्तरङ्गत्वाद्वाप् स्यादिति वाच्यम्, "अलिङ्गे युष्मदस्मदी" इति भाष्येण युष्मदस्मच्छब्दस्य लिङ्गाऽभावादिति केचित् । सिद्धान्तितन्तु- 'विवक्षातः कारकाणि भवन्ति' इति सिद्धान्तात् 'शेषे' इत्यत्र स्थानिनः=विधातव्यायां स्थानषष्ठ्यामधिकरणत्वविवक्षया सप्तमीविधानेऽपि शेषस्य स्थाने इत्यर्थलाभेन मपर्यन्ताच्छेषस्य ('अद्' इत्यस्य) लोपः इत्यर्थात् त्वादेशोत्तर मन्तरङ्गत्वात्पररूपे टिलोपे अदन्तत्वाऽभावात् टाविति । अत एव "नपुंसकादेशेभ्यो विभक्त्यादेशाः पूर्वविप्रतिषेधेन" इति भाष्यवार्तिकं सङ्गच्छते । युष्मदस्मच्छब्दस्याऽलिङ्गत्वे तु नपुंसकविहितानां शी-शि-लुङ्-नुमादीनामप्राप्त्या तदसङ्गतिः स्पष्टैव । "अलिङ्गे युष्मदस्मदी" इति भाष्यन्तु-पदान्तरसमभिव्याहारं विना लिङ्गविशेषो युष्मदस्मच्छब्दाभ्यां न प्रतीयते इत्यर्थाऽभिप्रायिकमित्वाहुः । (२) अमि 'युवावौ द्विवचने' इति युवादेशे 'प्रथमायाश्चे'ति दकारस्य आत्वे पररूपे दीर्घे पूर्वरूपम् । (३) अमि 'यूयवयौ जसि' इति यूयादेशे पररूपे अदो

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------------------|----------------------|--------------------|-----------|
| द्वि० | { त्वाम् (त्वा*) | युवाम् (माम्) | युष्मान् (वः) | कर्म |
| तृ० | त्वय्य | युवाभ्याम् | युष्माभिः | करण |
| च० | { तुभ्यम् (ते) | युवाभ्याम् (वाम्) | युष्मभ्यम् (वः) | सम्प्र० |
| पं० | त्वत् | युवाभ्याम् | युष्मत् | मपा० |
| ष० | { त्वं (ते) | युवयोः (वाम्) | युष्माकम् (वः) | सम्ब० |
| स० | त्वयि ० | युवयोः ० | युष्मासु ० | अधि० ० |

[२५९] त्रिषु लिङ्गेषु समानः सर्वनाम 'अस्मद्' शब्दः (मै, इम)

| | | | | |
|-------|-----------------|---------------|-----------------|-------|
| प्र० | अहम् | आवाम् | वयम् | कर्ता |
| द्वि० | { माम् (मा*) | आवाम् (नौ) | अस्मान् (नः) | कर्म |

(१) 'त्वमावेकवचने' इति त्वादेशे 'द्वितीयायां च' इत्यात्वे पररूपे दीर्घे पूर्व रूपम् । (२) 'द्वितीयायां च' इत्यात्वे 'शसो नः' । संयोगान्तलोपः । (३) त्वादेशे 'योऽचि' इति दकारस्य यत्वे पररूपम् । (४) युवादेशे 'युष्मदस्मदोरनादेशे' इति दकारस्यात्वे सवर्णदीर्घः । (५) 'तुभ्यमहौ वयि' । 'हे प्रथमयोरम्' । 'शेषे लोपः' । (६) 'भ्यसोभ्यम्' इत्यत्र भ्यम्-अभ्यमिति वा छेदः । ततश्च भ्यसः भ्यमादेशे अन्त्यलोपे पररूपम्, अदन्तत्वात् एत्वन्तु न अङ्गवृत्तपरि-शाषाविरोधात् । अभ्यमादेशे तु अन्त्यलोपपक्षे झल्परत्वाभावात्, टिलोपपक्षे अदन्तत्वाभावाच्चेत्युभयपक्षेऽपि एत्वस्य प्रवृत्तिर्नेति भावः । (७) त्वादेशे 'एकवचनस्य च' इत्यदादेशे पररूपे टिलोपः । (८) 'पञ्चम्या अत्' । टिलोपः । (९) 'तवममौ वसि' इति त्वादेशे 'दुष्मदस्मद्भ्यां वसोऽश्' इत्यशादेशे पररूपे टिलोपः । (१०) युवादेशे 'योऽचि' इति यत्वे पररूपम् । (११) अस्माकमिति वत् (१२) त्वादेशे यत्वे पररूपम् । (१३) 'युष्मदस्मदोरिति आत्वे सवर्णदीर्घः । (१४) युष्मच्छब्दवत् । (*) समानाधिकरणाऽऽमन्त्रितसंज्ञकविशेषणपरकं यत्

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----|------------------|-----------------|--------------------|---------|
| १० | मया | आवाभ्याम् | अस्मामिः | करण |
| २० | { मह्यम् (मे) | आवाभ्याम् | अस्मभ्यम् | सम्प्र० |
| ३० | मत् | आवाभ्याम् | अस्मत् | अपा० |
| ४० | { मम (मे) | आवयोः (नौ) | अस्माकम् (नः) | सम्ब० |

विशेष्यपदं तदतरिक्तं यत् सम्बोधनप्रथमान्तं तद् भिन्नपदात् चाक्षुषज्ञानाऽति-
रिक्तज्ञानसामान्यार्थक-धातुप्रकृतिक-तिङन्तभिन्न-तिङन्तैकघटितवाक्यस्थात् पर-
योः समानवाक्यस्थयोः अपादादिस्थयोः श्रूयमाण-षष्ठी-चतुर्थ्यैकवचनान्तयोः
ते-मे-आदेशौ । श्रूयमाणद्वितीयैकवचनान्तयोश्च त्वा-माऽऽदेशौ । श्रूयमाण-षष्ठी-
चतुर्थी-द्वितीया-द्विवचनान्तयोश्च वाम्-नौ-आदेशौ । श्रूयमाण-षष्ठी-चतुर्थी-
द्वितीया-बहुवचनान्तयोश्च वस्-नस्-आदेशावित्येते आदेशाः क्रमशो विकल्पात्
भवन्ति । च-वा-हा-अह-एव-इत्येतत् पश्चान्यतमाऽव्ययार्थेन युष्मदस्मदर्थयोः सा-
मादसम्बन्धे सति अन्वादेशे, अन्वादेशे तु नित्यमेव, किन्तु किञ्चित्पदपूर्वकप्रथ-
मान्तपरयोः, समानाधिकरणामन्त्रितसंज्ञकविशेषणपरकबहुवचनान्तपरयोश्च तथा-
विधयोरन्वादेशेऽपि वा भवन्ति इति 'षष्ठी-चतुर्थी' इत्यादिप्रभृत्तिद्वादशसूत्राणां
सवार्तिकानां निर्गलितोऽर्थः । उदाहरणानि यथा—'श्रीशस्त्वाऽवतु मा पीह'
इत्यत्र त्वाम्-माम्-इति, 'दत्ताते मेऽपि शर्म सः' इत्यत्र तुभ्यं मह्यम्-इति च,
'स्वामी ते मेऽपि स हरिः' इत्यत्र तव-मम इति च, 'पातु वामपि नौ विभुः'
इह युवाम्-आवाम्-इति च, 'सुखं वा नौ ददात्वीशः' इह युवाभ्याम्-आ-
वाभ्याम् इति च, 'पतिर्वामपि नौ विभुः' इह युवयोः-आवयोः इति च, 'सो-
ऽव्याहो नः' इह युष्मान्-अस्मानिति च, 'शिवं वो नो दद्यात्' इह युष्मभ्यम्-
अस्मभ्यमिति च, 'सेव्योऽत्र वः सनः' इह युष्माकम्-अस्माकमिति च क्रमशः
प्रतिवाक्यं प्राप्नुवन्ति, तेषां स्थाने उक्ता आदेशाः ज्ञेयाः । सूत्रार्थनिविष्टोदाह-
रणानि विस्तरमिष्या न लिख्यन्ते इति स्वयमेव परममूले द्रष्टव्यानि । (१)
'साम आकम्' इत्याकमादेशे अन्त्यलोपे च सवर्णदीर्घः । नन्वन्त्यलोपविधाने
प्रवर्तमानः सुट्, अन्त्यलोपश्च आकमादेशे सति अनादेशविभक्तिविरहात् 'युष्म-

| | | | | |
|---------|--|-----------|-----------|-------|
| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| सू० | मयि | आवयोः | अस्मासु | अधि० |
| | ० | ० | ० | ० |
| [२५९] | त्वामतिक्रान्तः, अतिक्रान्तौ, अतिक्रान्ताः, वा इति विग्रहे | | | |
| | निष्पन्न 'अतियुष्मद्' शब्दः (तुमको अपनाने वाला-वाले) | | | |
| प्र० | अतित्वम् | अतित्वाम् | अतियुयम् | कर्ता |
| द्वि० | अतित्वाम् | अतित्वाम् | अतित्वान् | कर्म० |

दस्मदोरनादेशे' इति सूत्राऽप्रवृत्तिषहकारेणात्वनिमित्तेतरत्वरूपशेषत्वमादधानः प्रवृत्तौ ? आकमादेशश्च सुटि सत्येव साम्त्वसम्पत्त्याऽऽत्मानं कृतार्थयेत्, सुट् चान्त्यलोप एव प्रवृत्तः स्यादिति स्वग्रहसापेक्षग्रहसापेक्षग्रहसापेक्षग्रहविषयत्वरूपचक्रकत्वाऽपातात् कार्याऽप्रवृत्त्या सामोऽभावात् 'साम आकम्' इति सूत्रवैयर्थ्यमिति चेन्न, शब्दाऽनित्यत्वभिया स्यान्त्यादेशभावस्थले स्थानिवुद्धौ ह्यादेशबुद्धिर्विधीयते इति सिद्धान्तात् प्रकृते आम्बुद्धेः साम्प्रतिकत्वेन, स्थानिघटकसकारविषयकभाविवुद्धिः आदायाऽऽकमादेशप्रवृत्तेः । नचाकमादेशोऽन्त्यलोपे च स्यानिवत्त्वेन सामः आम्त्यात् सुट्प्रवृत्तिर्दुर्वारैवेति वाच्यम्, सुट्श्रवणाऽभावायैव स्थानिकोटौ सकारविशेषणेन स्थानिकोटिप्रविष्टाश्रवणस्य स्वभावसिद्धत्वात् । इतरथा ससुट्कनिर्देशवैयर्थ्यापत्तेः । (१) 'त्वमावेकवचने' इति सूत्रघटकैकवचनपदस्य यौगिकत्वेन एकं वक्तोत्येकवचनम् इत्यर्थे सम्पद्यमाने एकत्वसंख्याऽभिधायि 'युष्मद्'-अस्मद्-शब्दयोः यथा यथं त्वमादेशौ भवतः, तथाच युष्मद्-अस्मद्-अर्थगतैकत्वसंख्यामात्रमपेक्षते । तेन समस्ताऽतियुष्मच्छब्दप्रतिपाद्याऽर्थगतद्वित्वादिसंख्याया द्विवचनाद्यानयनेऽपि समस्तपदघटकयुष्मच्छब्दार्थगतैकत्वसंख्यायाः सत्त्वेन एकत्वाऽभिधायियुष्मच्छब्दस्य तद्घटकस्य मपर्यन्तस्य त्वादेशो भवत्येवेति । एवं मामतिक्रान्तः, अतिक्रान्तौ अतिक्रान्ता, वेति विग्रहे निष्पन्नात्यस्मच्छब्देऽप्युच्यम् । एवञ्च सु-जस्-हे-डस्-विभक्तौर्विहाय सर्वासु विभक्तिषु मपर्यन्तस्य अतियुष्मच्छब्दघटकमपर्यन्तयुष्मच्छब्दस्य त्वादेशः, अत्यस्मच्छब्दघटकमपर्यन्ताऽस्मच्छब्दस्य च मादेशो बोध्यः । नच सु-जस्-हे-डस्स्वपि त्वमादेशौ कृतो नेति वाच्यम्, 'विप्रतिषेधे' इति सूत्रघटकपरशब्दस्येष्टाचित्त्वेन पूर्वेषां त्वाहादीनां त्वमादेशवाधकत्वात् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----|-------------|---------------|-------------|---------|
| ५० | अतिव्या | अतिव्याभ्याम् | अतिव्याभिः | करण |
| ६० | अतितुभ्यम् | अतित्वाभ्याम् | अतित्वभ्यम् | सम्प्र० |
| ७० | अतित्वत् | अतित्वाभ्याम् | अतित्वत् | अपा० |
| ८० | अतितव | अतित्वयोः | अतित्वाकम् | सम्ब० |
| ९० | अतित्वयि | अतित्वयोः | अतित्वास्तु | आधि० |
| | हे अतित्वम् | हे अतित्वाम् | हे अतियुयम् | सम्बो० |

[२६०] युवाम्, अतिक्रान्तः, अतिक्रान्तौ, अतिक्रान्ताः, वा इति विग्रहे निष्पन्नः 'अतियुष्मद्' शब्दः (तुम दोनों को अपनाने वाला-वाले)

(१) नन्विह अतियुष्मच्छब्दघटक 'युष्मद्' शब्दस्य उपसर्जनत्वेन सर्वादि-विकिरहात् तदन्तस्य सर्वनामत्वाभावेन सर्वनाम्नो विहितस्यैवाऽऽमः सुटो विधा-त् प्रकृतेः सुट्सम्भावनाया अपि नितरामनुपलम्भात् कथं 'साम आकम्' इति सूत्रप्रवृत्तिरिति चेन्न, 'अतित्वाकम्' इत्यस्य भाष्यकृता प्रदर्शितत्वेन यत्र सुट् स-भविता तदर्थं ससुट्कनिर्देशः, यत्र च न भविता तत्र च केवलस्याम आकमादे-स्य ससुट्कनिर्देशेन कल्पनादिति दिक् । (२) अतियुष्मदादिशब्दस्य यतिक-त्वे व्यक्तबोधकत्वेन तदर्थस्य प्रवृत्त्यभिमुखीकरणरूपसम्बोधने बाधकाभावात् सम्बोधनेऽपि रूपाणि भवन्तीति भावः । (३) 'युवावौ द्विवचने' इति सूत्रघटक द्विवचनपदस्य यौगिकत्वेन द्वित्वं वचीति व्युत्पत्त्या द्वित्वसंख्यामात्रबोधकत्वं 'युष्मद्' अस्मद्' शब्दयोरपेक्षते नतु द्विवचनविभक्तिपरत्वं तथा च-द्वित्वसंख्यामिधायि-युष्मदस्मच्छब्दयोर्यथायथं युवावादेशौ भवत इति सूत्रार्थः सम्पद्यते । तेनोक्त-प्रहेण निष्पन्न 'अतियुष्मद्' शब्दस्य एकत्वादिसंख्याविशिष्ट-युष्मत्कर्मकाऽति-कर्मणकर्तृत्वार्थस्य बोधकत्वेऽपि समस्तपदघटकयुष्मच्छब्दस्य द्वित्वसंख्याबोधक-त्वेन मपर्यन्तस्य युवादेशो भवत्येव सु-जस्-हे-वसितरविभक्तिषु । सु-जस्-हे-सु तु परत्वेन युवाऽऽवादेशयो स्त्वादिभिर्वाधः । न च समस्तपदघटकयुष्मच्छ-ब्दस्य वैयाकरणमते गौणार्थबोधकत्वेन मुख्ये एव कार्यं प्रवृत्त्या कथमिहादेश इति वाच्यम्, विभक्तिनिमित्तकत्वेन पदकार्यत्वाभावेन गौणमुख्यन्यायाऽप्रवृत्त्या तथा बोधनाऽसम्भवात् एवम् 'अत्यस्मच्छब्देऽपि सर्वम्बोध्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | अतित्वम् | अतियुवाम् | अतियूयम् | कर्ता |
| द्वि० | अतियुवाम् | अतियुवाम् | अतियुवान् | कर्म |
| तृ० | अतियुवया | अतियुवाभ्याम् | अतियुवाभिः | करण |
| च० | अतितुभ्यम् | अतियुवाभ्याम् | अतियुवभ्यम् | सम्प्र० |
| पं० | अतियुवत् | अतियुवाभ्याम् | अतियुवत् | अपा० |
| ष० | अतितव | अतियुवयोः | अतियुवाकम् | सम्ब० |
| स० | अतियुवयि | अतियुवयोः | अतियुवासु | अधि० |
| | हे अतित्वम् | हे अतियुवाम् | हे अतियूयम् | सम्ब० |

[२६१] युष्मान् अतिक्रान्तः, अतिक्रान्तौ, अतिक्रान्ताः वा इत वि-
प्रहे निष्पन्नः 'अतियुष्मद्' शब्दः (तुम सबको अपनाने वाला-वाले)

प्र० अतित्वम् अतियुष्माम् अतियूयम् कर्ता

(१) उक्तविग्रहनिष्पन्नातियुष्मच्छब्दस्य सु-जस्-हे-हस्सु त्वाद्यादेशाः भव-
न्ति, यतस्तेषामेकत्व-द्वित्वसंख्यानिबन्धनत्वाभावात्, त्वाद्यादेशौ तु न भवितुं श-
क्नुतः समस्तपदघटकयुष्मच्छब्दस्य बहुत्वार्थबोधकत्वेन 'त्वमावेकवचने, 'युवावी
द्विवचने' इत्यनयोरप्रवृत्तेः। एवम् 'अत्यस्मद्' शब्देऽपि बोध्यम् । इति पूर्वोक्तसूत्रद्व-
यव्याख्यानसरणिमनुसृत्यैवोक्तं परममूले "समस्यमाने" इत्यादिना । तच्छब्दार्थ-
स्तु-समासेच्छयोच्चरितयुष्मदस्मच्छब्दौ यद्येकत्वसंख्यावाचिनौ प्राभविष्यतां तदा
यथायथं त्वमादेशौ प्रावतिष्येताम्, एवं समासेच्छयोच्चरितयुष्मदस्मच्छब्दौ द्वित्व-
संख्याविशिष्टबोधकौ तदा युवावादेशौ बोध्यौ समस्तार्थगतसंख्या त्वमादेशस्थल्यो
द्वित्वादिका, युवावादेशस्थल्योश्चैकत्वादिका वा तदापि । परन्तु सु-जस्-हे-हस्सु
परतः सदैव त्वमादेशौ पूर्वविप्रतिषेधेन, युवावादेशौ च परविप्रतिषेधेन, त्व-मह-
यूय-वय-तुभ्य-मह्य-तव-ममादेशाः प्रवाध्य प्रवर्तन्ते । युष्मानस्मान्वातिक्रान्त
इति विग्रहे तु युष्मदर्थगतबहुत्वसंख्यासत्त्वेन समस्तार्थगतैकत्वसंख्ययैकवचनाया-
नयनेऽपि त्व-म-युवावादेशाः न प्रवर्तन्, तत्र युष्मदस्मदर्थगतैकत्वद्वित्वसं-
ख्ययोः क्रमशोऽभावादिति दिक् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------|-----------------|--------------|---------|
| द्वि० | अतियुष्माम् | अतियुष्माम् | अतियुष्मान् | कर्म |
| तृ० | अतियुष्मया | अतियुष्माभ्याम् | अतियुष्माभिः | करण |
| च० | अतितुभ्यम् | अतियुष्माभ्याम् | अतियुष्माभिः | सम्प्र० |
| पं० | अतियुष्मत् | अतियुष्माभ्याम् | अतियुष्मत् | अपा० |
| ष० | अतितव | अतियुष्मयोः | अतियुष्माकम् | सम्ब० |
| स० | अतियुष्मयि | अतियुष्मयोः | अतियुष्मासु | अधि० |
| | हे अतित्वम् | हे अतियुष्माम् | हे अतियूयम् | सम्बो० |

[२६२] माम्, अतिक्रान्तः, अतिक्रान्तौ, अतिक्रान्ताः, वा इति विप्रहे निष्पन्नः 'अत्यस्मद्' शब्दः (हमको अपनाने वाला-वाले)

| | | | | |
|-------|------------|-------------|------------|---------|
| प्र० | अत्यहम् | अतिमाम् | अतिवयम् | कर्ता |
| द्वि० | अतिमाम् | अतिमाम् | अतित्वान् | कर्म |
| तृ० | अतिमया | अतिमाभ्याम् | अतिमाभिः | करण |
| च० | अतितुभ्यम् | अतिमाभ्याम् | अतिमाभिः | सम्प्र० |
| पं० | अतिमत् | अतिमाभ्याम् | अतिमत् | अपा० |
| ष० | अतिमम | अतिमयोः | अतिमाकम् | सम्ब० |
| स० | अतिमयि | अतिमयोः | अतिमासु | अधि० |
| | हे अत्यहम् | हे अतिमाम् | हे अतिवयम् | सम्बो० |

[२६३] आवाम्, अतिक्रान्तः, अतिक्रान्तौ, 'अतिक्रान्ताः वा इति विप्रहे निष्पन्नः 'अत्यस्मद्' शब्दः (हम दोनों को अपनाने वाला-वाले)

| | | | | |
|-------|-----------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | अत्यहम् | अत्यावाम् | अतिवयम् | कर्ता |
| द्वि० | अत्यावाम् | अत्यावाम् | अत्यावान् | कर्म |
| तृ० | अत्यावया | अत्यावाभ्याम् | अत्यावाभिः | करण |
| च० | अतिमह्यम् | अत्यावाभ्याम् | अत्यावभ्यम् | सम्प्र० |

(१) त्वामतिक्रान्त इत्यादिविप्रहनिष्पन्नाऽतियुष्मच्छन्दरीत्या व्याख्यानमूहनीयम् । (२) युवामतिक्रान्त इत्यादिस्थलीयव्याख्यावत् व्याख्येयम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|------------|---------------|------------|--------|
| पं० | अत्यावत् | अत्यावाभ्याम् | अत्यावत् | अपा० |
| ष० | अतिमम | अत्यावयोः | अत्यावाकम् | सम्ब० |
| स० | अत्यावयि | अत्यावयोः | अत्यावासु | अधि० |
| | हे अत्यहम् | हे अत्यावाम् | हे अतिवयम् | सम्बो० |

[२६४] अस्मान् , अतिक्रान्तः, अतिक्रान्तौ, अतिक्रान्ताः, वा इति विप्रहे निष्पन्नः 'अत्यस्मद्' शब्दः (हम सबको अपनाने वाला-वाले)

| | | | | |
|-------|-------------|----------------|--------------|---------|
| प्र० | अतित्वम् | अत्यस्माम् | अतिवयम् | कर्त्ता |
| द्वि० | अत्यस्माम् | अत्यस्माम् | अत्यस्मान् | कर्म |
| तृ० | अत्यस्मया | अत्यस्माभ्याम् | अत्यस्माभिः | करण |
| च० | अतिमह्यम् | अत्यस्माभ्याम् | अत्यस्मभ्यम् | सम्प्र० |
| पं० | अत्यस्मत् | अत्यस्माभ्याम् | अत्यस्मत् | अपा० |
| ष० | अतिमम | अत्यस्मयोः | अत्यस्माकम् | सम्ब० |
| स० | अत्यस्मयि | अत्यस्मयोः | अत्यस्मासु | अधि० |
| | हे अतित्वम् | हे अत्यस्माम् | हे अतिवयम् | सम्बो० |

[२६५] दकारान्त-पुंलिङ्गः 'सुपाद्' शब्दः (सुन्दर पैर वाला)

| | | | | |
|-------|--------------|------------|-----------|---------|
| प्र० | सुपात्-द् | सुपादौ | सुपादः | कर्त्ता |
| द्वि० | सुपादम् | सुपादौ | सुपादः | कर्म |
| तृ० | सुपादा | सुपाद्याम् | सुपाद्भिः | करण |
| च० | सुपादे | सुपाद्याम् | सुपाद्भिः | सम्प्र० |
| पं० | सुपादः | सुपाद्याम् | सुपाद्भिः | अपा० |
| ष० | सुपादः | सुपादोः | सुपादाम् | सम्ब० |
| स० | सुपादि | सुपादोः | सुपात्सु | अधि० |
| | हे सुपात्-द् | हे सुपादौ | हे सुपादः | सम्बो० |

(१) युष्मानतिक्रान्त इत्यादि विप्रहस्थलीयव्याख्यानरीत्या बोध्यम् । (२)
सु=शोभनौ पादौ यस्येति बहुव्रीहिः 'संख्यासुपूर्वस्ये'ति पादस्यान्तलोपः । (३)
'पादः पत्' ।

[२६६] धान्त-पुंल्लिङ्गः 'अग्निमथ्' शब्दः (अग्निको मथन करने वाला)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | अग्निमत्-द् | अग्निमथौ | अग्निमथः | कर्त्ता |
| द्वि० | अग्निमथम् | अग्निमथौ | अग्निमथः | कर्म |
| तृ० | अग्निमथा | अग्निमथ्याम् | अग्निमथिः | करण |
| च० | अग्निमथे | अग्निमथ्याम् | अग्निमथ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अग्निमथः | अग्निमथ्याम् | अग्निमथ्यः | अपा० |
| ष० | अग्निमथः | अग्निमथोः | अग्निमथाम् | सम्ब० |
| स० | अग्निमथि | अग्निमथोः | अग्निमत्सु | अधि० |
| | हे अग्निमत्-द् | हे अग्निमथौ | हे अग्निमथः | सम्बो० |

[२६७] गतौ 'प्राञ्च्' शब्दश्चकारान्तः (पूर्व)

| | प्राञ्च् | प्राञ्चौ | प्राञ्चः | कर्त्ता |
|-------|-------------|--------------|-------------|---------|
| प्र० | प्राञ्च् | प्राञ्चौ | प्राञ्चः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्राञ्चम् | प्राञ्चौ | प्राञ्चः | कर्म |
| तृ० | प्राञ्चा | प्राञ्च्याम् | प्राञ्चिः | करण |
| च० | प्राञ्चे | प्राञ्च्याम् | प्राञ्च्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्राञ्चः | प्राञ्च्याम् | प्राञ्च्यः | अपा० |
| ष० | प्राञ्चः | प्राञ्चोः | प्राञ्चाम् | सम्ब० |
| स० | प्राञ्चि | प्राञ्चोः | प्राञ्चु | अधि० |
| | हे प्राञ्च् | हे प्राञ्चौ | हे प्राञ्चः | सम्बो० |

[२६८] गतौ 'प्रत्यञ्च्' शब्दश्चकारान्तः (पश्चिम्)

(१) अग्निं मन्थतीति 'अग्निवत्' । मथ्नातिर्मन्थतेश्च क्विपि 'अनिदितामि'ति नलोपः । (२) 'स्वादिद्विगति पदत्वात् जडत्वम् । (३) प्र-अम्यतीत्यर्थे 'अञ्चुगति-पूजनयोः' इति गत्यर्थकात् अञ्च्धातोः 'ऋद्विगित्यादिसु त्रेण क्विन् तस्य सर्वापहारे 'अनिदितामि'ति नलोपे चवर्णदीर्घे तुमि संयोगान्तलो-नस्य कृत्वेन उकारः । (४) अनुस्वारपरसवर्णौ । (५) शसादावचि भत्वात् 'अचः' इत्यन्लोपे 'चौ' इति दीर्घः । (६) पदत्वात् 'चो कृः' इति कृत्वे जडत्वम्

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------|----------------|---------------|---------|
| प्र० | प्रत्यङ् | प्रत्यञ्चौ | प्रत्यञ्चः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्रत्यञ्चम् | प्रत्यञ्चौ | प्रचीचः | कर्म |
| तृ० | प्रतीचा | प्रत्यग्भ्याम् | प्रत्यग्भिः | करण |
| च० | प्रतीचे | प्रत्यग्भ्याम् | प्रत्यग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्रतीचः | प्रत्यग्भ्याम् | प्रत्यग्भ्यः | अपा० |
| ष० | प्रतीचः | प्रतीचोः | प्रतीचाम् | सम्ब० |
| स० | प्रतीचि | प्रतीचोः | प्रत्यक्षु | अधि० |
| | हे प्रत्यङ् | हे प्रत्यञ्चौ | हे प्रत्यञ्चः | सम्बो० |

[२६९] चकारान्त-पुंलिङ्गः गतौ-‘अमुमुयञ्च्’ शब्दः

(यह प्राप्त करने वाला)

| | | | | |
|-------|-------------|------------|------------|---------|
| प्र० | अमुमुयङ् | अमुमुयञ्चौ | अमुमुयञ्चः | कर्त्ता |
| द्वि० | अमुमुयञ्चम् | अमुमुयञ्चौ | अमुमुईचः | कर्म |

(१) प्रतिपूर्वकात् गत्यर्थकाऽञ्च्धातोः क्विनि ‘अनिदितामि’ति नलोपे यणि प्रत्यच् शब्दात् सुबुत्पत्तिः । ततः नुमि सुलोपे संयोगान्तलोपे च ‘क्विन्प्रत्ययस्ये’ति कुत्वम् । (२) अनुस्वार परसवर्णौ । (३) अत्रायं विशेषः-प्रति अञ्च् इति स्थिते अन्तरङ्गोऽपि यण् इह न प्रवर्तते, ‘अचः’ इति लोपेन यण् निमित्तस्याऽकारस्य विनाशोन्मुखत्वेन ‘अकृतव्यूहे’ति परिभाषानिषेधात् । ततश्च नलोपे शसि ‘प्रति अच् अस्’ इति दशायां ‘अचः’ इत्यल्लोपे ‘चौ’ इति दीर्घः । (४) वदत्वात् ‘चोः कुः’ इति कुत्वम् । (५) अमुमञ्चतीति विप्रहे क्विनि उपपदसमासे अदस् अश्च् इति स्थिते परत्वात् ‘अनिदितामि’ति नलोपे ‘अदस् अच्’ इति स्थिते ‘विष्वग्देवयोश्चे’ति (अत्र सूत्रे अप्रत्यय इति-अविद्यमानः प्रत्ययोऽप्रत्ययः किन्किवादिरिति यावत्) अदसः टेः ‘अद्रि’ आदेशे यणि नुमि सुलोपे संयोगान्तलोपे नकारस्य कृत्वेन ङकारे च ‘अदद्रथङ्’ इति स्थिते । ‘अदसोऽसेरि’ति (अत्र सूत्रे अदसः, असेः, दात्, उ, दः, मः इति छेदः) प्रथमदकारस्य मत्वे तदुत्तरस्याकारस्य षत्वम्, एवं द्वितीयदकारस्यापि मत्वे तदुत्तरस्य रेफस्य च मत्वम् । (६) अन्तरङ्गोऽपि यण् ‘अचइतिलोपविषये न प्रवर्तते इति प्रागुक्तं न विस्मर्तव्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|-------------|----------------|---------------|---------|
| तृ० | अमुमुर्चा | अमुमुयग्भ्याम् | अमुमुयग्भिः | करण |
| च० | अमुमुर्चे | अमुमुयग्भ्याम् | अमुमुयग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अमुमुर्चः | अमुमुयग्भ्याम् | अमुमुयग्भ्यः | अपा० |
| स० | अमुमुर्चः | अमुमुर्चोः | अमुमुर्चाम् | सम्ब० |
| ल० | अमुमुर्चि | अमुमुर्चोः | अमुमुयश्चु | अधि० |
| | हे अमुमुयञ् | हे अमुमुयञ्चौ | हे अमुमुयञ्चः | सम्बो० |
| [२७०] चकारान्त-पुंलिङ्गः गतौ-‘अदमुयञ्च्’ शब्दः । | | | | |
| प्र० | अदमुयञ्च् | अदमुयञ्चौ | अदमुयञ्चः | कर्त्ता |
| द्वि० | अदमुयञ्चम् | अदमुयञ्चौ | अदमुर्चः | कर्म० |
| तृ० | अदमुर्चा | अदमुयग्भ्याम् | अदमुयग्भिः | करण |
| च० | अदमुर्चे | अदमुयग्भ्याम् | अदमुयग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अदमुर्चः | अदमुयग्भ्याम् | अदमुयग्भ्यः | अपा० |

(१) अमुमु + इ + अच् भ्याम्’ इति स्थिते इकारे परे उकारस्य यण तु न मुत्वस्याऽसिद्धात्वात् ।

(२) अदसोऽद्रेः पृथक् मुत्वं केचिदिच्छन्ति लत्ववत् ।

केचिदन्त्यसदेशस्य नेत्येकेऽसेर्हि दृश्यते ।

इति वार्तिककृदुक्तिः । अयम्भावः—अदसष्टेरद्रेर्विधौ सति अदद्रयच् इत्यत्र प्रथम-द्वितीययोर्दकारयोः पृथक् मत्वं, तदुत्तरयोः अवर्ण-रेफयोः उत्त्वञ्च युगपदेव लत्ववत् = ‘चलीकलृप्यते’ इत्यत्र चरीकृप्यते इति स्थिते रेफ रिकारयोः यथा कृपो रो लः’ इति लत्वं तद्वत्, केचिदिच्छन्ति । (तन्मते अमुमुयञ्च् इति प्रागुक्तम्) केचित् ‘अन्त्यवाधे’ति परिभाषया अन्त्यसदेशस्यैव मुत्वमिच्छन्ति (तन्मते अयम ‘अदमुयञ्च्’ इति) एके = आचार्याः, अद्रवादेशे सति प्रथमद्वितीययोश्च मुत्वं नैव इच्छन्ति, द्वि=यतः (सूत्रे) असेरिति दृश्यते, एतन्मते ‘असेरि’ति नायं तत्पुरुषः किन्तु अः सेर्यस्य स-अधिः, तस्य असेरिति, सकारस्थानिकाऽकारवतः इत्यर्थः । एवञ्च अदसृशब्दस्य त्यदाद्यत्वे कृते एव सकारस्थानिकाऽकारवत्वमिति अद्रवादेशे न मुत्वमिति भावः, एतन्मते ‘अदद्रयच्’ इति रूपमग्रे वक्ष्यामः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|------|------------|--------------|--------------|--------|
| ष० | अदमुईचः | अदमुईचोः | अदमुईचाम् | सम्ब० |
| स्र० | अदमुईचि | अदमुईचोः | अदमुयक्षु | अधि० |
| | हे अदमुयङ् | हे अदमुयञ्चौ | हे अदमुयञ्चः | सम्बो० |

[२७१] चकारान्त-पुंलिङ्गः गतौ-‘अदद्रथञ्च्’ शब्दः ।

| | | | | |
|-------|-------------|----------------|---------------|---------|
| प्र० | अदद्रथङ् | अदद्रथञ्चौ | अदद्रथञ्चः | कर्ता |
| द्वि० | अदद्रथञ्चम् | अदद्रथञ्चौ | अदद्रीचः | कर्म |
| तृ० | अदद्रीचा | अदद्रथग्भ्याम् | अदद्रथग्भिः | करणः |
| च० | अदद्रीचे | अदद्रथग्भ्याम् | अदद्रथग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अदद्रीचः | अदद्रथग्भ्याम् | अदद्रथग्भ्यः | अपा० |
| ष० | अदद्रीचः | अदद्रीचोः | अदद्रीचाम् | सम्ब० |
| स्र० | अदद्रीचि | अदद्रीचोः | अदद्रथक्षु | अधि० |
| | हे अदद्रथङ् | हे अदद्रथञ्चौ | हे अदद्रथञ्चः | सम्बो० |

[२७२] चकारान्त-पुंलिङ्गः गतौ-‘उदञ्च्’ शब्दः (उत्तर)

| | | | | |
|-------|---------|------------|-----------|---------|
| प्र० | उदङ् | उदञ्चौ | उदञ्चः | कर्ता |
| द्वि० | उदञ्चम् | उदञ्चौ | उदीचः | कर्म |
| तृ० | उदीचा | उदग्भ्याम् | उदग्भिः | करण |
| च० | उदीचे | उदग्भ्याम् | उदग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | उदीचः | उदग्भ्याम् | उदग्भ्यः | अपा० |
| ष० | उदीचः | उदीचोः | उदीचाम् | सम्ब० |
| स्र० | उदीचि | उदीचोः | उदक्षु | अधि० |
| | हे उदङ् | हे उदञ्चौ | हे उदञ्चः | सम्बो० |

(२७३) चकारान्त-पुंलिङ्गः गतौ-‘सम्यञ्च्’ शब्दः (ठीक चलने वाला)

| | | | | |
|------|--------|----------|----------|-------|
| प्र० | सम्यङ् | सम्यञ्चौ | सम्यञ्चः | कर्ता |
|------|--------|----------|----------|-------|

(१) उत् अश्नतीति विग्रहः । किन्नादिकार्यं ‘प्राञ्च्’ शब्दवत्, अत्र दीर्घा-
भावः इति विशेषः । (२) शासादावचि भत्वात् ‘अचः’ इत्यल्लोपे प्राप्ते ‘उद ईत्’
इति ईत्वम् । (३) सन्नतमश्नतीति विग्रहे किन्नाद्यु रं ‘समः ममि’ इति सम्या-
देशे ‘प्रत्यञ्च्’ शब्दवदन्यत् कार्यं ज्ञेयम् ।

| एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------------|--------------|-------------|--------|
| सम्यञ्चम् | सम्यञ्चौ | समीचः | कर्म |
| समीचा | सम्यग्भ्याम् | सम्यग्भिः | करण |
| समीचे | सम्यग्भ्याम् | सम्यग्भ्यः | सम्प्र |
| समीचः | सम्यग्भ्याम् | सम्यग्भ्यः | अपा० |
| समीचः | समीचोः | समीचाम् | सम्ब० |
| समीचि | समीचोः | सम्यक्षु | अधि० |
| हे सम्यञ्च् | हे सम्यञ्चौ | हे सम्यञ्चः | सम्बो० |

[२७४] चकारान्त-पुंल्लिङ्गः गतौ-‘सध्न्यञ्च्’ शब्दः (सार्थी)

| | | | |
|---------------|----------------|---------------|---------|
| सध्न्यञ्च् | सध्न्यञ्चौ | सध्न्यञ्चः | कर्त्ता |
| सध्न्यञ्चम् | सध्न्यञ्चौ | सध्नीचः | कर्म |
| सध्नीचा | सध्न्यग्भ्याम् | सध्न्यग्भिः | करण |
| सध्नीचे | सध्न्यग्भ्याम् | सध्न्यग्भ्यः | सम्प्र० |
| सध्नीचः | सध्न्यग्भ्याम् | सध्न्यग्भ्यः | अपा० |
| सध्नीचः | सध्नीचोः | सध्नीचाम् | सम्ब० |
| सध्नीचि | सध्नीचोः | सध्न्यक्षु | अधि० |
| हे सध्न्यञ्च् | हे सध्न्यञ्चौ | हे सध्न्यञ्चः | सम्बो० |

[२७५] चकारान्त-पुंल्लिङ्गः गतौ ‘तिर्यञ्च्’ शब्दः

(टेढा-मेढा चलने वाला-पशु-पक्षी)

| | | | |
|------------|-----------|-----------|---------|
| तिर्यञ्च् | तिर्यञ्चौ | तिर्यञ्चः | कर्त्ता |
| तिर्यञ्चम् | तिर्यञ्चौ | तिर्यञ्चः | कर्म |

(१) सह अश्नति = गच्छति, इति विप्रहे किन्नाद्युत्तरं ‘सहस्य सध्निः’ इति सध्न्यादेशे यणि अत्राऽपि ‘प्रत्यञ्च्’ शब्दवत् कार्यं बोध्यम् । (२) तिरः=कुटिलम्, अश्नति = गच्छति, इति विप्रहे पूर्ववत् किन्नादेशोत्तरं ‘तिरसस्तिर्यलोपे’ [अत्र सूत्रे ‘अलोपे’ इत्यत्र बहुव्रीहिः-नविद्यते (‘अचः’ इति) लोपो यस्य स ‘अलोपः’ तस्मिन् अलोपे इति] इति तिरसः तिर्याऽऽदेशे यणि कुत्वादिकं पूर्ववत् (३) शष्पादवचि ‘अचः’ इति लोपसत्त्वेन तिर्याभावे श्चुत्वम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|------|------------|---------------|--------------|---------|
| तृ० | तिरश्चा | तिर्यग्भ्याम् | तिर्यग्भिः | करण |
| द्व० | तिरश्चे | तिर्यग्भ्याम् | तिर्यग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | तिरश्चः | तिर्यग्भ्याम् | तिर्यग्भ्यः | अपा० |
| ष० | तिरश्चः | तिरश्चोः | तिरश्चाम् | सम्ब० |
| स० | तिरश्चि | तिरश्चोः | तिर्यक्षु | अधि० |
| | हे तिर्यङ् | हे तिर्यञ्चौ | हे तिर्यञ्चः | सम्बो० |

[२७६] चकारान्त-पुंरिलङ्गः पूजार्था 'प्राञ्च्' शब्दः (पूज्य)

| | | | | |
|-------|-----------|--------------|---------------------------------------|---------|
| प्र० | प्राङ् | प्राञ्चौ | प्राञ्चः | कर्त्ता |
| द्वि० | प्राञ्चम् | प्राञ्चौ | प्राञ्चः | कर्म |
| तृ० | प्राञ्चा | प्राङ्भ्याम् | प्राङ्भिः | करण |
| द्व० | प्राञ्च | प्राङ्भ्याम् | प्राङ्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | प्राञ्चः | प्राङ्भ्याम् | प्राङ्भ्यः | अपा० |
| ष० | प्राञ्चः | प्राञ्चौ | प्राञ्चाम् | सम्ब० |
| स० | प्राञ्चि | प्राञ्चोः | प्राङ्खसु प्राङ्क्षु प्राङ्क्षु | अधि० |
| | हे प्राङ् | हे प्राञ्चौ | हे प्राञ्चः | सम्बो० |

एवं पूजार्थे-प्रत्यञ्च्, उदञ्च्' सम्यञ्च्, सध्यञ्च्, तिर्यञ्च्, अमुमुयञ्च्, अदमुयञ्च् अदद्र्यञ्च् शब्दानामपि बोध्यम् ।

(१) 'अञ्चु गातिपूजनयोः' तत्र पूजार्थे 'अनिदितामिति नलोपे प्राप्ते 'नाञ्चेः पूजायामिति' निषिध्यते । यत्तु नलोपे निषेधेऽपि नुमा नकारद्वयश्रवणं दुर्वारमिति तन्न, 'उगिदचामिति सूत्रे नलोपिनोऽञ्चतेरेव प्रहणात् । (२) शसादावचि 'अचः' इत्यल्लोपो न भवति, तत्र सूत्रेऽपि लुप्तनकारस्याञ्चतेरेव प्रहणात् । (३) प्राङ् सु इति स्थिते 'ङ्णोः कुकट्टकृ शरि' इति कुकि 'चयोः द्वितीयाः' इति खकारे च कववर्गात् परत्वेन पत्वम् ।

[२७७] चकारान्त-पुंल्लिङ्गः 'क्रौञ्च' शब्दः (क्रौंच पक्षी)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------|---------------|--|---------|
| प्र० | क्रुञ्च | क्रुञ्चौ | क्रुञ्चः | कर्त्ता |
| द्वि० | क्रुञ्चम् | क्रुञ्चौ | क्रुञ्चः | कर्म |
| तृ० | क्रुञ्चा | क्रुञ्चभ्याम् | क्रुञ्चभिः | करण |
| च० | क्रुञ्चे | क्रुञ्चभ्याम् | क्रुञ्च्यः | लम्प्र० |
| पं० | क्रुञ्चः | क्रुञ्चभ्याम् | क्रुञ्च्यः | अपा० |
| ष० | क्रुञ्चः | क्रुञ्चोः | क्रुञ्चाम् | लम्ब० |
| स० | क्रुञ्चि | क्रुञ्चोः | { क्रुञ्चक्षु क्रुञ्क्षु-क्रुञ्क्षु | अधि० |
| | हे क्रुञ्च | हे क्रुञ्चौ | हे क्रुञ्चः | लम्बो० |

[२७८] चकारान्त-पुंल्लिङ्गः 'पयोमुच' शब्दः (मेघ)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | पयोमुक्-न् | पयोमुचौ | पयोमुचः | कर्त्ता |
| द्वि० | पयोमुचम् | पयोमुचौ | पयोमुचः | कर्म |
| तृ० | पयोमुचा | पयोमुग्भ्याम् | पयोमुग्भिः | करण |
| च० | पयोमुचे | पयोमुग्भ्याम् | पयोमुग्भ्यः | लम्प्र० |
| पं० | पयोमुचः | पयोमुग्भ्याम् | पयोमुग्भ्यः | अपा० |

(१) 'क्रुञ्च कौटिल्यात्पिभावयोः' अस्मात् निरुपपदात् 'ऋत्विगि'त्यादिना निपातनात् क्रिनि नलोपाऽभावे च हल्ङ्पादिना सुलोपे संयोगान्तलोपे नकारस्य 'क्रिन्प्रत्ययस्थे'ति कृत्वम् । वस्तुतस्तु 'नलोपाभावोऽपि निपात्यते' इति परममूलोक्तं न विचारसहम्, 'परेष्व षाङ्गयोः' इति सूत्रस्थभाष्यविरोधात्, तत्र हि-
'क्रुञ्चा' इत्यत्र 'चोः क्रुः' इति कृत्वमाशङ्क्य 'ऋत्विगि'त्यादिना 'क्रुञ्चे'ति निपातनात् कृत्वञ्चेति समाहितम् । भवन्मते तु नकारस्यानुस्वारपरसद्वर्णाभ्यां नकारो निर्देसः तर्हि तस्य कृत्वप्रसङ्गिरेव नास्तीति तदसङ्गतिः स्यात्तस्मात् स्वाभाविक-
नोपपत्त्यैव धातुपाठे निर्देसः इति दिक् । (२) पयः सुवतीति पयोमुक् । 'सुच्छ-
नोक्षणे' अस्मात् क्रिप् । सुलोपे कृत्वे जश्चनत्वे ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|---|---------------|---------------|--------------------------|---------|
| ष० | पयोमुचः | पयोमुचोः | पयोमुचाम् | सम्ब० |
| स० | पयोमुचि | पयोमुचोः | पयोमुक्षु | अधि० |
| | हे पयोमुक्-ग् | हे पयोमुचौ | हे पयोमुचः | सम्बो० |
| [२७९] चकारान्त-पुंल्लिङ्गः 'सुवृश्च्' शब्दः (अच्छा करने वाला) | | | | |
| प्र० | सुवृट्-इ | सुवृश्चौ | सुवृश्चः | कर्ता |
| द्वि० | सुवृश्चम् | सुवृश्चौ | सुवृश्चः | कर्म |
| तृ० | सुवृश्चा | सुवृश्चभ्याम् | सुवृश्चिभिः | करण |
| च० | सुवृश्चे | सुवृश्चभ्याम् | सुवृश्चभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सुवृश्चः | सुवृश्चभ्याम् | सुवृश्चभ्यः | अपा० |
| ष० | सुवृश्चः | सुवृश्चोः | सुवृश्चाम् | सम्ब० |
| स० | सुवृश्चि | सुवृश्चोः | { सुवृट्त्सु सुवृट्सु | अधि० |
| | हे सुवृट्-इ | हे सुवृश्चौ | हे सुवृश्चः | सम्बो० |

[२८०] तकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'महत्' शब्दः (बड़ा, श्रेष्ठ)

| | | | | |
|------|-------|---------|---------|-------|
| प्र० | महान् | महान्तौ | महान्तः | कर्ता |
|------|-------|---------|---------|-------|

(१) सुष्टु वृश्चतीति 'सुवृट्' सुपूर्वात् 'ओ व्रश्च् छेदने' इति धातोः क्तिप् 'प्रहिज्ये'ति सम्प्रसारणे 'सुवृश्च्' शब्दः । ततः सुलोपे 'व्रश्चे'ति षत्वे 'स्कोरि' सलोपे जश्चत्त्वे । नच 'स्कोरि'ति सूत्रे दन्त्यसकारस्यैव निर्देशेन कथमत्र शलोपः इति चेत्सत्यम् , धातुपाठे व्रश्च् इति सस्य इचुत्वे कृते 'व्रश्च' इति निर्देशः, तस्य इचुत्वस्यासिद्धत्वात् 'स्कोरि'ति सलोपस्य सुतरां प्रवृत्तोः । (२) चत्त्वस्याऽसिद्धत्वात् पूर्वं 'ङः सी'ति वा धुट्, ततश्चत्त्वम् । (३) मह्यते=पूज्यते इति 'महान्' कर्तरि कृत् इति कर्त्रर्थं वाधित्वा 'वर्तमाने पृषन्महदिश्रयुणादि-सूत्रेण महेः कर्मणि अतिप्रत्ययः 'शतृवद्भावश्च निपात्यते । (शतृवद्भावेन 'सुटि' उगित्वात् न्नुम् भवतीति बोध्यम्) ततश्च महत् शब्दात् सौ 'उगिदचा'मिति मि 'सान्तमहतः' इति सर्वनामस्थाने पेरे दीर्घे सति सुलोपे संयोगान्तलोपः ।

| एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|---|-------------|------------|---------|
| ० महान्तम् | महान्तौ | महतः | कर्म |
| ० महता | महद्भ्याम् | महद्भिः | करण |
| ० महते | महद्भ्याम् | महद्भ्यः | सम्प्र० |
| ० महतः | महद्भ्याम् | महद्भ्यः | अपा० |
| ० महतः | महतोः | महताम् | सम्ब० |
| ० महति | महतोः | महत्सु | अधि० |
| हे महन् | हे महान्तौ | हे महान्तः | सम्बो० |
| [२८१] तकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'धीमन्' शब्दः (बुद्धिमान्) | | | |
| ० धीमान् | धीमन्तौ | धीमन्तः | कर्ता |
| द्वि० धीमन्तम् | धीमन्तौ | धीमेतः | कर्म |
| ० धीमता | धीमद्भ्याम् | धीमद्भिः | करण |
| ० धीमते | धीमद्भ्याम् | धीमद्भ्यः | सम्प्र० |
| ० धीमतः | धीमद्भ्याम् | धीमद्भ्यः | अपा० |
| ० धीमतः | धीमतोः | धीमताम् | सम्ब० |
| ० धीमति | धीमतोः | धीमत्सु | अधि० |
| हे धीमन् | हे धीमन्तौ | हे धीमन्तः | सम्बो० |

[२८२] तकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'गोमन्' शब्दः

(गौको रखने वाला गोमान्, उसकी इच्छा करने वाला)

| | | | |
|----------|---------|---------|-------|
| ० गोमान् | गोमन्तौ | गोमन्तः | कर्ता |
|----------|---------|---------|-------|

- (१) असर्वनामस्थानत्वात् जुम्दीर्घयोरभावेन 'स्वादिष्विति पदत्वाजदत्वम् ।
 (२) असम्बुद्धावित्युत्तेर्नदीर्घः । (३) धीरस्यास्तीत्यर्थे 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति
 मत्तुप् इति मत्तुपि धीमच्छब्दात् सौ 'अत्वसन्तस्येति दीर्घे जुमि सुलोपे
 संयोगान्तलोपः । (४) अत्वन्तस्येति सूत्रे असम्बुद्धौ सौ परे इत्युक्तत्वात्
 भौजसादिषु न दीर्घः । (५) शसादौ महद्भवत् कार्यं शेषम् । (६) गा बोऽ
 स्यस्मिन् वा सन्तीति गोमान्, अस्यर्थे मत्तुप् । ततः गोमन्तमिच्छतीत्य

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------|-------------|------------|---------|
| द्वि० | गोमन्तम् | गोमन्तौ | गोमतः | कर्म |
| तृ० | गोमता | गोमद्भ्याम् | गोमद्भिः | करण |
| चत० | गोमते | गोमद्भ्याम् | गोमद्भ्यः | सम्प्र० |
| पंच० | गोमतः | गोमद्भ्याम् | गोमद्भ्यः | अपा० |
| षष्ठ० | गोमतः | गोमतोः | गोमताम् | सम्ब० |
| सप्त० | गोमति | गोमतोः | गोमत्सु | अधि० |
| | हे गोमन् | हे गोमन्तौ | हे गोमन्तः | सम्बो० |

| | | | |
|-------|------------------------|-------------|--------------------|
| [२८३] | एवं श्रीमत् = श्रीमान् | श्रीमन्तौ | श्रीमन्तः |
| [२८४] | बुद्धिमत् = बुद्धिमान् | बुद्धिमन्तौ | बुद्धिमन्तः । |
| [२८५] | भगवत् = भगवान् | भगवन्तौ | भगवन्तः । |
| [२८६] | यावत् = यावान् | यावन्तौ | यावन्तः । |
| [२८७] | तावत् = तावान् | तावन्तौ | तावन्तः । |
| [२८८] | एतावत् = एतावान् | एतावन्तौ | एतावन्तः । |
| [२८९] | क्रियत् = क्रियान् | क्रियन्तौ | क्रियन्तः । |
| [२९०] | इयत् = इषान् | इयन्तौ | इयन्तः । (इत्यादि) |

‘सुप आत्मनः’ इति क्यञि, क्यजन्तस्य ‘सनाद्यन्ताः’ इति धातुत्वात् कर्तरि क्विपि, ‘यस्य हलः’ ‘अतो लोपः’ इति यलोपाऽल्लोपयोर्गोमच्छब्दात् सुवुत्पत्तिः । गोमानिवाऽऽचरतीत्यर्थे तु ‘सर्वः प्रातिपदिकेभ्यः’ इति क्विपि, ‘सनाद्यन्ताः’ इति धातुत्वात् कर्तरि क्विपि सुवुत्पत्तिः । ततः ‘अत्वसन्तस्ये’ति दीर्घे नुमि सुलोपः । नच ‘उगिदचामि’ति सूत्रे अधातोरित्यस्य सत्त्वेन धातोर्नुमोऽप्रारप्या क्यजन्तादि-गोमच्छब्दस्य धातुत्वाभावान्नुम् न स्यादिति चेच्छृणु १ अश्वतेरुगित्वादेव नुम् सिद्धे-रज्प्रहणसामर्थ्यात् ‘धातोश्चेदुगित्कार्यं तर्हि अञ्चतेरेव’ इति नियमात् अन्यधातोर्नुमोऽप्रारप्या तद्वधात् इत्यं कृतमधातुप्रहणं व्यर्थं सञ्ज्ञापयति—‘अधातुभूतपूर्वस्यापि नुम्भवतीति’ तेन प्रकृते गोमतः सम्प्रति धातुत्वाभावेऽपि भूतपूर्वधातुत्वमादा-य नुम् सिद्धिरिति दिक् ।

[२९१] तान्त-पुंल्लिङ्गः सर्वनाम 'भवत्' शब्दः (आप)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------|------------|----------|---------|
| प्र० | भवान् | भवन्तौ | भवन्तः | कर्ता |
| द्वि० | भवन्तम् | भवन्तौ | भवतः | कर्म |
| तृ० | भवता | भवद्भ्याम् | भवद्भिः | करण |
| च० | भवते | भवद्भ्याम् | भवद्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | भवतः | भवद्भ्याम् | भवद्भ्यः | अपा० |
| ष० | भवतः | भवतोः | भवताम् | सम्ब० |
| स० | भवति | भवतोः | भवत्सु | अधि० |
| | ० | ० | ० | ० |

[२९२] शत्रन्तो 'भवत्' शब्दः (होता हुआ)

| | | | | |
|-------|---------|--------|--------|-------|
| प्र० | भवेन् | भवन्तौ | भवन्तः | कर्ता |
| द्वि० | भवन्तम् | भवन्तौ | भवतः | कर्म |

शेषं उवतुप्रत्ययान्तवत् ।

एवं कुर्वत्, नृवत्, जानत्, करिष्यत्, गमिष्यत्,
इत्यादयोऽनभ्यस्तसंज्ञकाः ।

[२९३] शत्रन्तोऽभ्यस्तसंज्ञको 'ददत्' शब्दः (देता हुआ)

| | | | | |
|-------|---------|------------|----------|---------|
| प्र० | ददत्-द् | ददतौ | ददतः | कर्ता |
| द्वि० | ददतम् | ददतौ | ददतः | कर्म |
| तृ० | ददता | ददद्भ्याम् | ददद्भिः | करण |
| च० | ददते | ददद्भ्याम् | ददद्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | ददतः | ददद्भ्याम् | ददद्भ्यः | अपा० |

- (१) 'भातेर्भवत्' इत्युणादिसूत्रेण भाषातोर्भवत्प्रत्यये द्वित्वादिलोपे च 'भवत्' शब्दः । तस्मात् सौ 'भत्वसन्तस्ये'ति दीर्घे नुमि सुलोपे संयोगान्तलोपः ।
(२) भूताधोर्लटः शत्रादेशे शपि गुणावादेशयोः पररूपे 'भवत्' शब्दः । तस्मात् सौ भत्वन्तत्वाभावेन दीर्घाऽभावात् नुमादिकार्यं पूर्ववत् । (३) ददातीति

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|------|------------|---------|---------|--------|
| प्र० | ददत्: | ददतोः | ददताम् | सम्ब० |
| स० | ददति | ददतोः | ददत्सु | अधि० |
| | हे ददत्-द् | हे ददतौ | हे ददतः | सम्बो० |

[२९४] शत्रन्तोऽभ्यस्तसंज्ञको 'जक्षत्' शब्दः (हंसता हुआ)

| | | | | |
|-------|--------------|------------|-----------|---------|
| प्र० | जक्षत्-द् | जक्षतौ | जक्षतः | कर्ता |
| द्वि० | जक्षतम् | जक्षतौ | जक्षत | कर्म० |
| तृ० | जक्षता | जक्षञ्याम् | जक्षद्भिः | करण |
| च० | जक्षते | जक्षञ्याम् | जक्षञ्यः | सम्प्र० |
| पं० | जक्षतः | जक्षञ्याम् | जक्षञ्यः | अपा० |
| ष० | जक्षतः | जक्षतोः | जक्षताम् | सम्ब० |
| स० | जक्षति | जक्षतोः | जक्षत्सु | अधि० |
| | हे जक्षत्-द् | हे जक्षतौ | हे जक्षतः | सम्बो० |

[२९५] शत्रन्तोऽभ्यस्तसंज्ञकः 'जाग्रत्' शब्दः (जागता हुआ)

| | | | | |
|-------|------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | जाग्रत्-द् | जाग्रतौ | जाग्रतः | कर्ता |
| द्वि० | जाग्रतम् | जाग्रतौ | जाग्रतः | कर्म |
| तृ० | जाग्रता | जाग्रद्भ्याम् | जाग्रद्भिः | करण |
| च० | जाग्रते | जाग्रद्भ्याम् | जाग्रद्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | जाग्रतः | जाग्रद्भ्याम् | जाग्रद्भ्यः | अपा० |
| ष० | जाग्रतः | जाग्रतोः | जाग्रताम् | सम्ब० |
| स० | जाग्रति | जाग्रतोः | जाग्रत्सु | अधि० |

'ददत्' दावोः लटः शत्रादेशे शपः श्लौ 'श्ला' विति द्वित्वे अभ्यासस्य ह्रस्वे च 'श्नाभ्यस्तयो'रित्यारल्लोपे 'ददत्' शब्दः । ततः सौ हल्ङ्वादिलोपः । नुम् वृ न 'उभे अभ्यस्तम्' इत्यभ्यस्तसंज्ञायार्या 'नाभ्यस्ताच्छतुः' इति निषेधात् । (१-२) 'जक्ष हसने' 'जागृ निद्राक्षये' 'दरिद्रा दुर्गतौ', 'वकास दीप्तौ', 'शाशु अनुशिष्टौ' 'दीधीक दीप्तिवेदनयोः' 'वेविङ वेतिना तुल्ये' इति सप्त लुब्धिकरणाः

एकवचन

द्विवचन

बहुवचन

हे जाग्रत्-द्

हे जाग्रतौ

हे जाग्रतः

सम्बो०

[२९६] शत्रन्तोऽभ्यस्तसंज्ञको 'दरिद्रत्' शब्दः (दरिद्र होता हुआ)

प्र० दरिद्रत्-द्

दरिद्रतौ

दरिद्रतः

कर्त्ता

द्वि० दरिद्रतम्

दरिद्रतौ

दरिद्रतः

कर्म

तृ० दरिद्रता

दरिद्रत्त्वाम्

दरिद्रत्त्रिः

करण

च० दरिद्रते

दरिद्रत्त्वाम्

दरिद्रत्त्र्यः

सम्प्र०

पं० दरिद्रतः

दरिद्रत्त्र्याम्

दरिद्रत्त्र्यः

अपा०

ष० दरिद्रतः

दरिद्रतोः

दरिद्रताम्

सम्ब०

ल० दरिद्रति

दरिद्रतोः

दरिद्रत्सु

अधि०

हे दरिद्रत्-द्

हे दरिद्रतौ

हे दरिद्रतः

सम्बो०

[२९७] शत्रन्तोऽभ्यस्तसंज्ञकः 'शाशत्' शब्दः (शाशन करता हुआ)

प्र० शाशत्-द्

शाशतौ

शाशतः

कर्त्ता

द्वि० शाशतम्

शाशतौ

शाशतः

कर्म

इत्यादि 'दरिद्रत्' वत् ।

[२९८] शत्रन्तोऽभ्यस्तसंज्ञकः 'चकाशत्' शब्दः

(प्रकाशित होता हुआ)

प्र० चकाशत्-द्

चकाशतौ

चकाशतः

कर्त्ता

द्वि० चकाशतम्

चकाशतौ

चकाशतः

कर्म

इत्यादि 'दरिद्रत्' शब्दवत् ।

[२९९] शत्रन्तोऽभ्यस्तसंज्ञकः 'दीध्यत्' शब्दः (शोकित होता हुआ)

प्र० दीध्यत्-द्

दीध्यतौ

दीध्यतः

कर्त्ता

अदादौ पठिताः तेभ्यो लटः शत्रादेशे शब्दुकि सुश्रुततौ हल्ह्रयादिलोपः । नुम् तु न, 'जक्षित्यादयः पट्' इत्यभ्यस्तसंज्ञायां 'नाभ्यस्ताच्छतुः' इति निषेधात् । अन्यत् कार्यं सुगमम् । (१) 'दीधीह् दीप्ति देवनयोः [देवनं शोकः] 'वेविह् वेतिना तुल्ये यो गति' त्यनेन तुल्येऽर्थे वर्तते इत्यर्थः, आभ्यां लटः शत्रादेशे कृते शब्दुकि यणादे-

| | | | | |
|-------|----------|---------|---------|------|
| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
| द्वि० | दीध्यतम् | दीध्यतौ | दीध्यतः | कर्म |

इत्यादि 'दरिद्रत्' शब्दवत् ।

[३००] शत्रन्तोऽभ्यस्तसंज्ञकः 'वेव्यत्' शब्दः (समान होता हुआ)

| | | | | |
|-------|------------|---------|---------|-------|
| प्र० | वेव्यत्-द् | वेव्यतौ | वेव्यतः | कर्ता |
| द्वि० | वेव्यतम् | वेव्यतौ | वेव्यतः | कर्म |

इत्यादि 'दरिद्रत्' वत् (इति यक्षित्यादयः) ।

[३०१] पकारान्त-पुंलिङ्गः 'गुप्' शब्दः (रक्षा करने वाला)

| | | | | |
|-------|------------|------------|----------|---------|
| प्र० | गुप्-व् | गुपौ | गुपः | कर्ता |
| द्वि० | गुपम् | गुपौ | गुपः | कर्म |
| तृ० | गुपा | गुब्भ्याम् | गुग्भिः | करण |
| च० | गुपे | गुब्भ्याम् | गुग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | गुपः | गुब्भ्याम् | गुग्भ्यः | अपा० |
| ष० | गुपः | गुपोः | गुपाम् | सम्ब० |
| स० | गुपि | गुपोः | गुप्सु | अधि० |
| | हे गुप्-व् | हे गुपौ | हे गुपः | सम्बो० |

[३०२] शान्तः पुंलिङ्गः 'तादश्' शब्दः (तैसा, उसके सदृश)

| | | | | |
|------|----------|-------|-------|-------|
| प्र० | तादक्-ग् | तादशौ | तादशः | कर्ता |
|------|----------|-------|-------|-------|

शः । अभ्यस्तत्वान्न नुमिति विशेषः । नच दीधीवेव्योर्द्वित्वेन आत्मनेपदित्वात्
 शत्रादेशः कथमिति वाच्यम्, "दीधीवादिषसपर्यन्ताः पञ्चधातवश्छान्दसाः"
 इति परममूले प्रतिपादितत्वेनोभयोश्छान्दोमात्रविषयत्वात् 'व्यत्ययो बहुलम्' इति
 परस्मैपदविधानेन सानन्नसम्भवात् । (१) एतद्भिन्नाः सर्वे शत्रन्ताः पुंसि नपुं-
 सके च सर्वनामस्थाने परे नित्यं नकारं लभन्ते इति ज्ञेयम् । (२) गोपायतीति
 गुप् । क्विपि विवक्षिते 'आयादयः' इत्यायप्रत्ययस्तु न तस्य वैकल्पिकत्वात्
 'आयप्रत्ययपक्षे तु भतो लोपे यलोपे च 'गोपा' इति रूपं बोध्यम् । (३) स
 इवार्यं पश्यतीति विग्रहे 'त्यदादिष्वि'ति क्विनि सर्वापहारे उपपदसमासे 'आ सर्व-

एकवचन द्विवचन बहुवचन

| | | | | |
|-------|--------------|--------------|------------|---------|
| द्वि० | तादृशम् | तादृशौ | तादृशः | कर्म |
| तृ० | तादृशा | तादृग्भ्याम् | तादृग्भिः | करण |
| च० | तादृशे | तादृग्भ्याम् | तादृग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | तादृशः | तादृग्भ्याम् | तादृग्भ्यः | अपा० |
| ष० | तादृशः | तादृशोः | तादृशाम् | सम्ब० |
| स० | तादृशि | तादृशोः | तादृशु | अधि० |
| | हे तादृक्-ग् | हे तादृशौ | हे तादृशः | सम्बो० |

एवं यादृश् (जैसा), कीदृश् (कैसा), ईदृश्-एतादृश् (ऐसा), त्वादृश् (तेरे ऐसा), भवादृश् (आपके लदृश्), युष्मादृश् (तुम्हारे लदृश्), मादृश् (मेरे लदृश्), मर्मस्पृश् (हृदयस्पर्शी) इत्यादयः ।

[३०३] शकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'विश्' शब्दः (वैश्य)

| | | | | |
|-------|---------|------------|----------|---------|
| प्र० | विष्ट-इ | विशौ | विशः | कर्त्ता |
| द्वि० | विशम् | विशौ | विशः | कर्म |
| तृ० | विशा | विद्भ्याम् | विद्भिः | करण |
| च० | विशे | विद्भ्याम् | विद्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | विशः | विद्भ्याम् | विद्भ्यः | अपा० |
| ष० | विशः | विशोः | विशाम् | सम्ब० |

नाम्नः इत्याखे 'त + आ + दृश्' इति स्थिते सवर्णदीर्घे 'तादृश्' शब्दः । ततः सौ हल्लुपादिलोपे कुत्वस्याऽसिद्धत्वात् 'म्रश्चे'ति षत्वे तस्य जश्त्वे 'क्विन्प्रत्ययस्ये'ति कुत्वेन गकारे चत्वंविकल्पः । अत्र क्येयादयः—'ता + दृश्' इति दशार्था षट्वापवादात् कुत्वेन खकारे तस्य चत्वेन कः 'तादृक्' इति । नन्वेवं चत्वाऽभावपक्षे जश्त्वं प्रति कुत्वस्याऽसिद्धत्वात् 'तादृग्' इति द्वितीयं रूपं न स्यादिति चेन्न, 'दिगादिभ्यः' इति निर्देशात् अघिद्धत्वाऽभावकल्पनेनाऽदोषात् । नच दधृगञ्चुयुजि-मुञ्चुपु षट्वाप्राप्त्या तत्र कुत्वस्य सावकादात्वेन कथमपवादः [निरवकाशो विधिरपवादः] इति वाच्यम् तत्रापि क्विन्विधानेनैव सिद्धेरिति दिक् । (१) 'विश प्रवेशने' अस्मात् क्विपि 'म्रश्चे'ति षत्वे जश्त्वचत्वं ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|---|-------------------------|--------------------------|--------------------------|----------------|
| स० | विशि हे विट्-इ | विशोः हे विशौ | विट्सु-विट्सु हे विशः | अधि० सम्बो० |
| [३०४] शकारान्त-पुंल्लिङ्गो 'नश्' शब्दः (नष्ट होने वाला) | | | | |
| प्र० | नक्-ग् नट्-इ | नशौ | नशः | कर्त्ता |
| द्वि० | नशम् | नशौ | नशः | कर्म |
| तृ० | नशा | { नग्भ्याम् नङ्भ्याम् | नग्भिः नङ्भिः | करण |
| च० | नशे | { नग्भ्याम् नङ्भ्याम् | नग्भ्यः नङ्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | नशः | { नग्भ्याम् नङ्भ्याम् | नग्भ्यः नङ्भ्यः | अपा० |
| ष० | नशः | नशोः | नशाम् | सम्ब० |
| स० | नशि | नशोः | { नक्षुँ-नट्सु नट्सु | अधि० |
| | { हे नक्-ग् हे नट्-इ | हे नशौ | हे नशः | सम्बो० |

[३०५] शान्त-पुंल्लिङ्गो 'घृतस्पृश' शब्दः (घृत को स्पर्श करने वाला)

| | | | | |
|-------|--------------|-----------------|---------------|---------|
| प्र० | घृतस्पृक्-ग् | घृतस्पृशौ | घृतस्पृशः | कर्त्ता |
| द्वि० | घृतस्पृशम् | घृतस्पृशौ | घृतस्पृशः | कर्म |
| तृ० | घृतस्पृशा | घृतस्पृग्भ्याम् | घृतस्पृग्भिः | करण |
| च० | घृतस्पृशे | घृतस्पृग्भ्याम् | घृतस्पृग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | घृतस्पृशः | घृतस्पृग्भ्याम् | घृतस्पृग्भ्यः | अपा० |

(१) 'डः सि धुट् इति विशेषः । (२) 'णश अदर्शने' अस्मात् क्विपि पत्वे प्राप्ते तं प्रवाच्य 'नशोर्वा' इति वा कृत्वम् । कृत्वाभावे पत्वे जश्चत्वे रूपम् । (३) कृत्वपक्षे रूपम् , कृत्वाभावे 'डः सि धुट् इति विशेषः । (४) घृतं घृतेन वासृशतीति विग्रहे "स्पृशोऽनुदके क्विचत्" इति क्विनि उपपदसमासे पत्वादिकं पूर्ववत् ।

एकवचन द्विवचन बहुवचनः

| | | | | |
|-------|-----------------|--------------|--------------|--------|
| प्र० | घृतस्पृशः | घृतस्पृशोः | घृतस्पृशाम् | सम्ब० |
| द्वि० | घृतस्पृशि | घृतस्पृशो | घृतस्पृक्षु | अधि० |
| | हे घृतस्पृक्-ग् | हे घृतस्पृशौ | हे घृतस्पृशः | सम्बो० |

एवं स्पृक्, स्पृग्, स्पृशौ, स्पृशः इत्यादि ।

[३०६] षान्त-पुंल्लिङ्गो 'दधृष्' शब्दः (धृष्ट)

| | | | | |
|-------|-------------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | दधृक्-ग् | दधृषौ | दधृषः | कर्त्ता |
| द्वि० | दधृषम् | दधृषौ | दधृषः | कर्म |
| तृ० | दधृषा | दधृग्भ्याम् | दधृग्भिः | करण |
| च० | दधृषे | दधृग्भ्याम् | दधृग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | दधृषः | दधृग्भ्याम् | दधृग्भ्यः | अपा० |
| ष० | दधृषः | दधृषोः | दधृषाम् | सम्ब० |
| स० | दधृषि | दधृषोः | दधृक्षु | अधि० |
| | हे दधृक्-ग् | हे दधृषौ | हे दधृषः | सम्बो० |

[३०७] षान्त-पुंल्लिङ्गो 'रत्नमुष्' शब्दः (रत्न को चुरानेवाला)

| | | | | |
|-------|-------------|----------------|--------------|---------|
| प्र० | रत्नमुट्-ङ् | रत्नमुषौ | रत्नमुषः | कर्त्ता |
| द्वि० | रत्नमुषम् | रत्नमुषौ | रत्नमुषः | कर्म |
| तृ० | रत्नमुषा | रत्नमुङ्भ्याम् | रत्नमुङ्भिः | करण |
| च० | रत्नमुषे | रत्नमुङ्भ्याम् | रत्नमुङ्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | रत्नमुषः | रत्नमुङ्भ्याम् | रत्नमुङ्भ्यः | अपा० |
| ष० | रत्नमुषः | रत्नमुषोः | रत्नमुषाम् | सम्ब० |

(१) स्पृशतीति स्पृक् । निरुपसर्गात् स्पृशोः क्विप् । पत्वङ्कुःवादिङ्न्तु 'घृतस्पृश' शब्दवत् । नचात्र क्विङ्न्तत्वाभावात् कृतं कथमिति वाच्यम्, 'क्वि-नः कुः' इति वक्तव्ये 'क्विन् प्रत्ययस्य कुः' इत्यत्र प्रत्ययप्रहणसामर्थ्यात् क्वि-न्प्रत्ययो यस्मादिति बहुव्रीह्याधरणेन क्विप्यपि कृतं स्यादिति । (२) रत्नानि सुष्णातीति रत्नमुट् । 'मुपस्तेये' वास्मात् क्विपि उपपदसमाप्ते अस्त्यचत्वे ।

[३११] षान्त-पुँल्लिङ्गो 'विविक्ष' शब्दः (प्रवेश करनेवाला)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|----------------|--------------|--------------------------|---------|
| प्र० | विविक्त्-ङ् | विविक्षौ | विविक्षः | कर्त्ता |
| द्वि० | विविक्षम् | विविक्षौ | विविक्षः | कर्म |
| तृ० | विविक्षा | विविङ्भ्याम् | विविङ्भिः | करण |
| च० | विविक्षे | विविङ्भ्याम् | विविङ्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | विविक्षः | विविङ्भ्याम् | विविङ्भ्यः | अपा० |
| ष० | विविक्षः | विविक्षोः | विविक्षाम् | सम्ब० |
| स० | विविक्षि | विविक्षोः | { विविङ्त्सु विविङ्सु | आधि० |
| | हे विविक्त्-ङ् | हे विविक्षौ | हे विविक्षः | सम्बो० |

[३१२] सान्तः पुँल्लिङ्गो 'विद्वस्' शब्दः (ज्ञानवान् पांडित)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | विद्वान् | विद्वान्सौ | विद्वान्सः | कर्त्ता |
| द्वि० | विद्वान्सम् | विद्वान्सौ | विदुषः | कर्म |
| तृ० | विदुषा | विद्वद्भ्याम् | विद्वद्भिः | करण |
| च० | विदुषे | विद्वद्भ्याम् | विद्वद्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | विदुषः | विद्वद्भ्याम् | विद्वद्भ्यः | अपा० |

(१) वेष्टुमिच्छतीति विग्रहे विशेः सनि द्वित्वादिकार्ये 'व्रश्चे'ति षत्वे 'षढोः कः सि' इति क्त्वे प्रत्ययावयवत्वात् षत्वे 'सनाद्यन्ताः'इति धातुत्वात् क्विपि अतो लोपः' इत्यल्लोपे 'विविक्ष' शब्दः । तस्मात् सौ हल्हयादिलोपे संयोगान्तलोपे च 'निमित्तापाये नैमित्तिकस्याप्यपायः इति परिभाषया ककारस्यापि निवृत्तौ जश्त्व- चत्वे । संयोगादिलोपस्तु न क्त्वस्याऽसिद्धत्वात् । एवंच षत्वस्याऽसिद्धत्वादिति मूलोक्तत्वयुक्तमेवेति ध्येयम् । (२) 'विविष् × सु' इति स्थिते सुपि परे 'षढोः कः सि' इति क्त्वन्तु न जश्त्वेनाऽसिद्धत्वात् । (३) विद्वधातोर्लटि शत्रादेशे 'विदेः शतुर्वसुः' । अदादित्वात् षपो लुकि उगित्वान्नुमि 'सान्ते'ति दीर्घे सुलोपे 'विद्वान्' इति । (४) षढोः सम्प्रधारणम् । (५) वसुसुत्रं स्वि'ति दत्त्वम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----|------------|--------------|--------------|--------|
| ष० | विदुषः | विदुषोः | विदुषाम् | सम्ब० |
| स० | विदुषि | विदुषोः | विद्वत्सु | अधि० |
| | हे विद्वन् | हे विद्वांसौ | हे विद्वांसः | सम्बो० |

[३१३] सान्तः पुंल्लिङ्गः 'पुम्स्' शब्दः (पुरुष)

| | | | | |
|-------|----------|------------|------------|---------|
| प्र० | पुमान् | पुमांसौ | पुमांसः | कर्त्ता |
| द्वि० | पुमांसम् | पुमांसौ | पुंसः | कर्म |
| तृ० | पुंसा | पुंभ्याम् | पुंभिः | करण |
| च० | पुंसे | पुंभ्याम् | पुंभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | पुंसः | पुंभ्याम् | पुंभ्यः | अपा० |
| ष० | पुंसः | पुंसोः | पुंसाम् | सम्ब० |
| स० | पुंसि | पुंसोः | पुंसु | अधि० |
| | हे पुमन् | हे पुमांसौ | हे पुमांसः | सम्बो० |

[३१४] सान्त-पुंल्लिङ्गः 'उसनस्' शब्दः (शुक्राचार्य)

| | | | | |
|-------|--------|------------|------------------|---------|
| प्र० | उशना | उशनसौ | उशनसः | कर्त्ता |
| द्वि० | उशनसम् | उशनसौ | उशनसः | कर्म |
| तृ० | उशनसा | उशनोभ्याम् | उशनोभिः | करण |
| च० | उशनसे | उशनोभ्याम् | उशनोभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | उशनसः | उशनोभ्याम् | उशनोभ्यः | अपा० |
| ष० | उशनसः | उशनसोः | उशनसाम् | सम्ब० |
| स० | उशनसि | उशनसोः | { उशनसु उशनसु | अधि० |

(१) 'पुञ्जो लुमसुन् (इत्युणादिसुप्रम्) । 'पुंसोऽदुल्' । (२) 'वश-कान्तौ' अस्मात् 'वशोः कनसिः' इत्युणादिसुत्रेण कनसिप्रत्यये 'प्रहिज्येति' सम्प्रसारणे 'उशनस्' शब्दः । ततः सौ 'ऋदुसनस्' इत्यनङि उपधादीर्घे दुलोपनलोपो ।

एकवचन

द्विवचन

बहुवचन

| | | | | |
|---|----------|----------|----------|--------|
| { | हे उशन | हे उशनसौ | हे उशनसः | सम्बो० |
| | हे उशनन् | | | |
| | हे उशनः | | | |

(३१५) सान्त-पुंल्लिङ्गः 'अनेहस्' शब्दः (काल)

| | | | | |
|-------|-----------|-------------|-----------------------|-----------|
| प्र० | अनेहाः | अनेहसौ | अनेहसः | कर्त्ता |
| द्वि० | अनेहसम् | अनेहसौ | अनेहसः | कर्म |
| तृ० | अनेहसा | अनेहोभ्याम् | अनेहोभिः | करण |
| च० | अनेहसे | अनेहोभ्याम् | अनेहोभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अनेहसः | अनेहोभ्याम् | अनेहोभ्यः | अपा० |
| ष० | अनेहसः | अनेहसोः | अनेहसाम् | सम्ब० |
| स० | अनेहसि | अनेहसोः | { अनेहसु अनेहसु | अधि० |
| | हे अनेहाः | हे अनेहसौ | | हे अनेहसः |

[३१६] सान्त-पुंल्लिङ्गो 'वेधस्' शब्दः (ब्रह्मा)

| | | | | |
|-------|--------|------------|----------|---------|
| प्र० | वेधाः | वेधसौ | वेधसः | कर्त्ता |
| द्वि० | वेधसम् | वेधसौ | वेधसः | कर्म |
| तृ० | वेधसा | वेधोभ्याम् | वेधोभिः | करण |
| च० | वेधसे | वेधोभ्याम् | वेधोभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | वेधसः | वेधोभ्याम् | वेधोभ्यः | अपा० |

(१) 'अस्य (उचनःस्रब्दस्य) सम्बुद्धौ नपुंसकानां नलोपो वा वाच्यः' (वा) । अनङि नलोपे रूपम् । (२) अनङि नलोपाऽभावे रूपम् । (३) अनङाभावे रूपम् । (४) नञि उपषदे हन्धातोः 'नञि हन् एह च' इत्युणादिसूत्रेण असुनि चकारात् एहादेशे च उपपदसमासे 'नलोपो नञः' इति लोपे 'तस्मान्नुच्चि' इति नुटि 'अनेहस्' शब्दः । ततः सौ अनङसुलोप-दीर्घ-नलोपाः । (५) विदधातीति वेधाः । 'विधाञो वेध च' इत्युणादिसूत्रेण विपूर्वात् धाम्धातोः असुन् प्रकृतेर्धादिशय । ततः सौ असन्तत्वादीर्घं सुलोपे सत्वविसर्गौ ।

| एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|----------|----------|----------------|--------|
| वेधसः | वेधसोः | वेधसाम् | सम्ब० |
| वेधसि | वेधसोः | वेधस्सु-वेधःसु | अधि० |
| हे वेधाः | हे वेधसौ | हे वेधसः | सम्बो० |

एवं चन्द्रमस्, सुमनस्, दुर्मनस्, इत्यादयः ।

[३१७] सान्त-पुँल्लिङ्गः 'सुवस्' शब्दः (ज्ञापने वाला-ढक्कन)

| | | | |
|---------|------------|----------------|---------|
| सुवः | सुवसौ | सुवसः | कर्त्ता |
| सुवसम् | सुवसौ | सुवसः | कर्म |
| सुवसा | सुवोभ्याम् | सुवोभिः | करण |
| सुवसे | सुवोभ्याम् | सुवोभ्यः | सम्प्र० |
| सुवसः | सुवोभ्याम् | सुवोभ्यः | अपा० |
| सुवसः | सुवसोः | सुवसाम् | सम्ब० |
| सुवसि | सुवसोः | सुवस्सु-सुवःसु | अधि० |
| हे सुवः | हे सुवसौ | हे सुवसः | सम्बो० |

एवं पिण्डग्रस्, पिण्डग्लस् (पिण्डको खाने वाला)

[३१८] सान्त-पुँल्लिङ्गः सर्वनाम-'अदस्' शब्दः (यह)

| | | | |
|--------|------|-------|---------|
| अंसौ | अंमू | अंमी | कर्त्ता |
| अंमुम् | अम् | अमून् | कर्म |

(१) 'वस आच्छादने' लुक्विकरणः । सु वात् अस्मात् क्विपि सुलोपे इत्ववि-
त् । इह असन्तत्वात् दीर्घस्तु न, धात्ववयवभिन्नो योऽस्तदन्तस्य दीर्घः इत्याश्र-
त् । (२) अदस् शब्दात् लीत्यदायत्वे प्राप्ते 'अदस औ सुलोपश्च' इति सकारस्य
वे सुलोपे च 'तदो सः' इति दस्य सत्वम् । (३) अदसोऽसेरिति दात्परस्य
कारस्य ऊकारः मत्वश्च । (४) अत्वे पररूपे च 'जसः शो, 'आद्गुणः,
त ईद्वहुवचनम् । (५) अत्वपररूपयोः समादसत्ताध्यायीत्यत्वेन ती प्रति ई-
देकस्य मुत्वशास्त्रस्याऽभिद्धत्वात् पूर्वम् अत्वादिविभक्तिधायै ह्ये सति उ-
त्वे । किय अकृते विभक्तिधायै असन्तत्वाऽभावात् उरमत्वचोरप्रवृत्तेः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-----------|-----------|---------|---------|
| तृ० | अमुना | अमूभ्याम् | अमीभिः | करण |
| च० | अमुभ्यै | अमूभ्याम् | अमीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अमुष्मात् | अमूभ्याम् | अमीभ्यः | अपा० |
| ष० | अमुष्य | अमुयोः | अमीषाम् | सम्ब० |
| स० | अमुष्मिन् | अमुयोः | अमीषु | अधि० |

इति हलन्तपुँल्लिङ्गशब्दाः ॥ ४ ॥

अथ हलन्तस्त्रीलिङ्गशब्दाः ॥ ५ ॥

[३१९] हकारान्तस्त्रीलिङ्गः 'उपानह्' शब्दः (जूता)

| | | | | |
|-------|-----------|------------|-----------|---------|
| प्र० | उपानत्-द् | उपानहौ | उपानहः | कर्त्ता |
| द्वि० | उपानहम् | उपानहौ | उपानहः | कर्म |
| तृ० | उपानहा | उपानह्याम् | उपानह्निः | करण |
| च० | उपानहे | उपानह्याम् | उपानह्यः | सम्प्र० |
| पं० | उपानहः | उपानह्याम् | उपानह्यः | अपा० |
| ष० | उपानहः | उपानहोः | उपानहाम् | सम्ब० |

(१) उत्वे मत्वे च कृते घित्वात् नाभावः । नाभावे कर्तव्ये मुत्वस्याऽसिद्धत्वन्तु न 'न मु ने' इति निषेधात् । एवं नाभावे कृते मुत्वस्याऽसिद्धत्वात् 'सुपि चे'ति दीर्घोऽपि न, 'न मु ने' इत्यस्य नाभावे कर्तव्ये कृते च मुभावो नाऽसिद्धः, इत्यर्थस्य जागरुकत्वात् । वस्तुतस्तु 'कृते चे'ति व्याख्यानं न युक्तिसिद्धं, सन्निपातपरिभाषयैव 'सुपि चे'ति दीर्घवारणसम्भवादिति तत्त्वविदः । (२) सर्वनामकार्यमिति विशेषः ।

इति सोत्तरायां कौमुदीरूपलतायां हलन्तपुँल्लिङ्गप्रकरणम् ॥ ४ ॥

(३) उपपूर्वात् नहेः सम्पदादित्वात् क्विपि 'नहि वृती'ति पूर्वपदस्य दीर्घः । ततः सौ हद्ब्यादिलोपे 'नहो धः' इति हस्य धः जश्त्वचत्वं ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|---------|---|---------------|-------------|---------|
| स० | उपानहि | उपानहोः | उपानत्सु | अधि० |
| | हे उपानत्-द् | हे उपानहौ | हे उपानहः | सम्बो० |
| [३२०] | हकारान्त-स्त्रीलिङ्गः 'उष्णिह्' शब्दः (पगड़ी या छन्द) | | | |
| प्र० | उष्णिक्-ग् | उष्णिहौ | उष्णिहः | कर्त्ता |
| द्वि० | उष्णिहम् | उष्णिहौ | उष्णिहः | कर्म |
| तृ० | उष्णिहा | उष्णिग्भ्याम् | उष्णिग्भिः | करण |
| च० | उष्णिहे | उष्णिग्भ्याम् | उष्णिग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | उष्णिहः | उष्णिग्भ्याम् | उष्णिग्भ्यः | अपा० |
| ष० | उष्णिहः | उष्णिहोः | उष्णिहाम् | सम्ब० |
| स० | उष्णिहि | उष्णिहोः | उष्णिक्षु | अधि० |
| | हे उष्णिक्-ग् | हे उष्णिहौ | हे उष्णिहः | सम्बो० |

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|---------|---|--------------|------------|---------|
| [३२१] | वकारान्त-स्त्रीलिङ्गो 'दिव्' शब्दः (आकाश, स्वर्ग) | | | |
| प्र० | दिवोः | दिवौ | दिवः | कर्त्ता |
| द्वि० | दिवम् | दिवौ | दिवः | कर्म |
| तृ० | दिवी | दिव्युभ्याम् | दिव्युभिः | करण |
| च० | दिवे | दिव्युभ्याम् | दिव्युभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | दिवः | दिव्युभ्याम् | दिव्युभ्यः | अपा० |
| ष० | दिवः | दिवोः | दिवाम् | सम्ब० |
| स० | दिवि | दिवोः | दिवुषु | अधि० |
| | हे दिवोः | हे दिवौ | हे दिवः | सम्बो० |

[३२२] रेफान्तः स्त्रीलिङ्गो 'गिर्' शब्दः (वाणी, सरस्वती)

(१) उत्प्लुर्वात् णिष्धातोः 'ऋत्विगिग्यादिना क्तिनि निपातनात् उदो दकारस्य लोपे षत्वे च सौ तस्य हल्परत्वात् लोपे 'क्तिन्प्रत्ययस्येति कृत्वे जसत्वचरत्वे । (२) दिव्शब्दः नित्यस्त्रीलिङ्गः । 'दोदिवौ द्वे स्त्रियामिगममरः । साधनप्रकारस्तु 'मुदिव्' शब्दवत् बोध्यम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|--------|----------|---------|---------|
| प्र० | गीः | गिरौ | गिरः | कर्ता |
| द्वि० | गिरम् | गिरौ | गिरः | कर्म |
| तृ० | गिरा | गीभ्याम् | गीभिः | करण |
| च० | गिरे | गीभ्याम् | गीभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | गिरः | गीभ्याम् | गीभ्यः | अपा० |
| ष० | गिरः | गिरोः | गिराम् | सम्ब० |
| स० | गिरि | गिरोः | गीर्षु | आधि० |
| | हे गीः | हे गिरौ | हे गिरः | सम्बो० |

एवं पुर्, जुर्, धुर् इत्यादि ।

[३२३] रेफान्तः खीलिङ्गो 'चतुर्' शब्दः नित्यं बहुवचनान्तः

प्र०-चतस्रः द्वि०-चतस्रः तृ०-चतसृभिः च०-चतसृभ्यः
पं०-चतसृभ्यः ष०-चतसृणाम् स०-चतसृषु सम्बो०-हेतस्रः

[३२४] मकारान्तः खीलिङ्गः सर्वनाम-'किम्' शब्दः (कौन स्त्री)

| | | | | |
|-------|-------|----------|--------|---------|
| प्र० | का | के | काः | कर्ता |
| द्वि० | काम् | के | काः | कर्म |
| तृ० | कया | काभ्याम् | काभिः | करण |
| च० | कस्यै | काभ्याम् | काभ्यः | सम्प्र० |

(१) 'गृ निगरणे' 'गृ शब्दे' इत्यस्माद्वा किपि 'ऋत इद्धातोः' इतीत्वम् । ततः सुवृत्पत्तिः तस्य हल्परत्वात् लोपे 'वीरुपध्याया दीर्घः' इति दीर्घे रेफस्य विसर्गः । (२) अजादौ हल्परत्वाभावात् न दीर्घः । भ्यामादौ हलि तु दीर्घः स्यादेवेति बोध्यम् । (३) परत्वात् चतुरनडुहोरि'त्यामं वाधित्वा 'त्रिचतुरोः स्त्रियामि'ति चतसृभावे सकृद्गतिन्यायेन पुनः आमोऽप्राप्तया यण् । (४) 'न तिसृचतसृ' इति दीर्घनिषेधः । (५) 'किमः कः' इति कादेशे सति अदन्तत्वाद्यम् । (६) सर्वनामप्रयुक्तार्थं सर्वशब्दवत् "सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुवद्भावः" इति स्मरणात् 'सर्वशब्दवत्' इति परममूले उक्तम् ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|---------------|---------------|-------------|---------|
| प्र० | कस्याः | काभ्याम् | काभ्यः | अपा० |
| द्वि० | कस्याः | कयोः | कासाम् | सम्ब० |
| तृ० | कस्याम् | कयोः | कासु | अधि० |
| | ० | ० | ० | ० |
| [३२५] मकारान्तः स्त्रीलिङ्ग सर्वनाम 'इदम्' शब्दः (यह स्त्री) | | | | |
| प्र० | इयम् | इमे | इमाः | कर्ता |
| द्वि० | इमाम् (एनाम्) | इमे (एने) | इमाः (एनाः) | कर्म |
| तृ० | अनया (एनया) | आभ्याम् | आभिः | करण |
| च० | अस्यै | आभ्याम् | आभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अस्याः | आभ्याम् | आभ्यः | अपा० |
| ष० | अस्याः | अनयोः (एनयोः) | आसाम् | सम्ब० |
| स० | अस्याम् | अनयोः (एनयोः) | आसु | अधि० |
| | ० | ० | ० | ० |

[३२६] जान्तः स्त्रीलिङ्गः 'स्रज्' शब्दः (फूलों की माला)

| | | | | |
|-------|---------|-------------|-----------|---------|
| प्र० | स्रक्-ग | स्रजौ | स्रजः | कर्ता |
| द्वि० | स्रजम् | स्रजौ | स्रजः | कर्म |
| तृ० | स्रजा | स्रग्भ्याम् | स्रग्भिः | करण |
| च० | स्रजे | स्रग्भ्याम् | स्रग्भ्यः | सम्प्र० |

(१) 'यः सौ' इति दकारस्य यत्वे सति अत्वं बाधित्वा 'इदमो मः' इति मकारस्य मकारे सुलोपः । (२) अत्वे पररूपे अदन्तत्वात् टापि 'दध' इति मत्वे 'औल आपः' इति शोभावे गुणः । अत्र=इदम् शब्दे, विभक्तौ सत्यां त्यदाद्यत्वं, पररूपं, टाप् च सर्वत्र भवन्तीति विशेषः । अन्यत् कार्यं सुगमम् । कौटान्तर्गतः पाठः अन्वादेशविषयकः । तत्र 'द्वितीया टौत्स्वेनः' इति बोध्यम् । (३) 'स्रज्' विसर्गो अस्मात् 'ऋत्विगि'त्यादिना किन्नि निपातनात् ऋकारात्परोऽमागमे च यणि 'स्रज्' शब्दः, ततः सोलोपे कुत्वे जदत्वचत्वे ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|--|-------------|-------------|-----------|--------|
| पं० | स्रजः | स्रग्भ्याम् | स्रग्भ्यः | अपा० |
| ष० | स्रजः | स्रजोः | स्रजाम् | सम्ब० |
| स्र० | स्रजि | स्रजोः | स्रक्षु | अधि० |
| | हे स्रक्-ग् | हे स्रजौ | हे स्रजः | सम्बो० |
| एवं रुक्-ग् रुजौ रुजः इत्यादि (रुज् रोग) | | | | |

[३२७] दकारान्तः स्त्रीलिङ्गः सर्वनाम 'त्यत्' शब्दः (वह स्त्री)

| | | | | |
|-------|------------|------------|----------|---------|
| प्र० | स्या | त्ये | त्याः | कर्ता |
| द्वि० | त्याम् | त्ये | त्याः | कर्म |
| तृ० | त्यया | त्याभ्याम् | त्याभिः | करण |
| च० | त्यस्यै | त्याभ्याम् | त्याभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | त्यस्याः | त्याभ्याम् | त्याभ्यः | अपा० |
| ष० | त्यस्याः | त्ययोः | त्यासाम् | सम्ब० |
| स्र० | त्यास्याम् | त्ययोः | त्यासु | अधि० |
| | ० | ० | ० | ० |

एवं तद्=साँ, ते, ताः । यद्=या, ये, याः । एतद्=एषा, एते, एताः इत्यादि बोध्यम् ।

[३२८] चकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'वाच्' शब्दः (वाक्य, वाणी)

| | | | | |
|-------|---------|------------|---------|-------|
| प्र० | वाक्-ग् | वाचौ | वाचः | कर्ता |
| द्वि० | वाचम् | वाचौ | वाचः | कर्म |
| तृ० | वाचा | वाग्भ्याम् | वाग्भिः | करण |

(१) 'त्यत्' शब्दस्य सुपि भत्वे पररूपे अदन्तत्वात् टापि सर्वाशब्दवत् कार्याणि । सौ तु 'तदो सः सौ' इति विशेषः । (२) अत्राऽपि सत्वमिति विशेषः । (३) अत्र तु तकारस्य सत्वे 'आदेशप्रत्यययोः' इति षत्वमपीति विशेषः । (४) वचेः 'क्विच्चो'त्यादिना क्विदीर्घोऽसम्प्रसारणं च । ततः सोऽपि 'चो कृः' इति कृत्वे जश्त्वचत्वे ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|------------|------------|----------|---------|
| च० | वाचे | वाग्भ्याम् | वाग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | वाचः | वाग्भ्याम् | वाग्भ्यः | अपा० |
| ब० | वाचः | वाचोः | वाचाम् | सम्ब० |
| स० | वाचि | वाचोः | वाक्षु | अधि० |
| | हे वाक्-ग् | हे वाचौ | हे वाचः | सम्बो० |

एवं त्वच् (चर्म, वल्कल), रुच् (शोभा, दीप्ति, स्पृहा), ऋच् (वेदमन्त्र) आदि चकारान्ताः ।

[३२९] पान्तः स्त्रीलिङ्गः 'अप्' शब्दो नित्यं बहुवचनान्तः (जल)

| | | | |
|-------------|-----------|------------|---------------|
| प्र०-आपः | द्वि०-अपः | तृ०-अङ्गिः | च०-अङ्ग्यः |
| पं०-अङ्ग्यः | ब०-अपाम् | स०-अप्सु | सम्बो० हे आपः |

[३३०] शकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'दिश्' शब्दः (दिशा)

| | | | | |
|-------|------------|------------|----------|---------|
| प्र० | दिक्-ग् | दिशौ | दिशः | कर्ता |
| द्वि० | दिशम् | दिशौ | दिशः | कर्म |
| तृ० | दिशा | दिग्भ्याम् | दिग्भिः | करण |
| च० | दिशे | दिग्भ्याम् | दिग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | दिशः | दिग्भ्याम् | दिग्भ्यः | अपा० |
| ब० | दिशः | दिशोः | दिशाम् | सम्ब० |
| स० | दिशि | दिशोः | दिक्षु | अधि० |
| | हे दिक्-ग् | हे दिशौ | हे दिशः | सम्बो० |

[३३१] शकारान्तः स्त्रीलिङ्गो 'दृश' शब्दः (नेत्र)

| | | | | |
|------|---------|------|------|-------|
| प्र० | दृक्-ग् | दृशौ | दृशः | कर्ता |
|------|---------|------|------|-------|

(१) 'आप्नोतेर्ह्रस्वश्च' इत्युणादिसूत्रेण ह्रस्वः चकारात् किपि 'अप्' शब्दः । तस्माज्जसि 'अप्सृजि'ति दीर्घे रुत्वविसर्गौ । (२) 'अगोभि' इति पकारस्य तकारे षत्वम् । (३) 'दिश अतिसर्जने' । 'ऋत्विगि'त्यादिना किन् । षडगकाः प्राग्वत् । (४) दृश्यन्ते अर्था अनयेति विप्रहे सम्पदादित्वात् दृशोः किप् । ततः सुलोपे

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------|-----------|--------|---------|
| द्वि० | दशम् | दशौ | दशः | कर्म |
| तृ० | दशा | दशभ्याम् | दशभिः | करण |
| च० | दशे | दशभ्याम् | दशभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | दशः | दशगभ्याम् | दशभ्यः | अपा० |
| ष० | दशः | दशोः | दशाम् | सम्ब० |
| स० | दशि | दशोः | दक्षु | अधि० |
| | हे दक्-ग् | हे दशौ | हे दशः | सम्बो० |

[३३२] षान्तः स्त्रीलिङ्गः त्विष् शब्दः (प्रभा, शोभा, कान्ति)

| | | | | |
|-------|--------------|--------------|---------------------|---------|
| प्र० | त्विट्-ङ् | त्विषौ | त्विषः | कर्ता |
| द्वि० | त्विषम् | त्विषौ | त्विषः | कर्म |
| तृ० | त्विषा | त्विड्भ्याम् | त्विड्भिः | करण |
| च० | त्विषे | त्विड्भ्याम् | त्विड्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | त्विषः | त्विड्भ्याम् | त्विड्भ्यः | अपा० |
| ष० | त्विषः | त्विषोः | त्विषाम् | सम्ब० |
| स० | त्विषि | त्विषोः | त्विट्त्सु-त्विट्सु | अधि० |
| | हे त्विट्-ङ् | हे त्विषौ | हे त्विषः | सम्बो० |

एवं रुष् (क्रोध), विष् (विष्टा), विष्णुष् (बुन्द) प्रभृतयः ।

[३३३] षान्तः स्त्रीलिङ्गः 'सजुष्' शब्दः (साथी, मित्र)

| | | | | |
|------|------|-------|-------|-------|
| प्र० | सजुः | सजुषौ | सजुषः | कर्ता |
|------|------|-------|-------|-------|

षडगकाः प्राग्वत् । नचात्र किपो विधानात् 'किन्प्रत्ययस्ये'ति कुत्वं कथमिति वाच्यम् , सूत्रे किन्प्रत्ययो यस्मादिति बहुव्रीह्याश्रयणेन 'त्यादादिष्वि'ति दशोः किन्विधानस्य दृष्टत्वात् । (१) 'त्विष दीप्तौ' अस्मात् किप् सुलोपे जश्त्वचत्वे । (२) 'ङः सि धुट्' इति विशेषः । (३) सह जुषते इति सजुः । 'जुषी प्रीति सेवनयोः' अस्मात् किपि 'सहस्य सः संज्ञायाम्' इति सहस्य सभावे संयोगान्तलोपं प्रनाध्य सुलोपे 'ससजुषो रुः' इति रुत्वे 'वोरुपधायाः' इति दीर्घे विसर्गः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------|-----------|-------------|---------|
| द्वि० | सजुषम् | सजुषौ | सजुषः | कर्म |
| तृ० | सजुषा | सजूभ्याम् | सजूभिः | करण |
| च० | सजुषे | सजूभ्याम् | सजूर्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सजुषः | सजूभ्याम् | सजूर्भ्यः | अपा० |
| ष० | सजुषः | सजुषोः | सजुषाम् | सम्ब० |
| स० | सजुषि | सजुषोः | सजूषु-सजूषु | अधि० |
| | हे सजूः | हे सजुषौ | हे सजुषः | सम्बो० |

[३३४] षान्तः स्त्रीलिङ्गः 'आशिष्' शब्दः (आशीर्वाद)

| | | | | |
|-------|--------|-----------|--------------|-----------|
| प्र० | आशीः | आशिषौ | आशिषः | कर्ता, स० |
| द्वि० | आशिषम् | आशिषौ | आशिषः | कर्म |
| तृ० | आशिषा | आशीभ्याम् | आशीभिः | करण |
| च० | आशिषे | आशीभ्याम् | आशीर्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | आशिषः | आशीभ्याम् | आशीर्भ्यः | अपा० |
| ष० | आशिषः | आशिषोः | आशिषाम् | सम्ब० |
| स० | आशिषि | आशिषोः | आशीषु-आशीःसु | अधि० |

[३३५] सकारान्तः स्त्रीलिङ्गः सर्वनाम 'अदस्' शब्दः (यह स्त्री)

| | | | | |
|-------|-------|-----------|--------|-------|
| प्र० | असौ | अमुं | अमूः | कर्ता |
| द्वि० | अमूम् | अमू | अमूः | कर्म |
| तृ० | अमुया | अमूभ्याम् | अमूभिः | करण |

(२) 'आठः शासु इच्छायाम्' अस्मात् क्विपि 'आशासः क्रात्रुपघाया इत्वं वाच्यम्' इत्युपघाया इत्वे 'शासिवधी'ति षत्वे सोलौपे सति षत्वस्याऽसिद्धत्वात् षत्वे 'वोरि'ति दीर्घे रेफस्य विसर्गः । (१) अदश्शब्दस्य स्त्रियामपि पुंवदेव सौ रूपम् । (२) 'अदस् औ' इति स्थिते अत्वे पररूपे टापि औठः शीभावे गुणे ऊवमत्वे । (अत्र अदश्शब्देऽपि विभक्तौ सत्याम् अत्वं, पररूपं, टाबित्येतत् सर्वत्र शेषम्) (३) 'आठि चापः' । (४) टापि अदन्तत्वाभावदेत्वाऽप्राप्तया ईत्वाभावः ।

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-----|-----------|-----------|---------|---------|
| च० | अमुंश्चै | अमूभ्याम् | अमूभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | अमुभ्याः | अमूभ्याम् | अमूभ्यः | अपा० |
| ष० | अमुभ्याः | अमुयोः | अमूषाम् | सम्ब० |
| स० | अमुभ्याम् | अमुयोः | अमूषु | अधि० |

[३३६] त्यदाद्यतिरिक्ताः तकारान्त-स्त्रीलिङ्गशब्दाः 'मूभृत्'वत्
यथा—योषित् (नारी), सरित् (नदी), तडित् . विद्युत् ,
(सौदामिनी, बिजली) आदि ।

[३३७] त्यदात्यतिरिक्ताः दकारान्त स्त्रीलिङ्गशब्दाः 'सुहृद्'वत्
यथा—आपद् , विपद् , (अमङ्गल) सम्पद् (सम्पत्ति), संसद् ,
परिषद् (सभा), दृषद् (प्रस्थर), संविद् (ज्ञान), उपनिषद् ,
(वेदान्त), शरद् (ऋतुविशेष) आदि ।

[३३८] धकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'क्षुध्' शब्दः (क्षुधा)

| | | | | |
|-------|----------|------------|-----------|---------|
| प्र० | क्षुव-द् | क्षुधौ | क्षुधः | कर्ता |
| द्वि० | क्षुधम् | क्षुधौ | क्षुधः | कर्म |
| तृ० | क्षुधा | क्षुध्याम् | क्षुद्भिः | करण |
| च० | क्षुधे | क्षुध्याम् | क्षुध्वः | सम्प्र० |
| पं० | क्षुधः | क्षुध्याम् | क्षुध्वः | अपा० |
| ष० | क्षुधः | क्षुधोः | क्षुधाम् | सम्ब० |
| स० | क्षुधि | क्षुधोः | क्षुत्सु | अधि० |

एवं वीरुध् (लता), युध् (युद्ध) समिध् (यज्ञकाष्ठ) इत्यादयः ।

[३३९] नकारान्तः स्त्रीलिङ्गः 'सीमन्' शब्दः (सीमा, अवधि)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|---------------|-----------|----------|-----------|
| प्र० | सीमा | सीमानौ | सीमानः | कर्ता, स० |
| द्वि० | सीमानम् | सीमानौ | सीमन्तः | कर्म |
| तृ० | सीम्ना | सीमभ्याम् | सीमभिः | करण |
| च० | सीम्ने | सीमभ्याम् | सीमभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | सीम्नः | सीमभ्याम् | सीमभ्यः | अपा० |
| ष० | सीम्नः | सीम्नोः | सीम्नाम् | सम्ब० |
| स० | सीम्निः सीमनि | सीम्नोः | सीमसु | अधि० |

एवं दामन् (रस्ती) पामन् (खजुली), बहुयज्वन् इत्यादयः ।

एतेषां विकल्पेन 'रमा' वत् रूपाणीति ।

[३३९] भकारान्तः स्त्रीलिङ्ग 'ककुम्' शब्दः (दिक्)

| | | | | |
|-------|----------|-------|-------|-------|
| प्र० | ककुप्-व् | ककुभौ | ककुभः | कर्ता |
| द्वि० | ककुभम् | ककुभौ | ककुभः | कर्म |

इत्योदि 'गुप्' शब्दवत् ।

इति हलन्तस्त्रीलिङ्गशब्दाः ॥ ५ ॥

(१) 'षिष् बन्धने' अस्मात् ओणादिको मनिन् प्रकृते दीर्घश्च । ततः स्त्रीत्व-विवक्षायां नान्तत्वात् ङीप्प्राप्तः 'मनः' इति निषेधात् भवति । एवञ्च राजवत् रूपं ज्ञेयम् । (२) 'जनो बहुव्रीहेः' इति निषेधात् ङीप् न । (३) 'डावुभाभ्यामन्य-तरस्याम्' इत्यनेनेति भावः । (४) 'योषित्' शब्दशरभ्य एतत् पर्यन्तं ग्रन्थ-प्रसङ्गार्थं (शिष्यबुद्धिवैशार्थं) लिखितमिति ।

इति सौत्तरायां कौमुदीरूपलतायां हलन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरणम् ॥ ५ ॥

अथ हलन्तनपुंसकलिङ्गशब्दाः ॥६॥

[३४०] हान्तो नपुंसकलिङ्गः 'स्वनडुह्' शब्दः

(अच्छे वैलवाला कुल)

| एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|------------------------|----------------|--------------|----------|
| प्र० द्वि० स्वनडुह्-द् | स्वनडुही | स्वनड्वांहि | क० क० स० |
| तृ० स्वनडुहा | स्वनडुद्भ्याम् | स्वनडुद्भिः | करण |
| च० स्वनडुहे | स्वनडुद्भ्याम् | स्वनडुद्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० स्वनडुहः | स्वनडुद्भ्याम् | स्वनडुद्भ्यः | अपा० |
| ष० स्वनडुहः | स्वनडुहोः | स्वनडुहाम् | सम्ब० |
| स० स्वनडुहि | स्वनडुहोः | स्वनडुत्सु | अधि० |

[३४१] वान्त-नपुंसकलिङ्गो 'विमलदिव्' शब्दः

(स्वच्छ आकाश वाला दिन)

| प्र० द्वि० विमलद्यु | विमलदिवी | विमलदिवि | क० कर्म |
|-----------------------------|----------|----------|---------|
| तृतीयादिषु 'दिव्' शब्दवत् । | | | |

(१) सु = शोभनाः अनड्वाहः यस्य कुलस्येति बहुव्रीहिः । सुञ्जिकि प्रत्यय-
लक्षणाऽभावात् आमादिकं न भवति, वसुस्रमि'ति दत्वं तु भवत्येव तस्य सुवन्तत्व-
रूपपदत्वनिमित्तकतया आङ्कार्यत्वाभावात् । (२) शिभावे शोः सर्वनामस्थान-
त्वात् आमि जुमि 'नश्चे'त्यनुस्वारः । (३) विमला यौः = आकाशं, यस्य अहः
इति बहुव्रीहिः । ततः सोर्लुकि 'दिव उत्' इत्युत्वे यण् । नच 'राजपुरुषः' इ-
त्यादौ यथा पूर्वपदस्य प्रत्ययलक्षणेन पदत्वात् नलोपो भवति तद्वदिहापि उत्तरख-
ण्डस्य 'दिव्' इत्यस्य प्रत्ययलक्षणेन पदत्वात् 'दिव उत्' इत्युत्वं कुतो न, प्रत्यय-
लक्षणनिषेधस्तु न पदसंज्ञायाः सुवन्तधर्मतयाऽङ्गधर्मत्वाभावेन तत्र 'न लुमते'ति
निषेधस्याऽप्रवृत्तेः, इति वाच्यम्, 'उत्तरपदत्वे चाऽपदादिविधौ प्रतिषेधः' (वा०)
इति प्रत्ययलक्षणप्रतिषेधात् । उत्तरपदशब्देनात्र उत्तरपदमुच्यते तथा च-उत्तर-
पदस्य पदत्वे=पदव्यपदेशे कर्तव्ये प्रत्ययलक्षणं न भवतीत्यर्थः ।

[३४२] रेफान्त-नपुंसकलिङ्गो 'वारू' शब्दः (जल)

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|------------|-------|-----------|---------|---------|
| प्र० द्वि० | वाः | वारी | वारि | क० कल |
| तृ० | वारा | वाभ्याम् | वार्भिः | करण |
| च० | षारे | वाभ्याम् | वाभ्यः | सम्प्र० |
| पं० | वारः | वाभ्याम्ः | वाभ्यः | अपा० |
| ष० | वारः | वारोः | वाराम् | सम्ब० |
| स० | वारि | वारोः | वार्षु | अधि० |

[३४३] रेफान्त-नपुंसकलिङ्गो नित्यं बहुवचनान्तः 'चतुर्' शब्दः ।

| | | | |
|---------------|---------------|--------------|------------------|
| प्र०-चत्वारि | द्वि०-चत्वारि | तृ०-चतुर्भिः | च०-चतुर्भ्यः |
| पं०-चतुर्भ्यः | ष०-चतुर्णाम् | स०-चतुर्षु | सम्ब० हे चत्वारि |

[३४४] मान्त-नपुंसकलिङ्गः सर्वनाम 'किम्' शब्दः ।

| | | | |
|----------------|----|------|---------|
| प्र०द्वि० किम् | के | कानि | क० कर्म |
| शेषं पुंवत् । | | | |

[३४५] मान्त-नपुंसकलिङ्गः सर्वनाम 'इदम्' शब्दः ।

| | | | | |
|-------|----------------|--------------|------------------|---------|
| प्र० | इदम् | इमे | इमानि | कर्त्ता |
| द्वि० | { इदम् एनत् | { इमे एने | { इमानि एनानि | कर्म |

शेषं पुंवत् ।

[३४६] नान्तः नपुंसकलिङ्गो 'ब्रह्मन्' शब्दः (ब्रह्मा)

(१) वार्शब्दात् सोर्लृकि रेफस्य विसर्गः । (२) रेफस्य इणत्वेन ततः परत्वात् पत्वम्, विसर्गस्तु न रुसम्बन्धिरेफाभावात् । (३) शिभावे सर्वनामस्थानत्वात् 'चतुरनङ्कः' इत्यामि यण् । (४) 'न लुमते'ति प्रत्ययलक्षणनिषेधात् कादेशो न । (५) 'न लुमते'ति प्रत्ययलक्षणनिषेधात् 'इदमो मः' 'दश्चे'त्यादिविधयो न भवन्ति । (६) 'अन्वादेशे नपुंसके एनद्वक्त्वव्यः' (वा०) ।

एकवचन

द्विवचन

बहुवचन

| | | | |
|------------------------|-------------|--------------|----------|
| प्र० द्वि० ब्रह्म | ब्रह्मणी | ब्रह्माणि | क० कर्म० |
| हे ब्रह्मान्-हे ब्रह्म | हे ब्रह्मणी | हे ब्रह्माणि | सम्बो० |

शेष पुंवत् ।

एवं वर्मन् (कवच), चर्मन् (मृगादि चर्म, ढाल), शर्मन् (सुख कल्याण), मर्मन् (रुन्धिस्थान) कर्मन् (काम), नर्मन् (परिहास), वर्तमन्, (पथ), पर्वन् (ग्रन्थि, उत्खव) इत्यादयः ।

[३४७] नान्त-नपुंसकलिङ्गः 'अहन्' शब्दः (दिन)

| | | | |
|---------------|-----------|--------------|-----------|
| प्र०द्वि० अहः | अहो-अहनी | अहानि | क०कर्म०स० |
| तृ० अहा | अहोभ्याम् | अहोभिः | करण |
| च० अहे | अहोभ्याम् | अहोभ्यः | सम्प्र० |
| पं० अहः | अहोभ्याम् | अहोभ्यः | अपा० |
| ष० अहुः | अहोः | अहाम् | सम्ब० |
| स० अहि-अहनि | अहोः | अहःसु-अहस्सु | अधि० |

[३४८] नकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'नामन्' शब्दः (संज्ञा)

| | | | |
|----------------|--------------|---------|---------|
| प्र०द्वि० नामं | नाम्नी-नामनी | नामानि | क०कर्म० |
| तृ० नाम्ना | नामभ्याम् | नामभिः | करण |
| च० नाम्ने | नामभ्याम् | नामभ्यः | सम्प्र० |

(१) 'सम्बुद्धौ नपुंसकानां नलोपो वा वाच्यः' (वा०) । (२) सुब्लुकि अपवादात् 'अहन्ति'ति सूत्रं प्रवाध्य रोऽसुपि' इति रेफादेशे विसर्गः, अतः 'अहर्माती'त्यत्रोत्वन्नः । (३) 'विभाषाच्छियोः' । (४) 'अहन्ति'ति स्त्वे उत्वे गुणः । नचात्र, 'अहः' इत्यत्र च, रत्वस्त्वयोरसिद्धत्वाज्जलोपः कुतो नेति वाच्यम्, अहन्नित्यावर्त्य एकेन नलोपाऽभावनिपातनेनादोषात् । अपवादात्वात् रत्वस्त्वे स्यातामिति न वाच्यम्, हे अहः इत्यादौ 'न चिसम्बुद्धयोः इति नलोपनिषेधस्थले चारितार्थात् । (५) इदमत्र प्रपञ्चार्थं लिखितम् । (६) विभाषाच्छियोः' । (७) भ्यामादौ हलि 'स्वादिष्वि'ति पदत्वान्नलोपः ।

एकवचन द्विवचन बहुवचन

| | | | | |
|-----|--------------|----------------|----------|--------|
| पं० | नाम्नः | नामभ्याम् | नामभ्यः | अपा० |
| ष० | नाम्नः | नाम्नोः | नाम्नाम् | सम्ब० |
| स० | नास्मि-नामनि | नाम्नोः | नामसु | अधि० |
| | हे नामन्-नाम | हेनास्मी-नामनी | हेनामानि | सम्बो० |

एवं धामन् (तेज, निवासस्थान), व्योमन् (आकाश) दामन् (रस्सी) प्रेमन् (स्नेह), वेमन् (तांत), सामन् (वेदविशेष, मैत्री), सद्मन् (गृह), मस्मन् (रास्त्र), लक्ष्मन् (चिह्न), इत्यादयः ।

[३४९] नान्त-नपुंसकलिङ्गो 'दण्डिन्' शब्दः (दण्डधारी कुल)

| | | | | | | |
|------|-------|---------|---------|---------|----|------|
| प्र० | द्वि० | दण्डिन् | दण्डिनी | दण्डीनि | क० | कर्म |
|------|-------|---------|---------|---------|----|------|

शेषं पुंवत् (सम्बुद्धौ तु नलोपो विशषः) ।

एवं स्रग्विन् (मालाधारी), वग्निन् (न्याय से बोलने वाला)

[३५०] जान्त-नपुंसकलिङ्गः 'असृज्' शब्दः (रक्त)

| | | | | |
|------|----------|-------|---------|---------|
| प्र० | असृक्-ग् | असृजी | असृञ्जि | कर्त्ता |
|------|----------|-------|---------|---------|

(१) सम्बुद्धौ नपुंसकानां नलोपो वा वाच्यः । (२) दण्डोऽस्यास्तीत्यर्थे 'अत इति ठनौ' इति इतिः । (३) 'अस्मायामेधास्रजो विनिः' इति विनिः । अन्तर्वर्तिनां विभक्तिमाश्रित्य पदत्वात् स्रजो जकारस्य कुत्वम् । (४) 'वाचोविमनिः' इति विमनिः । तद्धितत्वात् गकार इत् । चकारस्य जश्चं कुत्वम् । (५) नयपूर्वात् सृजधातोः सम्पदादिभ्यः क्विप् इति क्विपि उपपदसमासे नजो नस्य लोपे असृज् शब्दः तस्य स्वमोर्लृकि असृजः पदान्ते कुत्वम् । अयम्भावः-असृग्शब्दस्य पदान्तविषये किन्प्रत्ययस्येति कुत्वं भवति । यद्यप्यत्र क्विप्प्रत्ययो नतु किन् तथापि कुत्वमेव, किन्प्रत्ययस्य कुरित्यत्र 'किन्त्यतः कुरि' इति वक्तव्ये प्रत्ययग्रहणसामर्थ्येनात्र वीष्पागर्भदहुमोहिलाभः । तथाच यस्मात् किन् हट्टः तस्य २ कुत्वं भवतीति फलितोऽर्थः, अतश्च स्रागित्यत्र सृजेः किनो विधानात् असृगित्यत्र क्विप्प्रत्ययेऽपि कुत्वप्राप्तेः नचैवं विश्वस्यदित्यत्रापि

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन | |
|-------|-----------------------|-------------------------|---------------------|---------|
| द्वि० | असृक्-ग् | असृजी | असृनि-असृञ्जि | कर्म |
| तृ० | { अस्ना असृजा | असभ्याम् असृग्भ्याम् | असभिः असृग्भिः | करण |
| च० | { अस्ने असृजे | असभ्याम् असृग्भ्याम् | असभ्यः असृग्भ्यः | सम्प्र० |
| पं० | { अस्तः असृजः | असभ्याम् असृग्भ्याम् | असभ्यः असृग्भ्यः | अपा० |
| ष० | { अस्तः असृजः | अस्तोः असृजोः | अस्नाम् असृजाम् | सम्ब० |
| स० | { अस्नि-असनि असृजि | अस्तोः असृजोः | अससु असृक्षु | अधि० |

[३५१] जान्त-नपुंसकलिङ्गः 'ऊर्जू' शब्दः (बल, तेज)

| | | | | |
|-----------|----------|-------------|-------|--------|
| प्र.द्वि. | ऊर्क्-ग् | ऊर्जी | ऊर्जि | क.क.स. |
| | | शेषं पुंवत् | | |

कुत्वापत्तिरिति वाच्यम्, 'सृजिदृशोर्ज्ञत्यमकिति' इति सूत्रे रज्जुसृङ्भ्यामिति-
भाष्यप्रयोगात्तत्र कुत्वस्याप्रसक्तेः । नचैवं सति असृज् शब्देऽपि कुत्वं न स्या-
दिति वाच्यम्, अनव्ययपूर्वपदस्यैव सृजेर्भाष्यप्रयोगतः कुत्वाभावबोधनात् । ननु
षत्वविधायकसूत्रे सृजसृज-यजेति विशिष्यग्रहणात् षत्वस्य कुत्वापवादत्वात् षत्व-
स्यैव प्राप्तिः नतु कुत्वस्येत्यरुचेराह परममूले-"यद्वा व्रश्चेति सूत्रे" इति । अनेन
पदान्ते षत्वं विधीयते षत्वं तु कुत्वापवादः, तेन असृजः किप्रत्ययान्तस्य षत्वमेवो-
चितम्, अगिति तु 'ऋत्विगि'त्यादिना निपातनाद्धोध्यः अयमभिप्रायः-निपातनं
नाम 'अन्यादृशे प्रयोगे प्राप्तेऽन्यादृशप्रयोगकरणम्' निपातनेनाऽपवादशास्त्राऽप्रवृ-
त्तिमात्रं बोध्यते कुत्वं तु सूत्रेणैवेति बोध्यम् । असृगिति तु अस्यतेरीणादिकेन रिच्-
प्रत्ययेन बोध्यम् । (१) 'पद्दन्ति'ति वा असन् । (२) 'रात्सस्येति नियमान्न
संयोगान्त लोपः । (३) शिभावे झलन्तत्वान्नुप् सच मित्वादन्त्यादचः ऊकारात्
परो भवतीति नरजानां संयोगो बोध्यः ।

[३५२] जान्त-नपुंसकलिङ्गो 'बहुर्ज्' शब्दः

प्र. द्वि. बहुर्क्-ग् बहुर्जा बहुर्जि-बहूर्जि क.क.स.
शेषमूर्ज्शब्दवत् ।

[३५३] दकारान्त-नपुंसकलिङ्गः सर्वनाम 'त्यद्' शब्दः

प्र. द्वि. त्यत्-द् त्ये त्यानि । क० कर्म
शेषं पुंवत् ।

एवं तद्, यद्, एतद्, शब्दाः ।

[३५४] चकारान्त-नपुंसकलिङ्गो 'गर्वाच्' शब्दः
(गोपूजक, गोके पीछे जाने वाला)

प्रथमा=कर्ता ॥ १६ ॥

एक० { गतौ-गवाक्, गवाग्, गोअक्, गोअग्, गोऽक्, गोऽग्
पूजायां-गवाङ्, गोअङ्, गोऽङ् (९)

द्वि० ग० पू०-गोच्ची, गवाञ्ची, गोअञ्ची, गोऽञ्ची (४)

बहु० ग० पू०-गवाञ्चि, गोअञ्चि, गोऽञ्चि (३)

(१) "बहूर्जि नुमप्रतिषेधः । "अन्त्यात् पूर्वो वा नुम्" इति वार्तिकद्वयम् ।
बहूर्ज्शब्दे अन्त्यादचः उकारादुपरि नुमः प्रतिषेधो वक्तव्यः, किन्तु अन्त्यात्
वर्णात् पूर्वो नुम्वा स्यादित्यर्थः । ततश्च जकारात्पूर्वरेफादुपरि नुमि कृते
ऽनुत्वस्याऽपिदत्त्वात् 'नश्चे'ति नस्यानुस्वारे तस्य परस्वर्गो जकारः । नुमभावे
बहूर्जि' इति ।

(२) जायन्ते नव सौ, तथाऽमि० च नव, भ्यां भिद्-भ्यसां सप्तमे ।

षट् संख्यानि, नद्यैव सुप्यथ जप्ति शीण्येव, तद्ब्रह्मि ॥ १ ॥

चत्वार्यन्यवचस्यु कस्य विद्युधाः शब्दस्य रूपाणि तत् ।

जानन्तु प्रतिभाऽस्ति चेन्निगदितुं बाण्मासिकोऽग्राऽवधिः ॥ २ ॥

इति नरपति सभायां क्वचित् केनचित् प्राचीनेन कृतस्याऽऽक्षेपस्य प्राचीनैव

द्वितीया=कर्म ॥ १६ ॥

- एक० { गतौ—गवाक्, गवाग्, गोअक्, गोअग्, गोऽक्, गोऽग्
पूजायां—गवाङ्, गोअङ्, गोऽङ् (९)
- द्वि० ग० पू०—गोची, गवाञ्ची, गोअञ्ची, गोऽञ्ची (४)
- बहु० ग० पू०—गवाञ्चि, गोअञ्चि, गोऽञ्चि (३)

तृतीया=करण ॥ १६ ॥

- एक० ग० पू०—गोचा, गवाञ्चा, गोअञ्चा, गोऽञ्चा (४)
- द्वि० { गतौ— गवाग्भ्याम्, गोअग्भ्याम्, गोऽग्भ्याम्
पूजायां—गवाङ्भ्याम्, गोअङ्भ्याम्, गोऽङ्भ्याम् (६)
- बहु० { गतौ— गवाग्भिः, गोअग्भिः, गोऽग्भिः
पूजायां—गवाङ्भिः, गोअङ्भिः, गोऽङ्भिः (६)

चतुर्थी=सम्प्रदान ॥ १६ ॥

- एक० ग० पू०—गोचे, गवाञ्चे, गोअञ्चे, गोऽञ्चे (४)
- द्वि० { गतौ— गवाग्भ्याम्, गोअग्भ्याम्, गोऽग्भ्याम्
पूजायां—गवाङ्भ्याम्, गोअङ्भ्याम्, गोऽङ्भ्याम् (६)
- बहु० { गतौ— गवाग्भ्यः, गोअग्भ्यः, गोऽग्भ्यः
पूजायां—गवाङ्भ्यः, गोअङ्भ्यः, गोऽङ्भ्यः (६)

वण्डितैः कैश्चित् 'गवाक्शब्दस्ये'त्यादिना 'विभावय' इत्यन्तेन श्लोकद्वयेन समा-
हितम् । तदेव प्रकृतोपयोगादाह परममूले—

गवाक्छब्दस्य रूपाणि क्लीवेऽर्चागतिभेदतः ।

असन्ध्यवङ्पूर्वरूपैर्नवाऽधिकशतं मतम् ॥ १ ॥

स्वम्सुप्सु नव षड्भादौ षट्के स्युल्लोणि जश्शसोः ।

चत्वारि शेषे दशके रूपाणीति विभावय ॥ २ ॥ इति ॥

'अनदितागमिति अञ्चेर्गतौ नकारस्य लोपः, पूजायान्तु 'नाञ्चेः पूजायागमिति
निषेधान्नस्य लोपो नेत्येवं गतिपूजाप्रयुक्तकार्यभेदनिबन्धनलोपतदभावाभ्यामिति
यावत् । असन्धीगति प्रकृतभावो विवक्षितः । 'असन्ध्यवङ् पूर्वरूपैरि'त्यन्तरं च श-
ब्दोऽध्याहर्तव्यः । शतमित्यन्तरम् इति शब्दश्च, तथा च गत्यर्थपूजार्थभेदनिव-

पञ्चमी=अपादान ॥ १६ ॥

एक० ग० पू०-गोचः, गवाञ्चः, गोअञ्चः, गोऽञ्चः (४)

द्वि० { गतौ- गवाग्भ्याम्, गोअग्भ्याम्, गोऽग्भ्याम्
पूजायां-गवाङ्भ्याम्, गोअङ्भ्याम्, गोऽङ्भ्याम् (६)

बहु० { गतौ- गवाग्भ्यः, गोअग्भ्यः, गोऽग्भ्यः ।
पूजायां-गवाङ्भ्यः, गोअङ्भ्यः, गोऽङ्भ्यः (६)

षष्ठी=सम्बन्ध ॥ १२ ॥

एक० ग० पू०-गोचः, गवाञ्चः, गोअञ्चः, गोऽञ्चः (४)

द्वि० ग० पू०-गोचोः, गवाञ्चोः, गोअञ्चोः, गोऽञ्चोः (४)

बहु० ग० पू०-गोचाम्, गवाचाम्, गोअचाम्, गोऽचाम् (४)

सप्तमी=अधिकरण ॥ १७ ॥

एक० ग० पू०-गोचि, गवाञ्चि, गोअञ्चि, गोऽञ्चि (४)

द्वि० ग० पू०-गोचोः, गवाञ्चोः, गोअञ्चोः, गोऽञ्चोः (४)

बहु० गतौ- गवाञ्शु, गोअञ्शु, गोऽञ्शु । पूजायां-गवाङ्शु,

न्धननलोपतदभावाभ्याम्, असन्ध्यवङ्पूर्वरूपेथ गवाङ्शब्दस्य रूपाणि नवाधिक-
शतमिति मतं =संमतमित्यर्थः । एवञ्चोक्तसंख्यामेव व्यवस्थापयति-“स्वम्सुप्सु”
इति । प्रत्येकमिति शेषः । रूपाणीति-सर्वत्राऽन्वेति । षड्भादाविति भिसि भ्यां
त्रये, भ्यसूत्रे च प्रत्येकं पठित्यर्थः । ‘त्रीणि जशसोरिगति-प्रत्येकमिति शेषः ।
‘चत्वारि शेषे दशके’ इति-प्रत्येकमिति शेषः ।

(१) अत्र ‘छरिचैति’ चत्वे कृते ‘चयो द्वितीया’ इति तु न चत्वेत्याधिद-
त्वात् । (२) शुक्लपक्षे तु जशत्वदृष्ट्या कुक्कोऽधिदत्त्वात् जशत्वाप्राप्त्या द्वितीयादेशो
रुपप्रयशुद्धिर्भवत्येव । एवं च प्रकारान्तरेणाऽपि रूपाधिक्यं प्रदर्शयन्ति परम-
भूते-‘उद्यमेवा द्विवचनानुनासिकधिक्यत्पनात्, रूपाण्यद्वाशिभूतानांति, सप्तविंश-
त्यधिका पदशतीत्यर्थः । तथा हि, सौ नवानामन्त्यस्य ‘अनचि चैति द्वित्वे षष्ठा-
दस । औत्ति चतुर्णां मध्ये पूजार्थदानां प्रयागां चद्वित्वे सप्त । जशि चद्वित्वे-
ऽणोऽप्रगृह्यस्त्वेत्यनुनासिके च द्वादश । सङ्कलनया सप्तत्रिंशत् । एवं द्वितीयायामपि
विभक्तौ सप्तत्रिंशत् । तथा च सङ्कलनया चतुःसप्ततिः । टाविभक्तौ चतुर्णां मध्ये

गोअङ्क्षु, गोऽङ्क्षु, गवाङ्क्षु, गोअङ्क्षु गोअङ्क्षु (९)

(सर्वाणि मिलित्वा १०९ रूपाणि भवन्ति)

[३५५] चान्त-नपुंसकलिङ्गः 'तिर्यञ्च्' शब्दः

प्र. द्वि. तिर्यक्-न् तिरश्ची तिर्यञ्चि क. कर्म.

शेषं पुंवत् । पूजायान्तु-

तिर्यङ्

तिर्यञ्ची

तिर्यञ्चि (इत्यादि)

[३५६] तान्त-नपुंसकलिङ्गो 'यकृत्' शब्दः (दाहिनी कोखके मांसपिंड)

प्र० यकृत्-द् यकृती यकृन्ति कर्ता

द्वि० यकृत्-द् यकृती यकृन्ति कर्म

तृ० { यकृता यकृभ्याम् यकृभिः करण
यकृता यकृञ्चाम् यकृञ्चिः

इत्यादि स्वयमुद्यम् ।

[३५७] तान्त-नपुंसकलिङ्गः 'शकृत्' शब्दः (विष्टा)

प्र० शकृत्-द् शकृती शकृन्ति कर्ता

द्वि० शकृत्-द् शकृती शकृन्ति कर्म

पूजार्थानां त्रयाणां जद्वित्वे सप्त । तेषां च सप्तानामनुनासिकविकल्पे चतुर्दश । सङ्कलनयाऽष्टाशीतिः । भ्यामि षट्सु रूपेषु भकारात्पूर्वस्य द्वित्वे कृते द्वादश । तेषामपि 'यणो मयः' इति यद्वित्वे चतुर्विंशतिः । तेषामपि मकारस्य द्वित्वेऽष्टचत्वारिंशत् । सङ्कलनया षट्त्रिंशदधिकशतम् । भिसि चतुर्विंशतिः । भकारात्पूर्वस्य विसर्गस्य द्वित्वे सङ्कलनया षष्ट्युत्तरशतम् । ठे-डक्षि-डस्-ओस्-आम्-डि-ओष् एतासु अकार-विसर्ग-मकाराणां द्वित्वे, अणोऽप्रगृह्यस्येत्यनुनासिके च यथा सम्भव-मष्टादीनि रूपाणि । भ्याम् भ्यसोः, 'अनञि च' 'यणो मयो द्वे वाच्ये' इति द्वित्वे, अष्टचत्वारिंशत् । सुपि पूर्वोक्तयथासम्भवकार्ये षडधिकनवती रूपाणीति स्वयमूह-नीयमिति ॥ (१) शीभावे भत्वात् 'अचः' इत्यरलोपे इत्तुत्वम् । 'अलोपे' इत्यु-क्तेर्न तिर्यादेवाः । (२) सर्वनामस्थानत्वेन अमत्वादरलोपोभावेन 'तिरि' आदेशः सुगमः इति विशेषः । (३) 'पदन्नि'ति वा यकृत् । (४) 'पदन्निति' वा शकृत् ।

च० { शकना शकभ्याम् शकभिः करण
 { शकृता शकृद्याम् शकृद्भिः इत्यादि

[३५८] शतृप्रत्ययान्तो 'ददत्' शब्दः ।

प्र. द्वि. ददत्-द् ददती ददन्ति-ददति क०कर्म
 शेषं पुंषत् ।

[३५९] शत्रन्तो नपुंसकलिङ्गः 'तुदत्' शब्दः (दुःख पाता हुआ)

प्र. द्वि. तुदत्-द् तुदन्ती-तुदती तुदन्ति क०कर्म.
 शेषं 'ददत्' शब्दवत् ।

एवं भाँत् भान्ती-भाती भान्ति इत्यादि

[३६०] शत्रन्तो नपुंसकलिङ्गः 'पचत्' शब्दः (पकाने वाला कुल)

प्र. द्वि. पचत्-द् पचन्ती पचन्ति क०कर्म.
 शेषं 'ददत्' शब्दवत्

[३६१] शत्रन्तो नपुंसकलिङ्गो 'दीव्यत्' शब्दः (खेलने वाला कुल)

प्र. द्वि. दीव्यत्-द् दीव्यन्ती दीव्यन्ति क०कर्म.

[३६२] पान्त-नपुंसकलिङ्गः 'स्वप्' शब्दः

(सुन्दर (स्वच्छ) जल वाला सरोवर)

प्र. द्वि. स्वप्-प् स्वपी स्वप्ति-स्वप्ति क०कर्म.

(१) 'वा नपुंसकल्य । (२) 'तुद' व्ययने' समात् शतृप्रत्यये 'तुदादिभ्यः शः' इति शः । पररूपे तुदत्' शब्दः । (३) 'वाच्छीनयोर्नुम्' । (४) 'भा दीर्घो लट्' शतर्षादित्यात् शपो लुकि चवर्षदोषे 'भात्' शब्दः । (५) पञ्चातोर्लट्' शतरि शप् 'लतो गुणे इति पररूपे 'पचत्' शब्दः । (६) शपश्यनोर्नित्यम्' । (७) दीव्यातोर्लट्' शतरि श्यनि, 'एलि वेति दोषे 'दीव्यत्' शब्दः । (८) प= सोमनाः आपः गरिमन् सरणि इति बहुव्रीहिः । (९) ऋदशानोः शौ 'स्वप्' इति शिष्ये नित्यात्परादपि जुगः प्राक् प्रतिपद्योप्यत्वात् 'अण्वृथिति दोषे' शकृत्प्रत्ययान्तनि अशुभारे परवर्षः "प्रति पदोपपदं निरवशायावे शतरेव भावप्रयोग्यम्"

| | | | | |
|-----|-------|-----------|-----------|---------|
| तृ० | स्वपा | स्वञ्चाम् | स्वञ्चिः | करण |
| च० | स्वपे | स्वञ्चाम् | स्वञ्च्यः | सम्प्र० |
| पं० | स्वपः | स्वञ्चाम् | स्वञ्च्यः | अपा० |
| ष० | स्वपः | स्वपोः | स्वपाम् | सम्ब० |
| स० | स्वपि | स्वपोः | स्वप्सु | अधि० |

[३६३] षान्त-नपुंसकलिङ्गो 'धनुष्' शब्दः (धनुष)

| | | | |
|------------------|-----------|-------------|---------|
| प्र. द्वि. धेनुः | धनुषी | धनुषि | क.क.स. |
| तृ० धनुषा | धनुभ्याम् | धनुभिः | करण |
| च० धनुषे | धनुभ्याम् | धनुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० धनुषः | धनुभ्याम् | धनुभ्यः | अपा० |
| ष० धनुषः | धनुषोः | धनुषाम् | सम्ब० |
| स० धनुषि | धनुषोः | धनुषु-धनुषु | |

एवं चक्षुष् (नेत्र), डंषिष् (हवनसामग्री) सर्पिष् (घृत) इत्यादि ।

[३६४] षान्त-नपुंसकलिङ्गः 'पिपठिष्' शब्दः ।

| | | | |
|-------------------|---------------|---------|--------|
| प्र. द्वि. पिपठीः | पिपठिषी | पिपठिषि | क.क.स. |
| | शेषं पुंवत् । | | |

भाष्यसम्मतपक्षे तु दीर्घस्य 'आपः' इत्यत्र सावकाशत्वेनापवादत्वाभावात् पूर्वं नुमि
अकारस्य उपधात्वाभावान्न दीर्घः तन्मते 'स्वम्पि' इति द्वितीयं रूपम् । परेतु
दीर्घस्य निरवकाशत्वरूपप्रतिपदोक्तत्वाभावेऽपि प्रतिपदविधित्वेन शीघ्रोपस्थिति-
कतया प्रथमं प्रवृत्तौ 'स्वाम्पि' इत्येव युक्तमित्याहुः । (१) 'अपो भि' ।
(२) 'धन धान्ये' अस्माद्धातोः 'अर्ति-पृ-वपि-यजि-तनि-धनि-तपिभ्यो नित्'
इत्युणादिसूत्रेण उस्प्रत्यये प्रत्ययावयवत्वात् षत्वे 'धनुष्' शब्दः । ततः सोर्लुकि-
षत्वस्याऽसिद्धत्वात् रुत्वे विसर्गः । वौरिति दीर्घस्तु न रेफान्तस्य अधातुत्वात् ।
(३) 'नश्चे' त्यनुस्वारो विशेषः । (४) 'चक्षेदिशच्च' इत्युणादिसूत्रेण उस्प्रत्ययः ।
(५) 'अर्चिश्चिहुसपि' इत्याद्युणादिसूत्रेण हुधातोरिस् प्रत्ययः । (६) 'पिपठिष् +
इ' इति दशायां 'नपुंसकस्य झलचः' इति नुम् कथं न स्यादिति चेत् न, अरळो-

[३६५] सान्त-नपुंसकलिङ्गः 'पयस्' शब्दः (दुध, जल)

अ. द्वि. पयः पयसी पयांसि क.क.स.

शेषं पुंलिङ्ग 'विधस' शब्दवत् ।

[३६६] सान्त-नपुंसकलिङ्गः 'सुपुम्स्' शब्दः (भलेमानुष कुल)

अ. द्वि. सुपुम सुपुम्सी सुपुमांसि क.क.स.

शेषं पुंलिङ्ग 'पुम्स्' शब्दवत् ।

[३६७] सान्त-नपुंसकलिङ्गः सर्वनाम 'अदस्' शब्दः ।

अ. द्वि. अदः अमूँ अमूनि क.कर्म

शेषं पुंवत्

इति हलन्तनपुंसकलिङ्गशब्दाः ॥ ६ ॥

पस्य स्थानि त्वचात् , (अल्लोपविधानम् १७२ पृष्ठे द्रष्टव्यम्) अजन्तलक्षणस्तु न प्राकृत्यः स्वविधौ स्थानिवत्त्वाभावात् । (१) 'पयः क्षीरं पयोऽम्बु चे'त्यमरः । (२) शेषः सर्वनामस्थानत्वात् 'पुंसोऽसुचि त्वसुचि 'पुम्स् × इ' इति स्थिते नुमि'सान्ते'ति दीर्घे ' नश्चे' त्यनुस्वारः । (३) 'पूर्वत्रासिद्धमि'ति त्यदायत्वादिबभक्ति-कार्योत्तरमुत्त्वमत्वे ।

इति दरभङ्गामण्डलान्तर्गत "तरोनी" ग्रामवासि-श्रीमदनन्तलाल (दा)

शर्मरमजेन श्रीरामचन्द्र झा व्याकरणाचार्येण विरचितायां

सोत्तरायां कौमुदीरूपलतायां हलन्तनपुंसक-

लिङ्गप्रकरणं समाप्तम् ।

तरुपनीनगराधनिवासिना, सुकुलसारमसन्ततिभानुना ।

सुहृदवन्तधिसक्षगम्बुना, धरणिजापदशोरियमर्प्यते ॥ ६ ॥

एति शुभम्भूषात्

| | | | | |
|-----|-------|-----------|----------|---------|
| तृ० | स्वपा | स्वञ्चाम् | स्वञ्चिः | करण |
| च० | स्वपे | स्वञ्चाम् | स्वञ्चः | सम्प्र० |
| पं० | स्वपः | स्वञ्चाम् | स्वञ्चः | अपा० |
| ष० | स्वपः | स्वपोः | स्वपाम् | सम्ब० |
| स० | स्वपि | स्वपोः | स्वप्सु | अधि० |

[३६३] षान्त-नपुंसकलिङ्गो 'धनुष्' शब्दः (धनुष)

| | | | |
|-----------------|-----------|-------------|---------|
| प्र. द्वि. धनुः | धनुषी | धनुषि | क.क.स. |
| तृ० धनुषा | धनुभ्याम् | धनुभिः | करण |
| च० धनुषे | धनुभ्याम् | धनुभ्यः | सम्प्र० |
| पं० धनुषः | धनुभ्याम् | धनुभ्यः | अपा० |
| ष० धनुषः | धनुषोः | धनुषाम् | सम्ब० |
| स० धनुषि | धनुषोः | धनुषु-धनुषु | |

एवं चक्षुष् (नेत्र), द्वेषिष् (हवनसामग्री) सर्पिष् (घृत) इत्यादि ।

[३६४] षान्त-नपुंसकलिङ्गः 'पिपठिष्' शब्दः ।

| | | | |
|-------------------|---------------|---------|--------|
| प्र. द्वि. पिपठीः | पिपठिषी | पिपठिषि | क.क.स. |
| | शेषं पुंवत् । | | |

भाष्यसम्मतपक्षे तु दीर्घस्य 'आपः' इत्यत्र सावकाशत्वेनापवादत्वाभावात् पूर्वं नुमि अकारस्य उपधात्वाभावान्न दीर्घः तन्मते 'स्वम्पि' इति द्वितीयं रूपम् । परेतु दीर्घस्य निरवकाशत्वरूपप्रतिपदोक्तत्वाभावेऽपि प्रतिपदविधित्वेन शीघ्रोपस्थिति-कतया प्रथमं प्रवृत्तौ 'स्वाम्पि' इत्येव युक्तमित्याहुः । (१) 'अपो मि' । (२) 'धन धान्ये' अस्माद्धातोः 'अर्ति-पृ-वपि-यजि-तनि-धनि-तपिभ्यो नित्' इत्युणादिसूत्रेण उप्प्रत्यये प्रत्ययावयवत्वात् षत्वे 'धनुष्' शब्दः । ततः सोर्लुकि-षत्वस्याऽसिद्धत्वात् रुत्वे विसर्गः । वीरिति दीर्घस्तु न रेफान्तस्य अधातुत्वात् । (३) 'नश्चे' त्यनुस्वारो विशेषः । (४) 'चक्षेदिशच्च' इत्युणादिसूत्रेण उस्प्रत्ययः । (५) 'अर्चिश्चिहुसपि' इत्याद्युणादिसूत्रेण हुधातोरिस् प्रत्ययः । (६) 'पिपठिष् + इ' इति दशायां 'नपुंसकस्य झलचः' इति नुम् कथं न स्यादिति चेत् न, अस्मिन्

[३६५] सान्त-नपुंसकलिङ्गः 'पयस्' शब्दः (दुध, जल)

अ. द्वि. पयः पयसी पयांसि क.क.स.
शेषं पुंलिङ्ग 'वेधस्' शब्दवत् ।

[३६६] सान्त-नपुंसकलिङ्गः 'सुपुम्सू' शब्दः (भलेमानुष कुल)

अ. द्वि. सुपुम सुपुम्सी सुपुमांसि क.क.स.
शेषं पुंलिङ्ग 'पुम्सू' शब्दवत् ।

[३६७] सान्त-नपुंसकलिङ्गः सर्वनाम 'अदस्' शब्दः ।

अ. द्वि. अदः अमूँ अमूनि क.कर्म
शेषं पुंवत्

इति हलन्तनपुंसकलिङ्गशब्दाः ॥ ६ ॥

पस्य स्थानि त्ववात् , (अरलोपविधानम् १७२ पृष्ठे द्रष्टव्यम्) अजन्तलक्षणस्तु न शङ्क्यः स्वविधौ स्थानिवत्वाभावात् । (१) 'पयः क्षीरं पयोऽम्बु चे'त्यमरः । (२) शोः सर्वनामस्थानत्वात् 'पुंसोऽसुडि त्यसुडि 'पुम्सू × इ' इति स्थिते नुमि'सान्ते'ति दीर्घे ' नश्चे' त्यनुस्वारः । (३) 'पूर्वत्रासिद्धमिति त्यदाद्यत्वादिबभक्ति-कार्योत्तरमुत्वमत्वे ।

इति दरभङ्गामण्डलान्तर्गत "तरौनी" ग्रामवासि-श्रीमदनन्तलाल (ज्ञा)
शर्मात्मजेन श्रीरामचन्द्र ज्ञा व्याकरणाचार्येण विरचितायां
सोत्तरायां कौमुदीरूपलतायां हलन्तनपुंसक-
लिङ्गप्रकरणं समाप्तम् ।

तद्वनीनगराधिनिवासिना, सुकुलसारससन्ततिभानुना ।
सुहृदन्तविचक्षणसूनुना, धरणिजापदयोरियमर्प्यते ॥ १ ॥

इति शुभम्भूयात्

अशुद्ध-शुद्धिपत्रम् ।

| अशुद्धम् | शुद्धम् | पृष्ठम् | पंक्ति |
|--------------------------------|----------------------------|---------|--------|
| टिप्पण्यां-विभक्तीन् | विभक्तीः | ६, ४१ | ४, |
| मूले-मासु | मांसु-माःसु | ९ | १ |
| ” यषणि | यूषणि | ” | २ |
| ” (दो दिन) | (दो दिनमें होनेवाला) | १० | |
| टि० सखीभ्यष्ट्च् | सखिभ्यष्ट्च् | ” | |
| मू० सुसख्यौ | सुसखौ | १३ | ” |
| ” परमसखा यस्येति | परमः सखा यस्येति | ” | ४ |
| ” प्रियत्रियः | प्रियत्रयः | १४ | १४ |
| टि० हलङ्घादिति | हलङ्घाविति | १७, ३२ | ३, १७ |
| मू० उन्न्यौ, उन्न्यः (इत्यादि) | उन्न्या, उन्न्यः (इत्यादि) | २० | ४-११ |
| टि० दानस्य | दानत्वस्य | २२ | ११ |
| मू० सुधये | सुधिये | २३ | ६ |
| ” प्रस्तमी | प्रस्तीमी | २४ | १९ |
| टि० प्रस्तोऽन्यतरस्याम् | प्रस्त्योऽन्यतरस्याम् | ” | ८ |
| ” तृजादिष्वनन्तरभावात् | तृजादिष्वनन्तरभावात् | ३१ | १० |
| ” धातृशब्दज्ञेयम् | धातृशब्दवज्ज्ञेयम् | ” | ११ |
| मू० कीरे | किरे | ३४ | ३ |
| टि० वर्जित्वा | वर्जयित्वा | ” | ९ |
| मू० सुद्यावः, सुद्यावा | सुद्याः, सुद्यवा | ३८, ३९ | १९, २ |
| ” स्मृतावः, स्मृतेषु | स्मृताः, स्मृतोषु | ३९ | ११, १७ |
| ” जनोपपदात् | जनानुपपदात् | ४० | २ |
| मू० हे सर्वा | हे सर्वे | ४२ | ३ |
| ” त्रिणि | त्रीणि | ४९ | २१ |
| टि० सख्यश्चिद्वीति | सख्यश्चिद्वीति | ५३ | २ |
| ” कदाचनः | कदाचन | ५४ | ५ |
| मू० श्रीयाम् | श्रियाम् | ५७ | १४ |
| टि० अन्वयेति, अनुवृत्तिरुचि | अन्वेति, अनुवृत्तेरुचि | ” | ६ |
| ” पदान्तरसमभि | पदान्तरसमभि | ५८ | ५ |
| ” धश्चादेशे | धादेशे | ६० | १ |



